Scanned by CamScanner

जीवन का नवनिर्माण

कायाकल्प गुटिका

काया का तात्पर्य केवल स्थूल देह ही नहीं, काया तो गठित होती है जीवन के सभी पक्षों को लेकर . . .

साबर मंत्रों से सिद्ध नाथ योगियों की रहस्यमय गुटिका

- किसी असाध्य रोग ने आ घेरा हो और सभी उपचार व्यर्थ हो रहे हों तो सिर पर घुमा कर लाल कपड़े में गूंथ कर दक्षिण दिशा की ओर फेंक दें यह गुटिका।
- ऋण की स्थिति में आकण्ठ डूब गए हों तो एक गुटिका लेकर उसे मंगलवार के दिन चुपचाप दक्षिण दिशा या जंगल में धन की राशि बोलकर फेंक आएं।
- पुत्री की आयु बढ़ गई हो और विवाह में कठिनाई आ रही हो तो इस गुटिका को उसके गले में हार की भांति पहना दें।
- तिजोरी या गल्ले में इस गुटिका को पीले वस्त्र में बांधकर रखना लक्ष्मी प्राप्ति का अचूक टोटका है।
- मुकदमे में सफलता के लिए एक गुटिका विरोधी पक्षकार के किसी वस्त्र के टुकड़े के साथ बांध कर चुपचाप गड्ढा खोदकर एकांत में दबा दें।
- भवन निर्माण में कोई बाधा न आए और घर आपदाओं से बचा रहे, इसके लिए नींव में अवश्य ही स्थापित करनी चाहिए यही कायाकल्प गुटिका।
- तंत्र का कैसा भी भीषण प्रयोग हो, गले में काले वस्त्र में लपेटकर बांध लें कायाकल्प गुटिका।
- बच्चों को किसी की नजर न लगे और वे बीमारी व दुर्घटनाओं से बचे रहें इसके लिए उन्हें धारण कराएं यही अचरज भरी गुटिका।
- यदि कोई शत्रु विशेष पीड़ा दे रहा हो तो उसके नाम का संकल्प लेकर यह गुटिका किसी सूखे कुएं में फेंक दें।
- राज्यपक्ष अनुकूल हो जाता है यदि यही गुटिका सम्बन्धित अधिकारी के सामने किसी प्रकार से लाकेट या अंगूठी के माध्यम से प्रदर्शित कर दें।
- एक कायाकल्प गुटिका लेकर पति व पत्नी के नाम लिख, राई के कुछ दानों के साथ किसी को दान दे देने से प्राप्त होता है पूर्ण गृहस्थ सुख।
- वशीकरण, मोहन की ही तो सिद्ध गुटिका है कायाकल्प गुटिका। कैसा भी पत्थर दिल व्यक्ति हो यदि इस गुटिका पर उसका चित्र रखकर नित्य एक बार देख भर लिया जाय, तो कुछ ही दिन में बन जाता है वह पूर्ण रूप से आज्ञाकारी।
- कायाकल्प गुटिका ही फिर साबर ढंग से किए जाने वाले किसी भी भाग्योदय प्रयोग में बन जाती है सौभाग्य गुटिका।

जीवन की प्रत्येक मनोकामना की पूर्ति में सहायक. . .

आनो भद्रा : क्रतवो यन्तु विश्वतः
मानव जीवन की सर्वतोन्मुखी उन्नति प्रगति और
भारतीय गूढ़ विद्याओं से समन्वित मासिक

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान

प्रार्थना

अवतीर्णऽयं मरो भूमौ, यथा धन्वन्तरि स्वयम्,
तथा लुप्तौषधज्ञानं, चकास दिग्दिगन्तरे,
सूर्य विज्ञान मण्ये, लुप्त ज्ञान प्रकाशकं,
परं ज्योतिः स्वरूपाय, नमो नारायणाय ते।।

लुप्त औषधि ज्ञान को पुनः समस्त दिशाओं में विस्तीर्ण करने के लिए धनवन्तरी स्वयं इस युग में मरु भूमि में अवतीर्ण हुए हैं। लुप्त ज्ञान के प्रकाशक, सूर्य विज्ञान के ज्ञाता परम ज्योति स्वरुप श्री नारायण दत्त जी को मैं प्रणाम करता हूं।

नियम

पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाओं का अधिकार पत्रिका का है। इस मंत्र -तंत्र-यंत्र विज्ञान पत्रिका में प्रकाशित लेखों से संपादक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। तर्क-कुतर्क करने वाले पाठक पत्रिका में प्रकाशित पूरी सामग्री को गल्प समझें। किसी स्थान, नाम या घटना का किसी से कोई संबंध नहीं है। यदि कोई घटना नाम या तथ्य मिल जाय तो उसे संयोग समझें। पत्रिका के लेखक घुमक्कड़ साधु संत होते हैं अतः उनके पते या उनके बारे में कुछ भी अन्य जानकारी देना संभव नहीं होगा। पत्रिका में प्रकाशित किसी भी लेख या सामग्री के बारे में वाद-विवाद या तर्क मान्य नहीं होगा और न ही इसके लिए लेखक, प्रकाशक ,मुद्रक या संपादक जिम्मेवार होंगे। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद में जोधपुर न्यायालय ही मान्य होगा। पत्रिका में प्रकाशित किसी भी सामग्री को साधक या पाठक कहीं से भी प्राप्त कर सकते हैं। पत्रिका कार्यालय से मंगवाने पर हम अपनी तरफ से प्रामाणिक और सही सामग्री अथवा यंत्र भेजते हैं, पर फिर भी उसके बारे में, असली या नकली के बारे में, अथवा प्रभाव या न प्रभाव होने के बारे में हमारी जिम्मेवारी नहीं होगी। पाठक अपने विश्वास पर ही ऐसी सामग्री पत्रिका कार्यालय से मंगवायें, सामग्री के मूल्य पर तर्क या वाद - विवाद मान्य नहीं होगा। पत्रिका में प्रकाशित किसी भी साधना में सफलता-असफलता, हानि-लाभ आदि की जिम्मेवारी साधक की स्वयं होगी तथा साधक कोई ऐसी उपासना जप या मंत्र प्रयोग न करे जो नैतिक, सामाजिक एवं कानूनी नियमों के विपरीत हो। पत्रिका में प्रकाशित एवं विज्ञापित आयुर्वेदिक औषधियों का प्रयोग पाठक अपनी जिम्मेवारी पर ही करें। पत्रिका में प्रकाशित लेखों के लेखक योगी, सन्यासी या लेखकों के मात्र विचार होते हैं, उन पर भाषा का आवरण पत्रिका के कर्मचारियों की तरफ से होता है, पत्रिका में प्रकाशित सामग्री आप अपनी इच्छानुसार कहीं से भी मंगा सकते हैं। पाठकों की मांग पर इस अंक में पत्रिका के पिछले लेखों का भी ज्यों का त्यों समावेश किया है जिससे कि नवीन पाठक लाभ उठा सकें। पत्रिका में प्रकाशित किसी भी लेख या सामग्री को पुस्तकाकार या अन्य किसी भी रूप में डॉ० नारायण दत्त श्रीमाली के नाम से प्रकाशित किया जा सकता है। साधक या लेखक अपने प्रामाणिक अनुभवों के आधार पर जो मंत्र तंत्र या यंत्र (भले ही वे शास्त्रीय व्याख्या के इतर हो) बताते हैं, वे ही दे देते हैं, अतः इस संबंध में आलोचना करना व्यर्थ है। आवरण पृष्ठ पर या अन्दर जो भी फोटो प्रकाशित होते हैं, इस संबंध में सारी जिम्मेवारी फोटो भेजने वाले फोटोग्राफर अथवा आर्टिस्ट की होगी। दीक्षा प्राप्त करने का तात्पर्य यह नहीं है कि वह संबंधित लाभ तुरंत प्राप्त कर सके। यह तो धीमी और सतत प्रक्रिया है, अतः पूर्ण श्रद्धा और विश्वास के साथ ही दीक्षा प्राप्त करें। इस संबंध में किसी प्रकार की कोई आपत्ति या आलोचना स्वीकार्य नहीं होगी । गुरुदेव या पत्रिका परिवार इस संबंध में किसी प्रकार की जिम्मेवारी वहन नहीं करेंगे।

विषय - सूची

चिकित्सा

आयुर्वेद

साधना

रिपोर्ताज

दीक्षा

कथ्य

सम्पादकीय

जब हमने पिछले माह घोषणा की थी कि हमारा आगामी अंक **चिकित्सा विशेषांक** के रूप में आपके समक्ष प्रस्तुत होगा तब अनेक पाठकों व शुभचिंतकों ने आश्चर्य पूर्वक हमसे पत्रों द्वारा ज्ञात करना चाहा कि हम ऐसा महत्वपूर्ण अंक नववर्षांक के रूप में क्यों नहीं प्रस्तुत कर रहे हैं। ये सभी पाठक और शिष्य ऐसे व्यक्तित्व हैं जो पूज्यपाद गुरुदेव से वर्षों से जुड़े हैं और उनके अभी तक के अप्रकाशित स्वरूप प्रखर आयुर्वेदज्ञ से भली-भांति परिचित रहे हैं और इसी से उन्हें विश्वास था कि पूज्यपाद गुरुदेव द्वारा प्रस्तुत इस क्षेत्र में ज्ञान सर्वथा नवीन और ठोस होगा। मैं ऐसे सभी सजग पाठकों एवं शुभचिंतकों की भावनाओं व स्नेह के प्रति आभार ज्ञापित करते हुए यही कहना चाहता हूं कि वास्तव में अन्त या आरम्भ जैसा जीवन में कुछ होता ही नहीं। एक अन्त किसी सुखद प्रारम्भ की घटना भी तो हो सकती है और यह अंक इसी प्रकार की घटना है। **जो आपके आगामी सम्पूर्ण वर्ष को चैतन्य व सुखद करने का उपाय है, साथ ही भारतीय कैलेण्डर के अनुसार यह पौष मास है जो आयुर्वेद के ग्रंथों में पुष्टिदायक माह के रूप में वर्णित किया गया है।**

प्रस्तुत अंक में केवल चिकित्सा की कुछ पद्धतियों का वर्णन अथवा कुछ रोगों के उपचार का उपाय प्रस्तुत करने का ही प्रयास नहीं है, इससे भी अधिक गहनता में जाकर उस बिन्दु तक पहुंचने की क्रिया है जहां पाठकों के समक्ष स्पष्ट हो सके कि रोगों का मूल कारण क्या होता है, उनका सम्पूर्णता से उपचार किस भांति सम्भव है, क्योंकि आपकी इस पत्रिका ने सदैव से यह स्पष्ट नीति रखी है कि जिस विषय विशेष को लेकर कोई विशेषांक प्रस्तुत किया जाय उसके विषय में सर्वांगीण ज्ञान प्रदान किया जाए तथा पाठक के मन मस्तिष्क में सम्बन्धित विषय की स्पष्ट और सम्पूर्ण धारणा बन सके।

विभिन्न चिकित्सा पद्धतियां प्रस्तुत करते हुए भी इसी बात पर आप सभी का ध्यान आकृष्ट करने का प्रयास है कि आप सब भी अनुभव कर सकें चिकित्सा पद्धतियों में वर्णित विभिन्न धारणाएं किस प्रकार से वास्तव में भारतीय अवधारणा "प्राण" की ही भांति - भांति से प्रस्तुति है -- कहीं जैव विद्युत के रूप में, कहीं चुम्बकीय विद्युत के रूप में, कहीं कोशिकाओं के संयोजन के रूप में और कहीं प्रतिरोधात्मक शक्ति के विकास के रूप में , जबकि **'प्राण'** के ज्ञान उसके शोधन व उपचार से न केवल सम्पूर्ण स्वास्थ्य वरन सौन्दर्य, ताजगी, मानसिक प्रसन्नता व जीवन के प्रति ऐसा सकारात्मक दृष्टिकोण प्राप्त किया जा सकता है, जो कि किसी अन्य चिकित्सा पद्धति के माध्यम से प्रायः सम्भव ही नहीं।

रोचक कथाएं, रहस्यमय घटनाओं का विवरण, सौन्दर्य साधना, नव-वर्ष साधना, मकर संक्राति साधना, दुर्लभ दीक्षाओं का वर्णन, असाध्य रोगों का प्रामाणिक उपचार, चिकित्सा के क्षेत्र में शक्तिपात का महत्व, शक्तिपात के द्वारा नपुंसकता जैसी स्थितियों का निराकरण. . . ऐसे ही विविध विषयों को एक ही अंक में, एक लघु ग्रंथ के रूप में प्रस्तुत करता यह विशेषांक. . .

आगामी वर्ष की शुभकामनाओं सहित --

आपका

नन्दकिशोर श्रीमाली

नतमस्तक है

पूज्यपाद गुरुदेव

डॉ० नारायणदत्त श्रीमाली जी

"... जाओ! तुम सभी कोई ऐसा पौधा ढूंढकर लाओ जो व्यर्थ उगा हो इस वन प्रांतर में ... "

-- सम्पूर्ण ज्ञान देने के बाद उच्चरित हुई गुरु की वाणी ...

कुछ दिनों बाद ...

"... क्षमाप्रार्थी हूं गुरुदेव! कोई भी पौधा व्यर्थ का नहीं मिल सका, मुझे क्षमा कीजिएगा।"

--- विनम्र और सिर झुकाए खड़े शिष्य का निवेदन!

... शेष सभी के हाथ और झोलियां पौधों से भरी हुई।

"यशस्वी भव! मेरा आशीर्वाद है कि तू धनवन्तरी के समान प्रख्यात हो सकेगा।" — प्रसन्नता और संतोष से झिलमिला गई गुरु की आंखें ..

और फिर आगे चलकर तो ... आयुर्वेद के जीवित ग्रंथ के रूप में पूज्यपाद गुरुदेव परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानंद जी सम्पूर्ण हिमालय में प्रख्यात हो गए।

जो आज हम सभी के मध्य उपस्थित हैं -- डॉ. नारायण दत्त श्रीमाली जी के रूप में. . .

सच ही तो है प्रकृति का रचा कोई भी पौधा , कोई भी जड़ी व्यर्थ हो भी कैसे सकती है? जब तक इस बात का ज्ञान न हो, जब तक समझने की चेतना न हो, तब तक हम किसी भी पदार्थ को व्यर्थ कह भी कैसे सकते हैं, और आज से पैंतीस वर्ष पूर्व अपने प्रखर सन्यस्त जीवन में इसी बात को पूर्णता से स्पष्ट किया था पूज्यपाद गुरुदेव **डॉ. नारायण दत्त श्रीमाली** ने अपने सन्यस्त स्वरूप परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानंद जी के रूप में ...

यदि किसी औषधि की गुणवत्ता जाननी है या किसी पौधे का गुण - दोष जानना है तो एक उपाय यह भी हो सकता है -- क्यों न हम उसी पौधे से ही उसके गुण पूछ लें! लेकिन क्या यह संभव है? यह कैसे हो सकता है कि एक निर्जीव पौधा अपने ज्ञान को स्वयं प्रकट करे? किंतु वह निर्जीव कहां? वह तो इस प्रकृति की सर्वाधिक चैतन्य रचना है, जो बढ़ती है, जो फलती है और फूलती है, भर देती है इस मानव जीवन को अपने गुणों से अपने रस से और गंध के उल्लास से। प्रकृति से ज्यादा मुखरित, प्रकृति से ज्यादा सजीव, प्रकृति से ज्यादा उल्लसित तो कुछ होता ही नहीं और पेड़- पौधों के स्वर होते ही हैं,पेड़ पौधों की भी भाषा होती ही है। क्या यह संभव है कि जो प्रकृति इतनी सजीव है, मानव का पोषण करने मे समर्थ है, उसके पास उसका स्वर भी न हो, और यह स्वर सुना जा सकता है योग की कुछ विशिष्ट क्रियाओं को संभव कर।ऐसा ही संभव कर दिखाया है **पूज्यपाद गुरुदेव डॉ. नारायण दत्त श्रीमाली जी** ने योग की उच्चतम अवस्था में पहुंच कर।

आश्चर्य होता है जब हम पूज्यपाद गुरुदेव का परिचय इस रूप में प्राप्त करते हैं। उनकी ख्याति एक प्रखर मंत्रज्ञ, अद्वितीय तंत्र के ज्ञाता और विश्व प्रसिद्ध ज्योतिषी के रूप में विशेषतः रही है। **जीवन के अलग - अलग पक्षों को लेकर समाज के सदस्य उनसे मिले और जिसके समक्ष उनका जो रूप आया, उसने उन्हें केवल उसी रूप में सिद्ध माना। जो उनसे ज्योतिष की समस्या लेकर मिला वह फिर यह कल्पना भी न कर सका कि वे मंत्रों के भी उतने ही सिद्ध ज्ञाता हैं।** जो उनसे मंत्रों पर ज्ञान अर्जित कर गया उसने जैसे फिर अन्य रूप से उनको समझना ही नहीं चाहा।

मानव समझ भी कैसे सकता है? जब किसी एक ज्ञान को अर्जित कर देने के लिए ही जीवन खपा देना पड़ता है, वहां फिर कैसे कल्पना की जाए कि एक ही व्यक्ति में ज्ञान के अनेक पक्ष पूर्णता से समाहित हैं।जीवन की अत्याधिक व्यस्तता और निरन्तर समाजोपयोगी कार्यों में व्यस्त रहने के कारण, निरन्तर ज्ञान का विस्तार करते रहने के कारण, निरन्तर शिष्यों को साधनात्मक ज्ञान देते रहने से, उनकी व्यक्तिगत समस्याएं और बाधा सुलझाने में

पूज्यपाद गुरुदेव **डॉ. नारायण दत्त श्रीमाली** जी का इतना अधिक समय व्यतीत हुआ कि उनके आयुर्वेद संबंधी ज्ञान का प्रस्तुतीकरण समाज के सामने हो ही नहीं सका। जिस प्रकार की समस्याएं और बाधाएं लेकर उनके शिष्य और साधक उपस्थित होते रहे, उसमें आयुर्वेद के ज्ञान को प्राप्त करने के न तो इच्छुक शिष्य मिले और न फिर पूज्यपाद गुरुदेव ने ही उचित शिष्य के अभाव में अपने ज्ञान को प्रकट करना अनुकूल समझा, क्योंकि आधे - अधूरे ज्ञान से तो शिष्य किसी का अहित ही कर बैठेगा।

पूज्यपाद गुरुदेव का वर्तमान और लौकिक स्वरूप तो उनका अत्यल्प परिचय है। उनका वास्तविक परिचय तो मिलता है उनके सन्यस्त जीवन में सूत्र ढूंढकर अथवा उन सन्यासी शिष्यों से मिलकर, जो आज भी हिमालय की घाटियों में निरन्तर साधनाओं में गतिशील हैं । पूज्यपाद गुरुदेव अपने सन्यस्त जीवन के विषय में बहुत कम ही वर्णन करते हैं, वे तो अत्यंत संकोची और प्रचार से यदि कहा जाय, भयभीत रहने वाले व्यक्तित्व हैं तो अनुचित नहीं होगा , क्योंकि उनका यह मानना है कि प्रचार से फिर ठोस कार्य, रचनात्मक गतिविधियां सम्पन्न नहीं की जा सकतीं। लेकिन यह हमारा दायित्व बन जाता है, उनके सभी शिष्यों का कर्त्तव्य हो जाता है, कि उनके ज्ञान को प्राप्त किया जाए, उनका सदुपयोग किया जा सके ।

मुझे अपनी विगत कुमायूं घाटी की यात्रा में उनके ऐसे ही एक प्रमुख शिष्य **रसेन्द्र स्वामी जी** से मिलने का सौभाग्य रहा। पूज्यपाद गुरुदेव ने कभी प्रसंग - वश अपने आयुर्वेद के विशिष्ट ज्ञाता शिष्य के रूप में उनका नाम लिया था और मुझे इस बात का स्मरण था। कुमायूं घाटी में भुवाली से कैंची के कुछ आगे एवं रानी खेत से पहले, रसेन्द्र स्वामी जी ने अपना पूरा जीवन उसी सुरम्य घाटी में रहते हुए, आयुर्वेद की ज्ञान की प्राप्ति के लिए समर्पित कर दिया है, और उनसे मिलकर ही हमें पूज्यपाद गुरुदेव के सन्यस्त जीवन की अनेक झलकियां तथा आयुर्वेद के अध्येता के रूप की जानकारी मिल सकी।

स्वामी जी के अनुसार पूज्यपाद गुरुदेव अपने साधक जीवन में सबसे अधिक रुचि आयुर्वेद में ही रखते थे और आयुर्वेद के रूप में उनका लक्ष्य था कि मैं प्रकृति के प्रत्येक पौधे की, प्रकृति द्वारा रचित प्रत्येक कण की उपादेयता समझ सकूं। **अदभुत रहा है पूज्यपाद गुरुदेव का प्रकृति प्रेम, जो आज तक उनके जीवन का अभिन्न अंग है और सचमुच उन्होंने जिस प्रकार से सन्यस्त जीवन में दुर्गम स्थानों को खोज कर अनेक औषधियां खोज निकाली, उनकी तुलना करने के लिए कोई भी सन्यासी या आयुर्वेदज्ञ उनके समक्ष खड़ा हो ही नहीं सकता।** जीवन में सदैव नूतन चिंतनों और नवीन पद्धतियों को ग्रहण करने के आग्रही पूज्यपाद गुरुदेव का इस विषय में यह स्पष्ट मत था कि मुझे आम तौर पर प्रचलित कुछ जड़ी बूटियों का ज्ञान अर्जित करके नहीं रह जाना है, मुझे तो इस क्षेत्र में वह कार्य करना है जो अद्वितीय हो, जो अपने आप में उदाहरण बन जाए और इस क्षेत्र में पूज्यपाद गुरुदेव के समक्ष चुनौती बन कर खड़ा हुआ था -- **उन चौंसठ औषधियों का ज्ञान अर्जित करना, जिसे आयुर्वेद से संबंधित ग्रंथों में दिव्य औषधियों की संज्ञा दी गई है,** जिनकी प्रशंसा में तो बहुत कुछ कहा गया है, लेकिन वे कौन - कौन सी हैं और वर्तमान में किस नाम से जानी जाती हैं इसका कोई भी सूत्र नहीं मिल रहा था। आयुर्वेद के अनेक शोध कर्ता और आचार्य समस्त प्रयत्न करके, अपना पूरा जीवन अर्पित करके हार गए, लेकिन सूत्र प्राप्त नहीं कर सके थे और पूज्यपाद गुरुदेव ने अपने सन्यस्त जीवन के प्रारम्भिक जीवन में ही यह दृढ़ निश्चय कर लिया था कि मुझे हर हाल में इन औषधियों का ज्ञान प्राप्त करना ही है। केवल अपने लिए ही नहीं, केवल रहस्य प्राप्त करने के लिए ही नहीं वरन समाज के सामने इनको स्पष्ट कर उसका लाभ देने के लिए।

एक ही जीवन में इतना अधिक ज्ञान,इतनी अधिक चेतना, हजारों प्रकार की वनस्पतियों का ज्ञान प्रत्येक वनस्पति पर रचित सैकड़ों- सैकड़ों प्रयोगों का ज्ञान किसी एक व्यक्तित्व में ही संग्रहित . . .? ऐसा ही अनुभव हुआ पूज्य पाद गुरुदेव से मिलकर. . .

. . . निरन्तर एक स्थान से दूसरे स्थान पर भ्रमण, कभी किसी पर्वत की चोटी पर, तो कभी किसी गहन घाटी में, जहां जिस आयुर्वेद के आचार्य का पता चला, कई - कई माह तक उसकी सेवा कर उनसे ज्ञान प्राप्त करना, कई - कई दिन दुर्गम स्थानों में फंसकर बिना अन्न - जल ग्रहण किए, एक से एक घने जंगलों में घुस कर सूक्ष्मता से एक - एक पौधे की जांच कर, उचित जड़ी की खोज करना, वापिस लाकर उसे अपने गुरुदेव से प्रमाणित करवाना या शास्त्रों में वर्णित ढंग से परीक्षा कर उसकी प्रामाणिकता को स्वयं अनुभूत करना --- ये सब इन चंद पंक्तियों में जिस प्रकार से लिखा है वास्तव में उतना सहज था नहीं। *हिंसक पशुओं से भरे जंगल में विचरण करना और जहरीले सांपों और बिच्छुओं के बीच में फंस कर भी परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानंद जी ने जिस प्रकार से आयुर्वेद को ही नया जीवन दे दिया, मृत हो चले प्राणों के उस शास्त्र आयुर्वेद को बचा लिया,*

उससे तो आयुर्वेद भी उनके समक्ष नतमस्तक होकर खड़ा हो गया है। पूज्य गुरुदेव को यह बाध्यता नहीं रही कि वे आयुर्वेद का अध्ययन करें, आयुर्वेद ही बाध्य हो गया कि वह उन्हें कृतज्ञता ज्ञापित करे।

हिमालय के क्षेत्र में जिस प्रकार से पूज्यपाद गुरुदेव का कृतित्व और व्यक्तित्व इस रूप में विख्यात है, उससे तो योगीजन पूर्ण विश्वास पूर्वक कहते हैं कि **वास्तव में पूज्यपाद गुरुदेव कोई अन्य नहीं स्वयं धनवन्तरी ही हैं जो हमारे मध्य परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानंद के रूप में गतिशील हैं।** पूज्यपाद गुरुदेव ने समस्त चौंसठ दिव्य औषधियों को तो प्राप्त किया ही, उनका वर्तमान में प्रचलित नाम जन सामान्य के सामने स्पष्ट किया, साथ ही उन्होंने प्रयत्न करके इन चौंसठ औषधियों को अपने शिष्यों के माध्यम से लुप्त होने से भी बचा लिया है। उनके सन्यस्त शिष्यों ने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा उन औषधियों को पहचान कर, उन्हें दुर्गम स्थानों से निकाल कर, अपने बीच लाकर प्रत्यारोपित किया है, जिससे कि वे आने वाले भविष्य में पुनः शास्त्रों का विषय बन कर न रह जाएं और इन चौंसठ औषधियों का जो विवरण हमें रसेन्द्र स्वामी जी के पास पूज्यपाद की हस्तलिपि में देखने को मिला, उसका संक्षिप्त विवरण देने से मैं अपने - आप को रोक नहीं पा रहा हूं--

विचित्र नाम हैं इनके जो शास्त्रों में अलग - अलग ढंग से मिलते हैं, और जो वर्तमान में इन नामों से जानी जाती हैं -- **१. अंकोल, २. विष्णुकांता, ३. हेमपुष्प, ४. ककुभ, ५. अजार्क, ६. अस्थि सिंगार, ७. आक, ८. आंवला, ९. इन्द्रायण, १०. उत्तरण, ११. कंझल, १२. कटड़, १३. करंझ, १४. कतवत्ता, १५. कताद, १६. कंतुरयून, १७. कनकचम्पा, १८. काष्ठ गोधा, १९. अजा, २०. कबर, २१. धारा फल, २२. कमल, २३. कर्वाकन्द, २४. कलम्ब, २५. कलिहारी, २६. मृगनाभ, २७. कुमुद, २८.केसर, २९. गंधना, ३०. गिलेमखतून, ३१. गिलोय, ३२. गुड़मार, ३३. गुलचांदनी, ३४. छिरबेल, ३५. गोरखमुण्डी, ३६. जदवार, ३७. गुग्गुल, ३८. अमराशी, ३९. जयंती, ४०.जहरद, ४१. जियापोता, ४२. जीवन्ति, ४३. पलाश, ४४. ताम्बूल, ४५. तुलसी, ४६. तेलियाकंद, ४७. थुहल, ४८. बेरूक, ४९. पीला धतूरा, ५०. नगन्ध, ५१. निर्विसी, ५२. नीम, ५३. नीलम चचेला, ५४. पद्माक, ५५. पतालतुम्बी, ५६. पीयारंग, ५७. पीपल, ५८. पुनर्नवा, ५९. ब्रह्म मण्डुकी, ६०. बाघचूटा, ६१. मयूरकंद, ६२. लक्ष्मणा, ६३. शिलाजीत, ६४. समुद्र फल।**

अजार्क. . . जम्मू के समीप कन्दरनाग में मिलने वाली एक दुर्लभ औषधि. . .अदभुत् है इसका प्रयोग। कोई जंगली बकरा इसको खा लेता है और मद - मस्त हो मुंह से लार निकालने लगता है, जो जम जाती है हवा का स्पर्श पाकर. . . बन जाती है, एक अमूल्य औषधि, बेशकीमती, अनमोल . . .

स्पष्ट है कि जहां पर ऐसे दिव्य ज्ञान की प्राप्ति होगी, जहां ऐसी दिव्य औषधियों के ज्ञान का साकार रूप होगा और उसके साकार रूप से भी श्रेष्ठतम पूज्यपाद गुरुदेव सदृश्य ग्रंथ की उपस्थिति होगी फिर वहां क्या मृत्यु जैसी दुःसाध्य स्थिति का भी भय हो सकता है? **और यह तो पूज्यपाद गुरुदेव के गृहस्थ शिष्यों ने भी अनुभव किया है कि यदि किसी कि अंतिम एक श्वास भी शेष रह गई हो और वह व्यक्ति केवल गुरुधाम में प्रवेश भी कर ले तो मृत्यु उसका कुछ भी नहीं कर सकती।**

आयुर्वेद तो पुनर्जीवन देने की क्रिया है, आयुर्वेद पुनर्जीवन देने का ही शास्त्र है, जो पूज्यपाद गुरुदेव ने संभव किया है अपने जीवन में। आयुर्वेद का उपयोग एवं प्रस्तुतिकरण उनके द्वारा सत्यतः आयु के वेद के रूप में ही तो हुआ है।

आज यह बात शायद पाठक को कल्पना युक्त लगे या पाठक इसको जिस प्रकार से भी ले, लेकिन ऐसा चिंतन कोई नई बात नहीं, केवल ज्ञान के क्षेत्र में ही नहीं वरन विज्ञान के क्षेत्र में भी आज से वर्षों पूर्व जो स्थितियां कपोल कल्पना की बातें या अविश्वसनीय मानी जाती थीं, वह धीरे - धीरे उचित यंत्रों की खोज और तकनीकी पद्धति की उन्नति से संभव हुई हीं। **क्या पता कल को कोई यंत्र बन जाए और यह तथ्य विज्ञान के माध्यम से भी स्पष्ट हो कि पौधे भी अपना गुणधर्म स्वयं कहते हैं। तब स्पष्ट हो सकेगी पूज्यपाद गुरुदेव द्वारा बिना यंत्रों के माध्यम से अर्जित इस ज्ञान की महत्ता।**

जहां प्रकृति की बात आती है वहां सजीवता और चैतन्यता की बात आती ही है। आयुर्वेद अपने आप में केवल रोगों का उपचार या निराकरण की पद्धति ही नहीं है, आयुर्वेद अपने आप में प्रकृति की तरह ही स्पन्दित जीवन्त और चैतन्य बना देने का शास्त्र है और पूज्यपाद गुरुदेव ने प्रकृति से यही शैली, यही बात आयुर्वेद के ज्ञान के रूप में ली है, उन्होंने यह ज्ञान पोथियों से नहीं लिया है, इसी से *जो आयुर्वेद का ज्ञान उनके पास सुरक्षित है, वह प्रकृति की तरह ही विविध रंग के पुष्पों से भरा है, उसमें ओस की ताजगी है और इसी से है, पूज्यपाद गुरुदेव के पास कायाकल्प के एक से एक बढ़कर अनूठे और छोटे प्रयोगों की भरमार . . .*

. . . चाहे वह चेहरे के कील मुंहासों की बात हो या गहरे रंग की, बेडौल ढंग से सूज गये किसी अंग की बात हो या मंद पड़ गया शरीर का उत्साह -- सभी के लिए आयुर्वेद में बखूबी उपाय बताये गए हैं, जो हमें उस घर के आसपास मिलने वाली साधारण जड़ी - बूटियों से भी मिल सकते हैं। जीवन के असाध्य रोग जिनको अन्य पद्धतियां पूर्ण उपचार नहीं दे सकतीं, उनको भी पूर्ण उपचार देने का दावा आयुर्वेद करता है। आयुर्वेद में तो कैंसर और टी. बी. जैसी गम्भीर या फिर स्त्री रोगों जैसी दुरूह बीमारियों के उपचार भी सफलता पूर्वक बताये गए हैं।

पूज्यपाद गुरुदेव ने अपने को किसी भी उपाय विशेष से आबद्ध नहीं किया और उन्होंने केवल शास्त्रों द्वारा अर्जित ज्ञान को ही पूर्ण न मानकर उसमें निरन्तर शोध भी किए, जिसके सुखद परिणाम के रूप में जहां एक ओर आयुर्वेद शास्त्र में ज्ञान - भण्डार विस्तृत हुआ है, वहीं उनके सैकड़ों - सैकड़ों शिष्य और साधक समय -समय पर लाभान्वित भी हुए हैं। **आज आवश्यकता है तो केवल इस बात की कि पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा अर्जित ज्ञान समाज में विस्तार पा सके और ज्ञान को विस्तार करने के लिए माध्यम होता है 'सुयोग्य शिष्य'।** आवश्यकता है कि हम पूज्यपाद गुरुदेव से प्रार्थना कर सकें कि वे अपना अमूल्य ज्ञान प्रदान करें और इसके लिए आवश्यक है कि हम उनके समक्ष शिष्य बनकर प्रस्तुत हों। ज्ञान कोई लेने - देने की वस्तु नहीं होती, उसके पीछे तो पूज्यपाद गुरुदेव बस एक ही तत्व देखते हैं कि क्या वास्तव में यह शिष्य मेरे द्वारा प्रदत्त ज्ञान को समाज में फैलाएगा? मेरे द्वारा दिए गए ज्ञान का सदुपयोग करेगा? और कहीं ऐसा तो नहीं है कि यह स्वार्थवश ज्ञान अर्जित कर रहा है? और इन प्रश्नों के उत्तर पूज्यपाद गुरुदेव अपने ढंग से ही समझाते हैं, उन्हें बोलकर स्पष्ट करना आवश्यक नहीं होता, केवल उनके समक्ष प्रस्तुत होना ही पर्याप्त होता है।

आज इन पंक्तियों के माध्यम से यह मेरा सभी पाठकों, साधकों एवं शिष्यों से अनुरोध है कि वे समय रहते ही अवसर की महत्ता समझें। वे यह समझें कि वास्तव में उनके समक्ष एक जीवित ग्रंथ ही नहीं एक संस्था उपस्थित है --- **पूज्य गुरुदेव डॉ. नारायण दत्त श्रीमाली जी** के रूप में और वह अपना ज्ञान देने के लिए आतुर ही नहीं, चिंतित भी हैं, कि कहीं मेरे साथ यह ज्ञान परम्परा लुप्त न हो जाए, क्योंकि ज्ञान केवल पुस्तकों के माध्यम से ही नहीं दिया जा सकता। **ऐसे अद्वितीय ज्ञान को जो साक्षात् मृत व्यक्ति को भी जीवित कर देने की कला अपने आप में छुपाए रखता हो, जिसे हमारे पवित्रतम 'वेद चतुष्टय' में से एक वेद का स्थान मिला हो,** क्या वह इतनी सस्ती और इतनी हल्की है कि उसे हम जब चाहें तब प्राप्त कर लें? इसके लिए तो एक श्रेष्ठ मानसिकता रखते हुए सक्रिय होना पड़ेगा और अपने जीवन को संवारने के साथ - साथ अपने आने वाली पीढ़ियों को भी देने के लिए ज्ञान संजो लेना होगा।

आयुर्वेद के ऐसे साकार पुंज और मूर्तिमन्त स्वरूप पूज्यपाद गुरुदेव **डॉ. नारायणदत्त श्रीमाली जी** शत् शत् वन्दनीय हैं, जिन्होंने एक मृतप्राय विद्या को नव जीवन दिया है। आयुर्वेद में दिया उनका योगदान अविस्मरणीय रहेगा। उन्होंने इस क्षेत्र में इतना अधिक कार्य किया है कि जब वह प्रकट होगा तब उसका मूल्यांकन करने में ही एक दो वर्ष ही नहीं, कई - कई दशक व्यतीत हो जाएंगे, और समाज आश्चर्य में पड़ जाएगा कि कैसे एक जीवन में ही एक व्यक्तित्व ने इतना ज्ञान संचय करके, वितरित भी कर दिया।

पूज्यपाद गुरुदेव का स्वप्न तो यह है कि मैं अपनी आने वाली पीढ़ियों को केवल ज्ञान ही नहीं, साक्षात रूप में और प्रकट रूप में कुछ देकर जाऊं, और इसी चिन्तन का क्रम है कि उनके कुछ योग्य शिष्य आगे आयें, जिनके माध्यम से पूर्णतः वैज्ञानिक ढंग से इन ६४ दिव्य औषधियों के साथ अनेक दुर्लभ वनस्पतियां भी 'फार्म' में उगाकर विकसित और संरक्षित की जा सकें। यह उनका सर्वथा अनूठा चिंतन है और ऐसा संभव होने पर आने वाली पीढ़ियां उनकी चिर ऋणी रहेंगी।

हिन्दू जीवन दर्शन में तो एक वृक्ष को सौ पुत्रों के समान कहा गया है और जहां ऐसे दिव्य वृक्षों का वातावरण होगा, जहां ऐसी दिव्य औषधियों की गंध होगी जिनके पीछे छिपी पूज्यपाद गुरुदेव की कृपा, गुरुदेव का अथक परिश्रम और ममता दृष्टिगोचर होगी, जो साधकों और शिष्यों की समर्पण से फली - फूली और बढ़ी होगी, वह स्थान क्या स्वर्ग के रमणीक वन को भी परास्त करने वाला नहीं होगा?

क्या संभव है. . .चेचक के दाग, जो जाते- जाते कुरूप कर जाते हैं, वे मिट सकें? संभव ही नहीं, और यही असंभव, संभव होता है. . . कनक चम्पा बेल की गोंद से, सौन्दर्य प्राप्ति का आयुर्वेद में वर्णित अद्भुत प्रयोग. . .

आगामी अंक

मंत्र-तंत्र-यंत्र
विज्ञान

का एक अद्वितीय विशेषांक

परालौकिक रहस्य रोमांच विशेषांक

- वह अलौकिक योगिनी- जिसकी झोली में स्वर्ण मुद्राएं भरी रहती थी।
- परकाया प्रवेशः संभव है यह भी, बशर्ते सही साधक सही ढंग से प्रयोग करे।
- वह श्मशान की महानिशा. . . रोंगटे खड़े कर देने वाले क्षण
- गढ़वाल का वह सिद्ध पीठ - जहां वायुगमन प्रक्रिया सिखाई जाती है।
- उर्वशी सोलह श्रृंगार कर आमने- सामने नाचेगी ही एक आधुनिकतम तंत्र प्रयोग
- हां! मूठ फेंकी जाती है - एक गोपनीय रहस्यमय प्रयोग
- हनुमान साधना - ऐसा कोई कार्य ही नहीं है, जो इस साधना से सिद्ध न हो।
- मानसरोवर की वह भैरवी. . .
- श्मशान का सिद्ध वेताल जो अपने आप में आश्चर्यजनक है।
- मैं आपकी जवानी लौटाने का वायदा करता हूं इस ''अमृतोप्रयोग'' से।

और भी बहुत कुछ जनवरी ९४ के विशेषांक में . . .

अपने निकटतम बुक स्टाल से अपनी प्रति आज ही सुरक्षित करायें

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान , डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाई कोर्ट कॉलोनी, जोधपुर - ३४२००१ (राज.) ,फोन : ०२९१ - ३२२०९
गुरुधाम, ३०६, कोहाट एन्क्लेव, नई दिल्ली - ११००३४, फोन : ०११-७१८२२४८, फेक्स : ०११-७१८६७००

अपने निश्चय पर पुनर्विचार करिये न गुरुदेव!

• डॉ. श्यामल कुमार बनर्जी

श्री चरण कमलेषु,

परमाराध्य परमपूज्य गुरुदेव,

साष्टांग दण्डवत् प्रणाम।

प्रभु! मैं समझ नहीं पा रहा कि मैं अपनी भावना, अपने अन्तर्मन की पीड़ा किन शब्दों में बांधकर इस पत्र के माध्यम से आप तक प्रेषित करूं। शब्द कभी तो माध्यम नहीं बन पाये, हृदय की आन्तरिकता को प्रकट करने में। प्रभु, ऐसा क्या अपराध हो गया, ऐसी कौन सी त्रुटि हो गई हम सभी से, जो आपके चित्त पर ठेस लग गई और आप इतना बड़ा निर्णय लेने के लिए बाध्य हो गए। सितम्बर के अंक में पूज्य किंकर स्वामी जी का लेख-पढ़कर मैं अन्दर तक से हिल गया हूं। संकेत तो आप पिछले कुछ समय से निरन्तर दे रहे थे कि अब मैं इस जगत के रंग - ढंग से व्यथित हो गया हूं , लेकिन मेरा ही नहीं सभी गुरु भाइयों का अनुमान इस शीघ्रता से नहीं था, और सच तो यह है कि हम सब कम से कम अभी आठ से दस वर्ष का समय आप के साथ प्राप्त करने के इच्छुक हैं ही, क्योंकि जिन शिष्यों को आपने उनके दलदल रूपी भौतिक जीवन से निकाल कर, आध्यात्मिक जीवन में खड़ा किया है, वे सचमुच अबोध बालक ही तो हैं, लड़खड़ाते, गिरते-उठते और एक- एक डग भर कर जीवन के सत्य को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील। आपके स्पर्श से ही तो चैतन्य हो कर उन्होंने अपनी अधखुली आंखों से अभी - अभी पहली बार कुछ दिव्यता देखी भर है, और पहली बार किलकारी मारकर ये सभी शिष्य अपने छोटे - छोटे डग भर कर दौड़ पडे हैं। ये तो एकदम से कुंठित हो जायेंगे, इनके जीवन में तो फिर कोई आशा, कोई चेतना, कोई उमंग और जीवन का कोई भी आधार शेष नहीं रह जायेगा। आपके ही संस्कारित, ये अबोध शिष्य - ये अबोध शिशु फिर ऐसे भी तो नहीं हो सकते कि वापस उसी जीवन में, उसी जीवन की भूलभुलैया में खो जाएं, फिर ये नहीं समझ पायेंगे कि जीवन का मार्ग किधर जा रहा है? यह अवश्य है कि इनमें वह चेतना, वह ऊंचाई और वह गरिमा नहीं है जो कि एक शिष्य में अपेक्षित होती है। सच तो यह है कि इन्हें आपके समक्ष उपस्थित होने का और आपसे वार्तालाप करने का ढंग ही नहीं आता, लेकिन क्या इनकी यह अज्ञानता शिशु की अज्ञानता और अबोधता मानकर क्षम्य नहीं है? आपके विशाल हृदय व क्षमाशीलता का अन्य किसी को अनुभव है अथवा नहीं, लेकिन मैंने तो अपने जीवन के पग -पग पर आपकी उदारता और आपकी विशाल हृदयता का अनुभव किया है। प्रभु ने मुझे ऐसे क्षण दिए हैं, जब मैं आपके संग , एक शिष्य रूप में व्यतीत हुए क्षणों में साक्षीभूत बनकर, आपकी विशालता, आपकी उच्चता, आपकी प्रखरता और आपकी इसी सामान्य वेशभूषा और जीवन शैली में छुपे एक कालजयी ऋषि के दर्शन प्राप्त कर सका हूं। केवल एक रूप में ही नहीं, अनेक रूपों में । मेरे समक्ष कोई भ्रम रह ही नहीं गया कि गुरु तो वास्तव में ब्रह्मा, विष्णु, महेश के साथ ही साथ अनेक अलौकिक स्वरूप अपने में समेटे होते हैं, ज्यों हीरे का एक खण्ड , एक होता हुआ भी अपने कई फलकों से विभिन्न रंगों की आभा प्रदान करता है, उसी प्रकार तो है आपका व्यक्तित्व और क्या - क्या नहीं देख लिया मैंने अपने अल्पकाल मेंआप में-- शंकराचार्य, भगवान श्री कृष्ण, भगवान बुद्ध, श्री राम कृष्ण परमहंस और साक्षात आत्मलीन भगवान शिव। इन सभी से भी अतीत आपका वह दिव्य स्वरूप, सच्चिदानन्द स्वरूप . . .

ॐ नमः शिवाय गुरुवे सच्चिदानन्द मूर्तये।
निष्प्रपंचाय शांताय निरालम्बाय तेजसे ।।

यह शास्त्र वचन यदि युगों बाद मूर्तरूप से दृष्टव्य है तो निः संदेह आपके ही भव्य विग्रह में, लेकिन इतने - इतने स्वरूपों को, इतनी - इतनी तेजस्विता को साधारण मानव क्या अपनी बुद्धि से समझ सकता है? कदापि नहीं। यह तो साक्षात् परमब्रह्म की लीला का विस्तार है, और फिर साधारण व्यक्ति भ्रमित तो हो ही जाता है। मैंने स्वयं ही आपके साथ रहने पर इसी तथ्य को पग - पग पर अनुभव किया है ,और इसी से फिर उन सभी शिष्यों की अज्ञानता और अज्ञानता से भी अधिक उनकी अभद्रताओं के लिए क्षमा-

प्रार्थी होता हूं, क्यों कि यह आपने ही हमें सिखाया कि तुममें से प्रत्येक शिष्य अलग - अलग नहीं है, और मैं भी तुम सभी शिष्यों की समष्टि ही तो हूं।

. . . लेकिन परमहंस किंकर स्वामी जी के वचन भी तो मिथ्या नहीं हो सकते। जब उनके ही वचन पत्रिका में भी प्रकाशित हुए हैं कि आप बस अब चार - पांच माह में ही वापिस सिद्धाश्रम चले जाएंगे, तो इस समय संदेह अथवा तर्क - वितर्क के लिए स्थान ही कहां? . . . वर्षों पूर्व जब आपने अपने अथक प्रयासों से हम सभी शिष्यों को एकत्र कर अपने सान्निध्य में हिमालय के उन गोपनीय और पवित्र स्थानों की यात्रा कराई थी, तब उसी अवसर पर परमहंस किंकर स्वामी जी से हुई भेंट, मैं ही नहीं मेरी पत्नी भी आज तक विस्मरित नहीं कर सकी है। उनकी वह तेजस्वी और भव्य मूर्ति, दुग्ध धवल - ठीक गंगोत्री के फेन की ही तरह श्वेत जटा, आज तक हम दोनों के हृदय पटल पर दिव्यता और पवित्रता की तरह अंकित है। वास्तव में शिष्यत्व की मर्यादा और उच्चता तो हम दोनों ने किंकर स्वामी जी के संग रहकर ही समझी। **प्रत्येक सन्यासी शिष्य, अपने आप में जिस प्रकार से साधना और सिद्धियों की परिपूर्णता के बाद केवल गुरु चरणों में नत होना ही जीवन की सर्वोच्च तृप्ति मानता है, एक तृण की भांति गुरु पादुका के नीचे अपने अस्तित्व को दबा देने की आकांक्षा मन में रखता है, वही तो शिष्यत्व की परिभाषा है** और इस जगत में . . . इस जगत में तो शायद ही कोई बिरला होगा, जिसके मन में कोई कामना न दबी हो, या जो अपने किसी दुर्बल पक्ष के कारण आपसे न जुड़ा हो, लेकिन फिर भी ये क्षमा के योग्य हैं, क्योंकि समाज एवं परिवार से यही सब तो इन्हें उत्तराधिकार में मिला है, इनके पूर्वजों ने धन के साथ - साथ इन्हें यह भी 'उपहार' में दिया है, और अब जब आपका इनके जीवन में पदार्पण हुआ है, तभी तो इनके युगों पूर्व कभी आपके सम्पर्क में रहने पर प्राप्त हुए सुसंस्कार जागने की क्रिया में आये हैं, यह सुसंस्कारों का जागना ही इनका नवीन जन्म है, इसी से तो मैं इन्हें आपके समक्ष 'अबोध' कहने की धृष्टता कर रहा हूं। यह मेरी पात्रता नहीं है कि मैं आपके समक्ष कोई विवेचना करूं या निर्णयात्मक स्वर में बोलूं, लेकिन अपने सभी गुरु भाइयों के साथ अपना स्वर मिलाते हुए जीवन की इस कठिन घड़ी में मैं एक प्रकार से चीत्कार कर रहा हूं और मुझे इस चीत्कार में उचित - अनुचित का बोध नहीं हो रहा है।

. . . केवल आपसे जुड़े साधक व शिष्य ही नहीं वरन जिस तरह से सामान्य पाठक भी, पत्रिका का कोई भी एक अंक पढ़कर आपसे मिलने की क्रिया करने लगे हैं और मेरे नगर में मुझे आपके शिष्य के रूप में पहचान कर मुझसे आग्रह करने लगे हैं, उससे **मुझे विश्वास हो गया है आपके उस कथन पर कि -- केवल वर्षों से जुड़े शिष्य ही नहीं, मेरे पाठक भी मुझसे किसी न किसी जन्म में जुड़े रहें हैं, तभी तो उनके अन्दर साधना की ललक है, चेतना है और पत्रिका के पन्नों पर छपे ज्ञान को जीवन में उतारने की भावना है।** हम शिष्य तो फिर भी सौभाग्यशाली हैं, हमने तो आपके संग जीवन के अनेक वर्ष व्यतीत किए हैं। आपको गुरु रूप में देखा है, आपको पितृ रूप में देखा है, आपके संग शिविरों में शिष्य बनकर ज्ञान अर्जित किया है, तो उत्सवों में जीवन का उल्लास भी अनुभव किया है। सामान्य मनुष्य जो पूरे - पूरे जीवन में भी प्राप्त नहीं कर सकता, हमने आपके संस्पर्श से जीवन के कुछ माह में ही, कुछ दिनों में ही वे सभी सुख और आह्लाद प्राप्त किए हैं, लेकिन अभी - अभी चैतन्य हुए और तेजी से आगे बढ़कर आपसे जुड़ने की क्रिया करने वाले पाठक वर्ग के सदस्य तो आपसे संस्पर्शित नहीं हो सके हैं। वे तो अपनी नित्य की समस्याओं में उलझ कर ऐसे फंसे हैं कि सारी कोशिशों के बाद भी आपका साक्षात् दर्शन नहीं कर सके हैं। प्रभु उनकी व्यथा भी तो समझिए, केवल एक व्यक्ति नहीं, केवल व्यक्तियों का कुछ समूह ही नहीं, केवल समाज का कोई एक भाग ही नहीं, वास्तव में तो इस युग में सम्पूर्ण मानवता ही व्याकुल होकर निहार रही है, जीवन में जो वास्तविक आध्यात्मिकता है उसके लिए, और यह पाठक वर्ग इसी का जीता - जागता उदाहरण है।

प्रभु! इन्हें कोई भी शास्त्र, कोई भी उपदेश, कोई भी भजन, कोई भी प्रवचन शांति नहीं दे रहा है, क्योंकि यह सब धर्म के अंग तो हो सकते हैं, कर्मकाण्ड का पक्ष तो हो सकता है लेकिन आध्यात्मिकता नहीं है, इन्हें तो आध्यात्मिकता की सही पहचान आपके स्पर्श से ही संभव हो सकेगी। **आपके रोम - रोम से ध्वनित दिव्यता की मौन संगीत लहरियां ही इनके सुप्त पड़े जीवन को स्पन्दित करेंगी और आपका शिव स्वरूप में किया गया विषपान, फिर इनके जीवन के छिपे अमृत को उभार कर ला सकेगा, इनके मौन हो गए उल्लास को ध्वनि देगा, गति देगा** . . . इस विषपान के अतिरिक्त हम सभी ने आपको फिर दिया भी क्या है? कभी भी तो किसी ने नहीं पूछा" गुरुदेव! आपकी इच्छा क्या है? आपके जीवन की तृप्ति क्या है? आप हमसे क्या अपेक्षा रखते हैं? हम आपके ज्ञान का सदुपयोग कैसे करें? कैसे वह पात्रता निर्मित करें कि आपका ज्ञान हममें उतर सके, आपकी चेतना, आपकी इच्छा, आपका सुख - दुख सब हमारा बन सके," और जैसा वर्षों से जुड़े शिष्य **गुरु सेवक** ने बताया कि आपके जीवन की पीड़ा ही यही है, यही आपका खेद है और यही उदासी का कारण भी कि आपके शिष्यों ने आपके आध्यात्मिक पक्ष को समझा ही नहीं, और समझा भी तो उसे अपने जीवन में उतारने के लिए आगे बढ़कर संलग्न नहीं हुए, चैतन्यता और उदात्तता की स्थितियों की ओर अग्रसर होने का उपक्रम करते नहीं दिखाई दिए। वृथा बकवाद से आपके समक्ष भोंडा प्रदर्शन करते रहे, लेकिन प्रभु! आप केवल

इस युग की ही नहीं केवल इन्हीं शिष्यों की ही नहीं वरन आने वाले युगों की भी धरोहर हैं। यह सत्य है कि आप सिद्धाश्रम के समस्त वन्दनीय श्रेष्ठतम शिष्यों एवं योगीजन की अमूल्य धरोहर हैं और सचमुच हमने आपका सम्मान नहीं किया है, लेकिन साथ ही साथ आप सदेह रूप में एवं ज्ञान परम्परा के रूप में इस धरा के प्रत्येक युग की भी धरोहर है, **अभी पिछले ही दिनों जब मैं आपके पास दिल्ली आया था तो मैंने देखा कि लगभग बीस छोटे - छोटे बच्चे, जिन्हें अपना नाम बोलना भी नहीं आ रहा था – आपसे दीक्षा पाने के लिए बैठे हैं। यही तो हैं वे नन्हें दीपक, जो निष्कलंक हैं, जो निर्मल हैं और जो आगे बढ़कर एक दिन आपके स्वप्न का विश्व गठित करने में समर्थ होंगे।** मैं सभी की बात तो नहीं जानता लेकिन मेरी तो यही भावना है कि काश! इन नव दीपकों के लिए, इन शिशुओं के लिए, कोई ऐसा कार्य किया जा सके, कोई ऐसी नींव डाली जा सके कि फिर ये आने वाले समय में छटपटा कर समाप्त न हो जाएं। इन्हें निरन्तर स्नेह और प्रेम का ऐसा ईंधन मिलता रहे जो इन्हें धधकाए रखे।

प्रभु! अब और सह्य नहीं, आपके मानस पुत्र मात्र आपके शिष्य और पुत्र ही नहीं, हमारे भी अनुज हैं और अब आप इन्हीं क्षणों में कृपा पूर्वक अपना आशीर्वाद, अपनी आज्ञा, अपना बल, अपनी चेतना और सर्वोपरि अपनी विशाल हृदयता मुझे प्रदान करें कि मैं शीघ्रातिशीघ्र संस्था के नव निर्माण की प्रक्रिया आरम्भ कर दूं। यह मेरे व्यक्तिगत प्रयासों से संभव नहीं होगा, लेकिन मैं इसमें सभी गुरु भाइयों का सहयोग लूंगा। जिससे तीव्रता और सघनता से संस्था का विशाल भवन तैयार हो सके। केवल एक मंदिर नहीं, केवल एक संस्था का विशाल भवन ही नहीं, जगह - जगह ऐसे ही केन्द्र स्थापित हों और हम अपने प्रयासों से आपके सामने स्पष्ट कर सकें कि भले ही हमारी चेतना सिद्धाश्रम के प्रणम्य योगीजन के समान प्रखर न हो, लेकिन इस मलिन और स्वार्थमय संसार में रहते हुए भी अपने प्रयास भर गतिशील हैं ही। ज्यों कभी भगवान राम ने एक सेतु निर्माण किया था और उसमें एक गिलहरी भी अपने पंजों में कुछ बालू दबा कर ले आई थी, ऐसे ही मैं भी भौतिकता और आध्यात्मिकता के बीच की खाई को पाटने के लिए एक सेतु निर्मित करूंगा, भले ही मेरा योगदान उसमें उस गिलहरी जितना ही हो! मैंने व्यक्तिगत रूप से अपनी आय में से धन का संग्रह इस कार्य के लिए करना आरम्भ कर ही दिया है, साथ ही मेरी कामना है कि मैं एक कोष स्थापित करूं और प्रत्येक गुरु भाई को प्रेरित करूं कि वह प्रतिमाह एक निश्चित धन राशि जमा करे।

प्रभु! ऐसा कब तक चलेगा कि आप अकेले ही सारा बोझ उठाते रहेंगे, आप अकेले ही तिलतिल कर जलते रहेंगे, अपने स्वास्थ्य और अपने अमूल्य शरीर की बलि चढ़ाते रहेंगे। अभी पिछले वर्ष ही तो आप यकृत प्रत्यारोपण के गम्भीर दौर से निकल कर के हम सभी के मध्य आए हैं। हम लोगों का सौभाग्य है कि आप इतने गम्भीर आपरेशन को अपनी सुदृढ़ काया पर झेल लेने के बाद उसी प्रकार से पुनः मुस्कराते हुए गतिशील हैं लेकिन यह क्षण आपके विश्राम के हैं। डॉक्टर इस गम्भीर आपरेशन के बाद इतना कड़ा परिश्रम करने की सलाह दे ही नहीं सकते, किंतु आपका संस्था के प्रति प्रेम, उनकी भी अवहेलना कर गया। अब यह स्थिति हम सभी शिष्य कदापि सहन नहीं करेंगे। घर में जब पुत्र बड़ा हो जाता है तो पिता स्वतः ही उसे यह सोचकर कि अब यह जिम्मेदार हो गया है, सारी जिम्मेदारी सौंप कर निश्चित हो जाते हैं। यह आपके विश्राम के क्षण हैं और जो गुरुपद का अर्थ है, ज्ञान का उद्‌बोधन एवं व्याख्या, आप अब उन्हीं क्षणों में लीन हों। हम सभी आपके पुत्र आपको विश्वास दिलाते हैं कि आपका दायित्व आज से हमारा है। हम आपको निश्चिंत करना चाहते हैं, सुख देना चाहते हैं। मैं आपके पास आने की आज्ञा चाहता हूं। मैं नहीं जानता कि मेरा ऐसा चिंतन करने में मेरी कोई अहंमन्यता या मर्यादाहीनता है अथवा नहीं, लेकिन अब विलम्ब सह्य नहीं। मैं ऐसा नहीं चाहता कि आपके इस प्रकार चले जाने से सम्पूर्ण युग, सभी शिष्य और यह सम्पूर्ण पीढ़ी कलंकित हो जाए, कि तुम्हारे पास तो अवसर था ऐसे गुरु के सान्निध्य का, तुमने उनसे क्या प्राप्त किया है? हमारे लिए प्रभु यह भवन, यह मंदिर, यह आध्यात्मिक केंद्र स्थल ही मूर्त रूप होंगे, उनके लिए, हमारी इस पीढ़ी का योगदान स्पष्ट करने के लिए। **मैं आप से मिलने के अवसर पर ही आज्ञा प्राप्त कर सकूंगा कि कहां और किस स्थान पर, किस प्रकार से भवन निर्माण किया जा सके। आप जिस क्षेत्र में भी भूमि क्रय करने का आदेश देंगे, हम उसी क्षेत्र में चाहे जैसे भी हो यह संभव करके दिखाएंगे ही और ऐसा इस वर्ष के समाप्त होने के पहले सम्पन्न कर देंगे। यही मेरा मानस है, यही मेरा चिंतन है।**

मैंने अपने नगर और समीपवर्ती नगरों में निरन्तर यात्राएं करके सभी शिष्यों की भावनाओं को पत्रों के माध्यम से एकत्रित करना भी प्रारम्भ कर दिया है और अश्रुपूरित नेत्रों से लिखे गये उन पत्रों का विशाल संग्रह भी मैं अपने साथ लाने की आज्ञा चाहता हूं।

प्रभु आप हमें इस प्रकार छोड़कर मत जाइये, हमें एक अवसर और दीजिए कि हम अपनी पात्रता कुछ तो स्पष्ट कर सकें . . .

इति प्रणत

डॉ. श्यामल कुमार बनर्जी

यह मेरा पत्र नहीं हम सभी गुरुभाइयों, बहिनों और पाठकों की भी वाणी है, अतः आपमें से प्रत्येक एक पोस्टकार्ड पर गुरुदेव से रुकने का आग्रह करें और पोस्टकार्ड (लिफाफा या अन्तर्देशीय नहीं) आज ही प्रेषित करें, जोधपुर के पते पर -

पता - डॉ. नारायण दत्त श्रीमाली,
हाईकोर्ट कालोनी
जोधपुर - ३४२००१ (राज.)

चुम्बक चिकित्सा

चुम्बक चिकित्सा, एक्युपंक्चर चिकित्सा की सहयोगी चिकित्सा पद्धति के रूप में जिस प्रकार से हमारे देश में प्रचलित एवं प्रचारित हुई, उससे जन-मानस में इसकी छवि एक्यूपंक्चर पद्धति के समान ही विदेश में विकसित किसी पद्धति के रूप में बनी, जबकि चुम्बक द्वारा चिकित्सा के प्रमाण भारतीय शास्त्रों में अत्यंत प्राचीन काल से ही मिलने प्रारम्भ हो जाते हैं। **आयुर्वेद** एवं **चरक संहिता** में चुम्बक का प्रयोग करने का निर्देश एवं इसके गुणों का वर्णन मिलता है और अत्यंत प्राचीन काल से ही चुम्बक की गणना चौरासी रत्नों के मध्य किया जाना, इस बात का प्रमाण है कि हमारे देश में व्यक्ति इसकी विशेषताओं से अपरिचित नहीं थे। यूं भी भारतीय परम्पराओं में जिस प्रकार मृत प्राय व्यक्ति को भूमि पर लिटाकर उसके पांव दक्षिण दिशा की ओर कर दिए जाने का विधान है, वह सूचित करता है कि हमारे देश में जन सामान्य पृथ्वी में स्थित विशाल चुम्बक तथा इस मानव शरीर में भी छिपे हुए जीव चुम्बक के ज्ञान से वे अपरिचित नहीं थे। साथ ही उन्हें इस बात का भी बोध था कि दोनों चुम्बकों के मध्य परस्पर कोई सामन्जस्य भी होता है । मानव शरीर की रचना एक विशाल चुम्बक के समान ही मानी गई है, उसके शरीर के ऊपर के भाग को उत्तरी ध्रुव एवं नीचे के भाग को दक्षिणी ध्रुव माना गया है।

चुम्बक चिकित्सा पद्धति इस धारणा पर विकसित हुई कि रक्त में उपस्थित हिमोग्लोबीन नामक तत्व, जिसमें लाल रक्त कणों की संरचना होती है, वह वास्तव में लौह की संयुक्ति से गठित एक संरचना ही तो है, और लौह से गठित होने के कारण बाह्य रूप से चुम्बक के उचित प्रयोग द्वारा, रक्त की गति को नियंत्रित कर, उसे शरीर के विभिन्न अंगों में संचारित कर न केवल कोई अंग ही सबल किया जा सकता है वरन किसी अंग विशेष में उत्पन्न हो गयी व्याधि भी तो दूर की जा सकती है। **इसी पद्धति के समर्थकों का यह भी मानना है कि मानव शरीर एक प्रकार की विद्युत ऊर्जा से ही संचालित होता है, जिसके फलस्वरूप चुम्बकीय क्षेत्र की उत्पत्ति आंतरिक एवं बाह्य रूप से संभव होती है।** आंतरिक रूप से यही चुम्बक शक्ति स्थूल शरीर का संचालन करती है, जिसके क्रम भंग या असंतुलन से विभिन्न रोगों की उत्पत्ति हो जाती है। बाह्य रूप से यही शक्ति व्यक्तित्व का गठन करती है, जिसके प्रभाव से कोई व्यक्ति समाज में प्रत्येक को आकर्षित करने वाला होता है, तो कोई एकदम नीरस और चिड़चिड़ा।

> **क्या वास्तव में इस शरीर के अन्दर पृथ्वी या अन्य ग्रहों की भांति विशाल चुम्बक छिपा है? क्या रहस्य है इनका . . .**
>
> **कैसे प्राप्त किया जाए अपने जीवन में अतिरिक्त चुम्बकत्व . . .?**

शोध के विशेष क्रम में ही चुम्बक के दोनों सिरों अर्थात उत्तरी ध्रुव एवं दक्षिणी ध्रुव से संबंधित उपचारों को अलग - अलग श्रेणी बद्ध भी किया है। इसी पद्धति के अनुसार जहां दक्षिणी ध्रुव के स्पर्श से मस्तिष्क संबंधी रोग, हृदय रोग, अनिद्रा एवं अवसाद की स्थितियों का सफलता पूर्वक इलाज किया जाता है, वहीं उत्तरी ध्रुव के स्पर्श से गठिया, उदर संबंधी रोग, रक्त चाप जैसी बीमारियों का इलाज किया जाता है। चुम्बक चिकित्सा में योग्य व अनुभवी चिकित्सक ही निर्धारित कर सकता है कि किस शक्ति के चुम्बक का प्रयोग कितने दबाव के साथ किस प्रकार से करना है। रोगों की प्रकृति एवं अंग विशेष की कोमलता को समझते हुए, चुम्बक का निर्धारण संभव होता है। जहां कोमल अंगों के लिए सिरेमिक चुम्बक के प्रयोग की सलाह दी जाती है, वहीं पैरों के दर्द में विद्युत चुम्बक जैसे तीव्र उपाय भी प्रयोग में लाए जाते हैं। कुछ दशाओं में चुम्बक पत्थरों की बेल्ट अथवा कड़े के रूप में निरंतर शरीर से स्पर्श बनाए रखने की भी सलाह दी जाती है, और आपने भी कई लोगों को देखा होगा जो अपने हाथ में कड़े के समान चुम्बकीय पत्थरों की लड़ी धारण किए रहते हैं। ऐसा वे रक्तचाप से पीड़ित होने के कारण करते हैं। **मंत्र शक्ति केन्द्र** द्वारा इसी क्रम में तैयार किया गया **'ज्योति चक्र'** भी एक ऐसा ही सफल उपाय है।

तंत्र चिकित्सा

केवल पद्धति ही नहीं अनुभूत प्रयोग . . . प्रख्यात तांत्रिक क्षेमानंद द्वारा चुनौती पूर्वक सफलता प्राप्त. . . कायाकल्प कर नव यौवन प्राप्त करने का . . .

मंत्र चिकित्सा के समान तंत्र चिकित्सा एक सुनिश्चित और विधिवत् विकसित की गई पद्धति है। मंत्र चिकित्सा जहां व्यक्ति के आन्तरिक शरीर को स्पर्श करती है, और सूक्ष्म शरीर में विद्यमान रोग के मूलभूत कारण पर कंपन के माध्यम से आघात करती है, और मनुष्य को स्वस्थ करती है, वहीं तंत्र चिकित्सा एक विधिवत् रूप में कार्य करती है और व्यक्ति को स्वास्थ्य प्रदान करती है। मंत्र चिकित्सा की ही भांति तंत्र चिकित्सा भी कोई उद्देश्य पूर्वक विकसित की गई विधि है जब तंत्र वेत्ताओं ने जीवन के प्रत्येक पक्ष को स्पर्श करना आरम्भ किया तो उसमें सहज रूप से स्वास्थ्य का प्रश्न आता ही है। तंत्र तो जीवन के किसी भी क्षेत्र को अछूता छोड़ता ही नहीं, **क्योंकि तंत्र का आधार ही है संयमित भोग। तंत्र निषेध का मार्ग प्रस्तुत ही नहीं करता, तंत्र तो यह स्पष्टता से और दृढ़ता से कहता हैं कि व्यक्ति के जीवन में उसका शरीर उसके साथ सदैव चलता रहता है,** और इस शरीर की सहज प्रवृत्ति होती है भोग में, जबकि त्याग एक कष्ट साध्य प्रक्रिया और एक प्रकार से शरीर पर बाध्यकारी प्रक्रिया है, जिसके कारण व्यक्ति का विकास अवरुद्ध भी हो सकता है, यही पंचमकार की धारणा है। संयमित साधक अपने गुरु के निर्देशन में इनका उचित ढंग से भोग कर धीरे - धीरे जानने लगता है कि वास्तविक सुख तो सर्वथा कुछ और होता हैं और फिर उसकी इनमें अरुचि हो जाती है। वह साधना के मार्ग में सहजता से और तीव्रता से गतिशील हो सकता है। तांत्रिक प्रक्रियाओं का आधार ही होता है -- 'शरीर', और जब तक शरीर स्वस्थ नहीं होगा तब तक क्या किसी सिद्धि की अपेक्षा की जा सकती है? इसी से तंत्र मार्ग में शरीर को स्वस्थ बनाये रखने के, निरोग बनाये रखने के अनेक उपाय प्रस्तुत किए गये।

तंत्र में जहां एक ओर शरीर की पुष्टि का ध्यान दिया गया, वहां मुख्य रूप से विषय बनाया गया **'कायाकल्प'** को एवं शरीर को निरंतर यौवनवान व वेगवान बनाये रखने के लिए। बिना वेगवान और तीव्र बने तांत्रिक साधनाएं संभव ही नहीं होती और **तंत्र ने कोई विशिष्ट चिकित्सा पद्धति विकसित करने की अपेक्षा सम्पूर्ण रूप से शरीर का कायाकल्प कर देना ही अधिक उपयोगी समझा।** तंत्र तो पूर्ण रूप से काल को वशीभूत करने की, काल को समाप्त करने की प्रक्रिया है। जिस काल के द्वारा व्यक्ति जर्जर और अशक्त हो जाता है, उस काल पर भी नियन्त्रण करने का उपाय है। तंत्र में देह विज्ञान को महाविज्ञान कहा गया है। देह को परमसाध्य माना गया है, लेकिन विकृति वश देह की सर्वोच्चता के स्थान पर देहसुख की प्रधानता हो गई है, जो कि इसके पतन का कारण बनी। तंत्र तो स्वयं में नवीन रचना कर देने का मार्ग है, जो कुछ साधारण प्रयासों से घटित न होता हो, उसको घटित कर देने की क्रिया है, जो कुछ असंभव हो उसे संभव कर दिखाने का उपाय है और केवल यही नहीं, तंत्र तो इस वर्तमान देह में एकदम नई देह रचित कर देने का दावा करता है, केवल दावा ही नहीं करता तंत्र विज्ञान में सचमुच एक से एक दुर्लभ, एक से एक विलक्षण प्रयोग छिपे भी हैं।

तंत्र की वास्तविक उपलब्धियां देखनी हों तो उनका अनुभव इस साधारण जीवन में तो नहीं किंतु सन्यासियों के मध्य अवश्य देखा जा सकता है। कई- कई दिन बिना खाए- पिये भी पूर्ण स्वस्थ बने रहना, बर्फीले पहाड़ों पर केवल एक वस्त्र धारण करके सुख पूर्वक रहना या एक दिन में ही बीस -बीस मील यात्रा कर लेना, उनके लिए बांए हाथ का खेल है और ऐसा ही हमें एक **प्रखर तांत्रिक स्वामी क्षेमानन्द जी** से परिचय करने का सुयोग मिला, जो वासुकी झील के पास वर्षों से साधनारत हैं और जिनका तंत्र के क्षेत्र में अत्यन्त सम्मान से नाम लिया जाता है। उनकी वास्तविक आयु कितनी है, इसका तो

कोई भी अन्दाज नहीं लगा पाता, लेकिन वे जिस प्रकार से वासुकी झील से केदारनाथ और केदारनाथ से गौरी कुण्ड तथा पुनः दोपहर होते - होते तक वापिस अपने साधना स्थान तक पहुंच जाते हैं, उसे देखकर दांतों तले उंगली दबा लेनी पड़ती है। दुबले- पतले कृशकाय और मृदु स्वभाव के स्वामी क्षेमानंद जी को देखकर कोई यह नहीं कह सकता कि वे एक प्रखर तांत्रिक हैं। वर्षों पूर्व वे इस क्षेत्र में दुर्लभ औषधियों की खोज करने के लिए आए थे किंतु वहीं उनकी भेंट **स्वामी प्रव्रज्यानंद जी** से हुई और तब उन्होंने जाना कि **आयुर्वेद की अपेक्षा तंत्र का मार्ग अधिक सुगम और अधिक सटीक है** और तब से स्वामी जी ने तंत्र के द्वारा रोगों के उपचार ढूंढने में ही अपने को संलग्न कर दिया। स्वामी क्षेमानंद जी का यह दावा है कि तंत्र के द्वारा ही व्यक्ति का पूर्ण कायाकल्प संभव हो सकता है। अन्य सभी उपाय उसको स्वस्थ करने में सहायक हो सकते हैं, लेकिन कायाकल्प करने में तंत्र से श्रेष्ठ कोई मार्ग ही नहीं है।

स्वाभाव से अत्यन्त संकोची स्वामी क्षेमानंद जी ने अपने द्वारा खोजे गए जिन उपायों को हमारे सामने स्पष्ट किया, उनमें तांत्रिक उपचार तो थे ही फिर भी उन्होंने जिस प्रयोग पर सर्वाधिक बल दिया उसे हम यहां प्रस्तुत कर रहे हैं--

कायाकल्प प्रयोग

यह साधना किसी भी रविवार से प्रारम्भ की जा सकती है। इस साधना में आवश्यक है कि जो व्यक्ति आन्तरिक रूप से किसी कमजोरी से ग्रस्त हो या अपने को निर्बल मानता हो, वह स्वयं ही इस साधना में बैठे, इस प्रयोग में कुछ विशेष यंत्रों की आवश्यकता पड़ती है लेकिन स्वामी जी के अनुसार उन विशेष यंत्रों से भी अधिक महत्व है उस तांत्रोक्त मंत्र का, जिसे उन्होंने अपने वर्षों की साधना के उपरान्त प्राप्त किया। इस विशेष मंत्र और संबंधित यंत्रों के समन्वय से ही जो तरंगें उत्पन्न होती हैं, वह व्यक्ति के शरीर को इस प्रकार से स्पर्श करती हैं कि उसमें आश्चर्यजनक और चमत्कारी परिवर्तन घटित होने लग जाते हैं **और यह आश्चर्यजनक परिवर्तन होना ही सही अर्थों में कायाकल्प है,** क्योंकि मंत्र चिकित्सा के विपरीत इस तांत्रिक चिकित्सा में तरंगें आन्तरिक रूप से न उत्पन्न होकर बाह्य रूप से ऊर्जा लहरियों के रूप में आकर व्यक्ति के शरीर को उसके अंग -प्रत्यंग को इस प्रकार से स्पर्श करती हैं, और पुष्ट करती हैं कि वह कुछ ही दिन के प्रयोग में

एक तंत्र ही तो है, यह शरीर भी. . .बहत्तर हजार नाड़ियों के तारों से गठा हुआ, फिर तो अनुकूल होगी ही तांत्रिक ढंग से आजमाई नई यह चिकित्सा पद्धति . . .

निर्बल से सबल बनने की ओर तीव्रता से अग्रसर हो जाता है। केवल यही नहीं, शरीर का जो अंग बेडौल हो, तुलनात्मक रूप से निर्बल हो, उसकी पुष्टि तथा सर्वांगीण विकास भी तंत्र के इस माध्यम से संभव हो जाता है। ज्यों एक कुशल डॉक्टर अपने हाथ में आपरेशन के औजार लेकर प्लास्टिक सर्जरी का काम कर देता है, वही कार्य तंत्र की इस पद्धति से, स्वामी क्षेमानंद जी के द्वारा खोजे गये इस उपाय से भलीभांति निरापद ढंग से सम्पन्न हो जाती है।

अपने सामने एक पात्र में जो कि तांबे का हो, ताम्रपत्र पर अंकित **कायाकल्प यंत्र** रखें तथा एक विशिष्ट **आरोग्य यंत्र** जो कि ताबीज के आकार का हो अथवा जिस रूप में आपके गुरुदेव अपनी प्राण ऊर्जा से संस्पर्शित करके प्रदान करें, उसे भी प्राप्त कर लें। आगे इसी यंत्र का निरन्तर व्यावहारिक प्रयोग होना है साथ ही **आरोग्य माला** की भी आवश्यकता रहती है। रविवार की प्रातः शुद्ध वस्त्र धारण कर उत्तर मुख हो कर बैठें तथा एक माला गुरु मंत्र जप कर, एक माला चेतना मंत्र का जप करें। तावीज रूप में प्राप्त यंत्र को एक तांबे के पात्र में डाल दें, जिसमें जल भरा हो तथा आरोग्य माला से निम्न विशिष्ट मंत्र की ११ माला मंत्र जप करें।

मंत्र -

ॐ ह्रीं तंत्रेश्वराय फट्

मंत्र जप के उपरान्त शेष पूजन सामग्री तो ज्यों का त्यों स्थापित रहने दें, केवल तांबे के पात्र में पड़े जल को कुछ तो पी लें और शेष अपने सारे शरीर पर लगा लें। जिस अंग में निर्बलता हो उस स्थान पर विशेष रूप से इस जल को लगाए। **यह कायाकल्प का सिद्ध प्रयोग है।** यह प्रयोग यद्यपि एक सप्ताह का है लेकिन साधक के लिए उचित होगा कि वह स्थायी परिवर्तन के लिए इसे कुछ और समय तक निरन्तर करता रहे। इसको सम्पन्न करने से शरीर में एक विशेष ऊर्जा तथा क्रियाशीलता का प्रादुर्भाव हो जाता है तथा ऐसा लगता है कि सारे शरीर के अणु- अणु चैतन्य हो गए हैं। यही इस प्रयोग की विशेषता है।

तांत्रिक चिकित्सा का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत है। यदि उचित ढंग से प्रयोग संपन्न किए जाएं तो कोई कारण ही नहीं कि प्रायः असाध्य समझी जाने वाली बीमारियों का भी स्थायी हल प्राप्त हो सके। **जो विद्या, जो पद्धति सम्पूर्ण रूप से शरीर को परिवर्तित कर देने की कला जानती हो, उसमें यदि शोध पूर्वक किसी रोग विशेष, अंग विशेष के लिए भी उपचार ढूंढे जाएं, तो कोई कारण ही नहीं कि वह प्राप्त न हो।**

''मन्त्राधीनाश्च देवता''. . . देवता बाध्य हो जाते हैं श्रेष्ठ और प्रामाणिक मंत्र घर्षण से . . . अपने साधक को उसकी मनोवांछित स्थिति देने के लिए . . . भारत की प्राचीन चिकित्सा शैली . . .

मंत्र शब्द का अर्थ ही होता है - **जो मनन करने पर त्राण करे।** मंत्र तो अपने आप में संसार के बन्धनों से मुक्त करने की एक क्रिया है, इस प्रकार यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि मंत्र स्वयं में निवारक प्रभावों को समाहित किए हुए, ध्वनि विज्ञान का एक विशिष्ट स्वरूप है, ज़िसमें ध्वनियों का इस प्रकार से संयोजन है जो मनुष्य को सहजता और सरलता प्रदान कर दे।

मंत्रों द्वारा चिकित्सा पद्धति --

यह सामान्य पद्धति, चिकित्सा विज्ञान की अपेक्षा अधिक गहन और कहीं अधिक वैज्ञानिक है, क्योंकि चिकित्सा विज्ञान जहां एक ओर केवल शरीर का स्पर्श कर उपचार प्रदान करता है, वहीं मंत्रोच्चार की पद्धति व्यक्ति के आन्तरिक शरीर को स्पर्श करती है। जो उसकी सूक्ष्म देह है, उसको जाकर कंपित करती है और यह तो एक सहज तथ्य है कि रोग, शोक व्यक्ति के अन्दर से ही उपजते हैं, इनकी जड़ें इस शरीर से भी अधिक मन में और सूक्ष्म शरीर में होती हैं, जिनको स्पर्श करने का निश्चित उपाय किसी अन्य चिकित्सा पद्धति के पास संभव ही नहीं। मंत्र विज्ञान तो स्वयं में समृद्ध और सशक्त विज्ञान है। उदाहरण के लिए महामृत्यंजय विधान एक ऐसा सिद्धिप्रद और चमत्कारी विधान है, मंत्र शक्ति का एक ऐसा जीता - जागता उदाहरण है, जिसके द्वारा तो आसानी से मृत्यु को भी परे धकेला जा सकता है।

दैनिक जीवन पद्धति में गृहस्थ साधक जटिल और लम्बे तांत्रिक विधानों की अपेक्षा यदि मंत्र विज्ञान को अपने दैनिक जीवन - क्रम में स्थान देता है तो अधिक लाभप्रद होता है। मंत्र मूलतः उपासनात्मक और भक्ति प्रधान होते हैं, जो गृहस्थ जीवन पद्धति के अधिक अनुकूल रहते हैं। भाव प्रधान मनः स्थिति के साथ निश्चित मंत्र का उच्चारण करना जीवन में प्रत्येक दृष्टि से अनुकूल रहता है और इन्हीं मंत्रों को जब हम चिकित्सा पद्धति के रूप में प्रयोग करें, तब कुछ सावधानियां अपेक्षित हो जाती हैं। उचित ढंग से आसन, वस्त्र, दिशा जैसे नियमों की परिपालना नितान्त आवश्यक हो जाता है, क्योंकि मंत्र जप के द्वारा वर्णाक्षरों के घर्षण से जो ऊर्जा उत्पन्न होती है, जो तरंगें अन्तर में विस्फोट के रूप में उत्पन्न होती हैं, वे ऊर्जा की लहरियां इस शरीर से फिर ईथर के माध्यम से विस्तृत होती हुई सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में फैलती ही हैं, और इस प्रकार विस्तृत होते हुए वे उस देवी या देवता को भी स्पर्श करती हैं, जिससे संबंधित होती हैं। वह देवी या देवता उस प्रार्थना के स्वरों को, मंत्र जप की उन तंरगों को अपनी तेजस्विता, अपना बल, अपना आशीर्वाद देकर पुनः सबल कर परावर्तित कर देते हैं, उस साधक के पास, जिसके माध्यम से वे उत्पन्न हुई हैं, और उनके इस परावर्तन से साधक को मिल जाती है जीवन में वे सभी स्थितियां जिसकी उसने कामना की हो, अथवा न भी की हो। महत्व इस बात का नहीं होता कि साधक ने क्या प्रार्थना की है, महत्व इस बात का है कि क्या उसका स्वर उस देवी या देवता के पुंज को स्पर्श कर सका है। **देव वर्ग जब प्रदान करता है तो उसमें कोई लेन - देन जैसी बात नहीं होती, उनके प्रदान करने में सम्पूर्णता होती है और यही सम्पूर्णता व्यक्ति को उस वर्ग की तेजस्विता , बल आदि प्रदान कर ही जाता है।** अनुभव से तो यहां तक देखा गया है कि जब कोई व्यक्ति जिस देवता विशेष की साधना करता है तो धीरे - धीरे उसका

स्वरूप भी उस देवता के सदृश्य हो जाता है। यह कैसे संभव होता है? इसका सीधा सा उत्तर है 'मंत्र के बल' से, यहीं पर एक प्रश्न यह भी उठ सकता है कि क्या प्रार्थना के माध्यम से और स्तोत्र - पाठ के माध्यम से व्यक्ति जीवन में ऐसी दशाएं प्राप्त नहीं कर लेता? यहां पर हम इस बात का विस्तृत विवेचन करने की अपेक्षा इतना ही कहना चाहेंगे कि स्तोत्र भी मंत्र स्वरूप ही होते हैं।

मंत्र जप का विधान अत्यन्त सरल होते हुए भी अत्यन्त कठिन है। मंत्र जप के प्रभाव से जो ऊर्जा रश्मियां उत्पन्न होती हैं, वे एक चुम्बकीय क्षेत्र का सृजन करती हैं, जिसकी पूर्णता के लिए दिशा का ज्ञान, वस्त्र का रंग सभी कुछ महत्वपूर्ण होता है, लेकिन यह नितान्त सत्य है कि यदि व्यक्ति को श्रेष्ठ मंत्र और प्रामाणिक विधान प्राप्त हो जाए, तो वह कुछ भी घटित कर सकता है।

मंत्र जप का जहां पूर्णरूप से विवेचन हुआ और जिसकी सरलतम ढंग से प्रस्तुति सर्वसाधारण के लिए की गई, वहां **गुरु गोरखनाथ** एवं उनकी परम्परा में अन्य नाथ योगियों द्वारा रचे गये मंत्रों की प्रामाणिकता निःसन्देह खरी और सत्य है। वास्तव में मंत्रों द्वारा चिकित्सा का जितना अधिक विस्तृत और प्रामाणिक विवरण नाथ सम्प्रदाय द्वारा रचित साबर मंत्रों में मिलता है, उतना तो अन्यत्र शायद ही मिले। **छोटी से छोटी समस्या हो अथवा जीवन की बड़ी से बड़ी बीमारी , उनके उपचार साबर मंत्रों में बखूबी मिलते हैं।** इन मंत्रों की रचना इस प्रकार से और सरलतम ढंग से की गई है कि कोई भी साधारण पढ़ा - लिखा आदमी उनका उच्चारण सहज ही कर सकता है। अटपटे उट-पटांग शब्द विन्यास और विचित्र सी लगती उनकी भाषा में ऐसे तथ्य छुपे होते हैं, जो किसी भी दैहिक समस्या का सरलता से निदान दे सकते हैं।

साबर मंत्रों के साथ यह कठिनाई भी नहीं होती कि उन्हें उच्चारण की सही विधि समझ कर ही प्रयोग में लाया जाए और न उनके साथ लम्बे- चौड़े जटिल विधान होते हैं, किंतु साधक के मन में उनके प्रति एक विश्वास और श्रद्धा होनी आवश्यक होती है।

यों तो साबर ग्रंथों में अनेक प्रकार के प्रयोग दिए गए हैं, लेकिन मैं उनमें से चुनकर दो प्रयोग ही स्पष्ट कर रहा हूं। **ये प्रयोग हैं – पेट संबंधी रोग निवारण हेतु तथा आधा सिर दर्द निवारण के लिए,** क्योंकि ये दो व्याधियां ऐसी हैं, जिसका सामान्य पद्धति से उपचार प्रायः संभव नहीं हो पाता ।

. . . और फिर साबर मंत्र, अचूक रोग निवारण की शक्ति अपने में छिपाए हुए. . . कैसा भी असाध्य रोग क्यों न हो।

पेट संबंधी रोग निवारण हेतु ---

इस प्रयोग को किसी भी मंगलवार अथवा शनिवार की रात्रि में साढ़े दस बजे के पश्चात् ही प्रारम्भ करें। वस्त्र काले हों तथा शुद्ध और साफ हों, दक्षिण दिशा हो, इस प्रयोग में तेल का दीपक जलते रहना आवश्यक है। काले तिलों की ढेरी पर कापालिक तंत्र से सिद्ध **कापालिक ताबीज** रखें तथा उस पर एक पुष्प चढ़ाएं। आपकी जैसी भी समस्या हो, उसे कागज पर लिख कर सामने रखें तथा **काली हकीक माला** से निम्न मंत्र का २१ दिनों तक एक माला नित्य जप करें।

मंत्र –

पेट व्यथा पेट व्यथा तुम हो बलबीर। तेरे दर्द से पशु मनुष्य नहीं स्थिर। पेट पीर लेवों पल में निकार। दो फेंक सात समुद्र पार। आज्ञा कामरु कामाक्षा माई। आज्ञा हाड़ी दासी चण्डी की दुहाई।

मंत्र जप के बाद इस ताबीज को पेट पर फिराएं तथा २१ दिनों के प्रयोग के बाद तक, जब तक पूर्ण रूप से स्वस्थ अनुभव न करने लगे तब तक इस कापालिक ताबीज को बांह पर काले धागे में बांध कर धारण करें।

आधा सिर दर्द निवारण हेतु --

इस रोग की व्यथा तो वही जानते हैं जो इसके भुक्त भोगी हैं, और दर्द निवारक गोलियों के क्षणिक आराम के अलावा इसका कोई भी स्थाई निदान संभव ही नहीं है, लेकिन साबर मंत्र इसी असंभव को संभव कर देता है। इस साधना में भी एक **कापालिक ताबीज** एवं **काली हकीक माला** की आवश्यकता पड़ती है, शेष सभी विधि - विधान पिछले प्रयोग की तरह ही हैं। इसमें भी निम्न मंत्र की एक माला मंत्र जप पर्याप्त होता है तथा २१ दिनों का प्रयोग पूर्ण माना गया है।

मंत्र --

ॐ कामर देश कामाक्षा देवी, तहां बसै इस्माइल योगी, इस्माइल योगी के तीन पुत्र एक रौले, एक पक्षौले, एक ताप तिजारी इकतरा मधवा आधा शीशी टोरे, उतरे तो उतारौ, चढ़े तो मारो, न उतारे तो गगुरूंड मोर हंकारौ। सबद सांचा पिंड कांचा। फुरो मंत्र ईश्वरोवाचा।

मंत्र जप के उपरान्त ताबीज को सिर पर फिराएं तथा इसे तब तक बांधे रखें, जब तक पूर्ण स्वस्थ न अनुभव करने लग जाएं।

ये मंत्र द्वारा चिकित्सा क्षेत्र में साबर मंत्रों के दो छोटे से उदाहरण मात्र हैं।

रत्न चिकित्सा

उंगलियों पर झिलमिलाते बेशक कीमती नग . . . लेकिन क्या आपका रत्न 'नवद्युति मंत्रों' से सिद्ध है . . .

प्रत्येक भारतीय, भले ही वह किसी भी मत का अनुयायी हो, उसकी भारतीय विद्याओं के अन्य पक्षों में रुचि हो अथवा न हो, लेकिन अपने अनुकूल रत्न ज्ञात कर उसे धारण करने की इच्छा मन में रहती ही है, और भारत के संदर्भ में यह कोई आश्चर्य- जनक बात भी नहीं है, क्योंकि प्रत्येक भारतीय परम्परा से आभूषण प्रिय होता ही है। रत्न जहां एक ओर सौन्दर्य वृद्धि के कारक होते हैं वहीं वे सौभाग्य निर्मित करने और अनिष्ट को टालने के सरलतम उपाय भी तो होते हैं और **यही कारण है कि ज्योतिष विद्या और इसकी सहयोगी विद्या रत्न विज्ञान की लोकप्रियता समाज में अभी भी बनी हुई है।** वास्तव में तो रत्न विज्ञान एक पूर्ण शास्त्र का रूप ले चुका है। हमारे मनीषियों और ज्योतिर्विदों ने ग्रह - नक्षत्रों का अध्ययन करते समय " यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे " के चिन्तन से जब किसी ग्रह विशेष का प्रतिरूप इस धरती पर भी खोजना चाहा तब उन्होंने रत्नों की विशेषता का वर्णन यत्र - तत्र सूत्रों के रूप में दिया और इन्हीं सूत्रों को एकत्र कर फिर सरलता से रचा जा सकता है 'रत्न चिकित्सा पद्धति' का उपाय मानव शरीर में। रत्न भी एक प्रकार से किसी ग्रह विशेष की प्रतिकृति होते ही हैं। मानव शरीर में जिस ग्रह की न्यूनता हो, उसकी पूर्ति करते ये रत्न।

ग्रहों के प्रभाव से ही व्यक्ति के शरीर में उत्पन्न होते हैं-- विभिन्न रोग, जहां उसके शरीर में किसी एक विशेष ग्रह के कारण कोई रोग उत्पन्न हो रहा हो फिर वहां उस ग्रह से संबंधित रत्न धारण करना ही एक मात्र उपचार शेष रह जाता है। प्रत्येक ग्रह किसी न किसी अंग विशेष और व्याधि विशेष से संबंधित रहता है उसी के पूरक रूप में रत्न उस रोग के निवारण की क्षमता रखता है। प्रकृति की इस विराट संरचना में कारण और उपचार के समन्वय का उदाहरण है रत्नों का यह संसार। रत्न अपने -आप में चौरासी प्रकार के बताए गये हैं लेकिन **मानव जीवन को प्रभावित करने वाले नौ ग्रहों से संबंधित नवरत्न ही विशेष महत्व पूर्ण हैं।**

रत्न चिकित्सा पद्धति के अन्तर्गत कई उपाय प्रयोग में लाये जाते हैं। कुछ विद्वान रत्नों का भस्म बनाकर उनको सेवन करने की सलाह देते हैं लेकिन यह उपाय कष्ट साध्य होने के साथ - साथ प्रयोग के ढंग में भी जटिल है अतः व्यावहारिक नहीं कहा जा सकता। दूसरा उपाय रोग विशेष में रत्न अंगूठी में धारण करना है, जिससे उसके स्पर्श से शरीर में तत्संबंधी ग्रह का प्रभाव आ सके और व्यक्ति स्वस्थ हो सके। व्यक्ति के **अनुकूल उचित रत्नों का निर्धारण करना सरल कार्य नहीं है। सामान्य तौर पर व्यक्ति अपने लग्न के स्वामी से सम्बन्धित रत्न धारण कर सकता है लेकिन जहां रोग की बात है और जहां रत्न चिकित्सा पद्धति का प्रश्न है, वहां केवल यही उपाय पर्याप्त नहीं होता।** कुछ रत्न जो अपने प्रभाव में सौम्य होते हैं, उनको बिना किसी विशेष निर्धारण के धारण किया जा सकता है। मानसिक शांति और हिस्टीरिया आदि रोगों में **'मोती'** , ज्ञान, बुद्धि एवं धार्मिक विचारों के प्रभाव को बढ़ाने के लिए **'पुखराज'** का प्रयोग बिना किसी विचार विमर्श के किया जा सकता है। जिस लड़की का विवाह न हो रहा हो उसके लिए पुखराज शीघ्र वरदायक होता है और सौभाग्यवती स्त्री भी पुखराज धारण करती है तो वह उसके पति एवं गृहस्थ जीवन के लिए सभी प्रकार से वृद्धि कारक होता है मैनें वर्षों तक रत्न विज्ञान में शोध करने के बाद रोग निवारण का एक अचूक उपाय प्राप्त किया है यह प्रयोग **'मूंगा'** रत्न पर किया जाता है। तीन रत्ती का **इटेलियन मूंगा** लेकर **नवद्युति मंत्रों** से सिद्ध कर मंगलवार को तांबे अथवा चांदी के पात्र में रख शुद्ध जल से धोकर एवं पोंछ कर कुंकुंम लगा कर निम्न मंत्र की ११ माला जप करना चाहिए-

मंत्र -

ॐ विरुपाक्ष विलासनी आगच्छ आगच्छ ह्रीं प्रिया में भव प्रिया में भव क्लीं स्वाहा।

यह ११ दिन का प्रयोग है, ग्यारहवें दिन सिद्ध मूंगे को चांदी अथवा सोने में जड़वा कर पहनने से व्यक्ति को नवरत्नों का संयुक्त प्रभाव मिलना प्रारम्भ हो जाता है, फिर भले ही उसकी राशि के अनुकूल मूंगा रत्न हो अथवा न हो।

होम्योपैथिक चिकित्सा

अपने उद्भव से लेकर आज तक विवादास्पद रही एक श्रेष्ठ चिकित्सा पद्धति, जिसके प्रबल समर्थक हैं तो प्रबल आलोचक भी, किंतु . . .

अपने उद्भव से लेकर आज तक विवादास्पद, किंतु लोकप्रिय चिकित्सा पद्धति का ही नाम है -- **'होम्योपैथिक पद्धति।'** जहां एक ओर इस पद्धति के अनन्य भक्त मिलते हैं, वहीं कटु आलोचक भी और सर्वथा विरोधाभासों के बीच ही तो जन्मी है यह अनूठी चिकित्सा पद्धति। एलोपैथी में उच्च- शिक्षा प्राप्त **हैनीमेन** ने अपने द्वारा प्रयुक्त किये जा रहे उपचारों में यह त्रुटि पाये जाने पर कि इसमें तो रोग बार - बार उभर आता है, एक नई पद्धति की खोज की, जिसके सभी परीक्षण उन्होंने अपने ही शरीर पर किये और उनके सराहनीय प्रयासों की परिणति ही आगे जाकर होम्योपैथी के रूप में विख्यात हुई। लेकिन साथ ही साथ ऐसी विवादास्पद भी कि डॉक्टर हैनीमेन को अपना देश जर्मनी छोड़कर फ्रांस जाना पड़ा।

डॉक्टर हैनीमेन, जो अपने आप में इतनी सम्पूर्ण चिकित्सा पद्धति का सृजन कर गये जिसमें कालान्तर में न तो कुछ अधिक वृद्धि की जा सकी और न जिसका कोई अंश व्यर्थ घोषित किया जा सका, उसका सूत्र है कि 'विष ही विष की समाप्ति का कारण' बन सकता है। ऐसा वास्तव में डॉ. हैनीमेन कोई उपचार न देकर व्यक्ति के रोग से संबंधित विष की ही भली - भांति पहचान कर उसकी ऐसी अल्पमात्रा शरीर में प्रविष्ट करा देते थे कि व्यक्ति के अन्दर प्रतिरोधक क्षमता गठित हो, इसके लिए डॉ. हैनीमेन ने दवाइयों या विभिन्न पौधों और पुष्पों के रस को जिसे होम्योपैथी की भाषा में **मदर टिंचर** की संज्ञा दी जाती है, शक्ति - कृत करने की विधि ढूंढी, और अल्कोहल में तैयार की गई इस मदर टिंचर को दूध से प्राप्त चीनी की गोलियों में सुरक्षित रखने की विधि भी खोजी गई। डॉ. हैनीमेन ने जिस प्रकार से औषधियों को शक्ति-कृत करने की पद्धति विकसित की उसे उन्होंने **स्केल** की संज्ञा दी। इसमें दो स्केल मुख्य हैं प्रथम तो जिसमें दवा के मूल अर्क व अल्कोहल का अनुपात १ : १० रखा और इसे डेसीमल स्केल कहा, इसे ही होम्योपैथी चिकित्सक **X** चिन्ह से प्रकट करते हैं। सेन्टीस्मल स्केल में यही अनुपात १ : १०० होता है, जो चिकित्सक **C** से प्रदर्शित करते हैं। अत्यन्त विस्तृत शोध किया डॉ. हैनीमेन ने इस पद्धति के निर्धारण में और जिस प्रकार से उन्होंने मानव जीवन की विभिन्न विसंगतियों और व्यवहारों का सूक्ष्मता से अवलोकन किया -- चेहरे की बनावट, सोने के ढंग, चलने के ढंग, विभिन्न आदतों, मानसिक विकृतियों , चिंतन के विभिन्न ढंगों एवं पारिवारिक इतिहास पर सूक्ष्मता से ध्यान देकर एक ही रोग के लिए अलग - अलग औषधियों का निर्माण किया, उससे उनकी विलक्षणता पर हतप्रभ रह जाना पड़ता है। उनकी सूक्ष्म दृष्टि और परिपक्व शोध स्पष्ट होती है उनकी विश्वविख्यात पुस्तक **''आर्गेनन ऑफ द रेशनल आर्ट ऑफ हीलिंग''** पुस्तक में। सचमुच डॉ. हैनीमेन की यह पुस्तक और उनका व्यक्तित्व उन्हें सामान्य से कहीं ऊंचे की श्रेणी में ले जाकर स्थापित कर चुका है।

मानव जीवन से संबंधित सैकड़ों रोगों में से शायद ही कोई रोग डॉ. हैनीमेन की सूक्ष्म दृष्टि से बचा हो। स्नायु- मण्डल से संबंधी रोगों, त्वचा रोगों, मानसिक दौर्बल्य एवं स्त्री रोगों के सन्दर्भ में तो होम्योपैथिक औषधियों की तो कोई तुलना ही नहीं, ऐसी ही एक विलक्षण औषधि है **''एनाकार्डियम ''** जो स्नायविक तनाव अथवा मानसिक तनाव के रोगियों के लिए अचूक औषधि है। विशेषकर ऐसे रोगियों के लिए जिन्हें अनेक प्रकार के मानसिक विभ्रम होते हों अथवा अनायास भय सताता हो। स्नायु दौर्बल्य के कारण सहवास सुख का पूरी तरह अनुभव न कर पाने वाले रोगियों एवं शीघ्र पतन की दशाओं में **सेलेनियम** का प्रयोग पूर्ण सफलतादायक रहता है। **पल्साटिल्ला** स्त्री रोगों की सफल औषधि होने के साथ - साथ मुहांसों का अचूक इलाज है। इसी प्रकार **काली फास्फोरिकम , काली म्यूरोटिकम, सल्फर, थूजा, आर्निका** ऐसी कई औषधियां है जिनकी उपादेयता सार्वजनिक रूप से स्वीकार की जाने लगी है, तथा बारह बायो - केमीकल औषधियां अब प्रचुरता से प्रयोग की जाने लगी हैं। कुछ एक औषधियां तो केवल होम्योपैथी की सीमाओं में न बंधकर व्यवसायिक रूप से उत्पादित एवं ग्राह्य हो गई हैं।
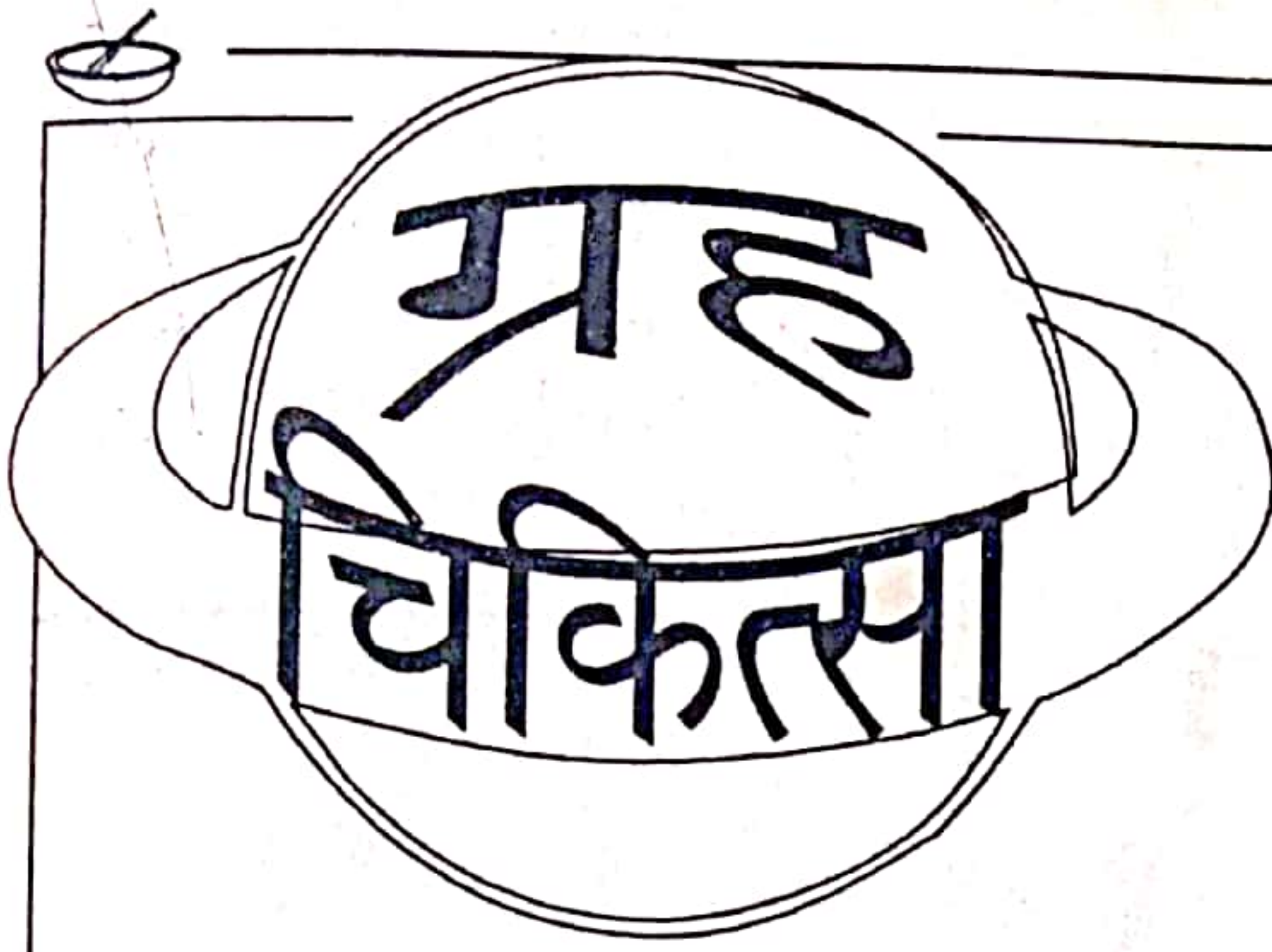
नौ ग्रह, नौ राशियां, सत्ताईस नक्षत्र और इसी शरीर में समाया सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड . . . 'यत् पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे' किन्तु सरल समाधान केवल एक विधान द्वारा . . .

ज्योतिष का सिद्धान्त अपने - आप में अत्यन्त गहन होते हुए भी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को इस प्रकार से व्याख्यित करता है कि हमें अपने प्राचीन ऋषियों की सूक्ष्मता, विशाल दृष्टि के प्रति नतमस्तक हो ही जाना पड़ता है। जहां एक ओर उन्होंने ज्योतिष के माध्यम से स्पष्ट किया कि किस प्रकार से यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड इसी लघु काया के अन्दर ही समाहित है, वहीं उन्होंने ज्योतिष के माध्यम से जीवन में आने वाली समस्याओं का भी निराकरण प्रस्तुत किया। ज्योतिष शास्त्र मानव शरीर में होने वाले प्रत्येक रोगों का विवेचन पूर्णता से करता ही है। मानव शरीर में ही सभी ग्रह, नक्षत्र, राशि एवं लोक इत्यादि स्थित हैं, और ग्रह चिकित्सा को पूर्ण रूप से समझने के पूर्व यह जान लेना रोचक होगा कि शरीर के किस अंग में कौन सा ग्रह, राशि, नक्षत्र स्थित है। इस प्रकार इनके समन्वित प्रभाव से शरीर के विभिन्न अंगों में उत्पन्न होने वाले रोगों को भी जाना जा सकता है, शरीर की क्रियाओं को तीव्रमान भी किया जा सकता है, उदाहरण स्वरूप सूर्य की स्थिति नाभि चक्र में, चन्द्रमा बिन्दु चक्र में, मंगल नेत्र में, बुध हृदय में, गुरु उदर में, शुक्र वीर्य में, शनि नाभि में, राहु मुख में एवं केतु का स्थान दोनों हाथ एवं पैरों में, ज्योतिष शास्त्र के अनुसार माना गया है। इसी प्रकार सभी १२ राशियों एवं नक्षत्रों की भी शरीर में स्थिति निर्धारित की गई है। गोचर में जब वह ग्रह नक्षत्र अपना प्रभाव दिखाते हैं तो शरीर के उस अंग विशेष पर प्रभाव पड़ता ही है।

वस्तुतः ग्रहों के सम्बन्ध में यदि विस्तार से विवेचन करें तो यह इतना जटिल विधान है कि सामान्यतः कुछ एक पन्नों में वर्णित किया ही नहीं जा सकता, **लेकिन व्यक्ति अपने जीवन के प्रत्येक क्षण में किसी न किसी ग्रह से ग्रसित अथवा न्यूनाधिक रूप से पीड़ित होता ही है और फिर वह निर्णय नहीं कर पाता कि वह किस ग्रह की शांति करे अथवा किस ग्रह की उपासना करे, अपने आप को निरोग करे और फिर ऐसे में ज्योतिषियों के पास चक्कर काटने की बाध्यता हो जाती है। इसका एक सरल उपाय तांत्रोक्त नव ग्रह निवारण प्रयोग है,** जिसके द्वारा व्यक्ति, नवग्रहों की संयुक्त पूजन कर अपने जीवन में सम्पूर्ण रूप से अनुकूलता प्राप्त कर सकता है और उसे एक - एक ग्रह की अलग - अलग पूजा विधान समझने की आवश्यकता नहीं रहती।

तांत्रोक्त नव ग्रह पूजन --

यह प्रयोग अत्यन्त सरल है अपने सामने एक तांबे के पात्र में मंत्र सिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त **तांत्रोक्त नवग्रह यंत्र** स्थापित करें और उसका पूजन केवल सिन्दूर , सरसों, काली मिर्च तथा तिल से ही करें। यह नवग्रह कवच का तांत्रोक्त पाठ विशेष रक्षा कारक सर्वोत्तम विधान है। नित्य ११ बार तांत्रोक्त ढंग से सिद्ध नवग्रह महायंत्र के आगे इसका जप करने मात्र से समस्त ग्रहदोष दूर हो जाते हैं।

विनियोग -

ॐ अस्य जगन्मंगल-कारक ग्रह - कवचस्य श्री भैरव ऋषिः। अनुष्टुप छन्दः। श्री सूर्यादि-ग्रहाः देवताः। सर्व-कामार्थ-संसिद्धयै पठै विनियोगः।

तांत्रोक्त नवग्रह कवच -

ॐ ह्रीं ह्रीं सौः में शिरः पातु श्रीसूर्य ग्रह - पतिः। ॐ घौं सौं औं मे मुखं पातु श्री चन्द्रो ग्रहराजकः। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रां सः करौ पातु ग्रह-सेनापतिः कुजः। पायादथ ॐ ह्रौं ह्रौं सः पादौज्ञो नृपबालकः । ॐ त्रौं त्रौं त्रौं सः कटिं पातु पातुपायादमर - पूजितः ॐ ह्रौं ह्रीं सौः दैत्य - पूज्यो हृदयं परिरक्षतु। ॐ शौं शौं सः पातु नाभिं में ग्रह- प्रेष्यं शनैश्चरः। ॐ छौं छौं सः कण्ठ देशं श्री राहुदेव मर्दकः। ॐ फौं फां फौं सः शिखो पातु सर्वांगमभितोवतु। ग्रहाश्तचैते भोग देहा नित्यास्तु स्फुटित- ग्रहाः। एतदशांश - सम्भूताः पान्तु नित्यं तु दुर्जनात्। अक्षयं कवचं पुण्यं सूर्यादि-ग्रह-देवतम्। पठेद् वा पाठ्येद् वापि धारयेद् यो जनः शुचिः। स सिद्धिं प्राप्युयादिष्टां दुर्लभां त्रिदशैसतु याम्। तव स्नेहवशादुक्तं जगन्मंगल कारकम् ग्रहयन्त्रान्वितंकृत्वाभीष्टमक्षयमाप्नुयात।।

उपरोक्त नवग्रह कवच का पाठ करने से दारिद्रय दूर होता है, अशुभ ग्रहों की बाधा शांत होने से शुभ ग्रह अपना प्रभाव देते हैं, जिससे विपत्तियों का नाश होता है, और समस्त सुखों की प्राप्ति होती है।

आ न एतु मनः पुनः क्रत्वे दक्षाय जीवसे। ज्योक् च सूर्यं दृशे।।

- यजुर्वेद ३/५४

''यज्ञानुष्ठान के लिए, कर्म में उत्साह के लिए, दीर्घ जीवन के लिए तथा चिरकाल तक सूर्य दर्शन करते रहने के लिए हमारा मन हमें प्राप्त हो।''

हिन्दु धर्म के पवित्र चार वेदों में से एक यजुर्वेद सम्पूर्ण रूप से कर्मकाण्ड एवं यज्ञ की पद्धति पर ही तो आधारित है, और यज्ञ तथा मानव के मध्य की एक रूपता के प्रतिष्ठापन की ही काव्यात्मक अभिव्यंजना है। यजुर्वेद में संग्रहित ऋचाएं केवल स्तुति - परक, काव्यात्मक व्यंजनाएं ही नहीं, जीवन की वे गुह्य सूत्र हैं-- जिनमें छिपा है सुदीर्घ, स्वस्थ व आह्लाद युक्त जीवन का रहस्य। यह अनायास ही नहीं है कि आर्यों ने जिस पद्धति को अपने जीवन में स्थान दिया, वही उनके ओजस्वी, बलिष्ठ शरीर तथा प्रखर चिंतन का आधार बनी। **यज्ञ एक चिकित्सा पद्धति से भी अधिक जीवन की एक शैली है, सौन्दर्य, बल, तेज, निरोग शरीर प्रदान करने के मुख्य कारक देवताओं से संबंध स्थापित करने की क्रिया है।** अग्नि की लपटों के माध्यम से उनका स्पर्श कर लेने की क्रिया है तथा हवि प्रदान कर अपना वांच्छित प्राप्त कर लेने का सफल प्रयास है। किंतु यह कोई लेन- देन नहीं है वरन मानव के चरित्र में यज्ञ के माध्यम से आयी उदात्त भावनाओं के फलस्वरूप उसकी देव वर्ग से विकसित आत्मीयता एवं एकात्मकता की क्रिया है। **'' देहि मे ददामि ते नि मे धेहि नित दधे''** -- हे यजमान! तुम मुझ इन्द्र के लिए हवि दो, मैं तुझ यजमान को धनादि दूंगा। यह स्पष्ट घोषणा है यज्ञ के संदर्भ में। यज्ञ की पवित्र धूम्र रश्मियों द्वारा जिस अलौकिक वातावरण की सृष्टि होती है, वही आधार होता है किसी भी परिवार में सुख - समृद्धि एवं श्री का। केवल यज्ञ कर्त्ता के ही नहीं वरन सम्पूर्ण परिवार के उन्नति का रहस्य यज्ञ पद्धति में निहित होता है। विशिष्ट मंत्रों के माध्यम से, उनके सस्वर उच्चारण से, सुगंधित द्रव्यों की अग्नि में आहुति से जब एक अलौकिक वातावरण बन जाता है, तब सारा तन - मन दिव्य अनुभूतियों से कंपित हो जाता है और स्वतः ही मन में उत्पन्न होती है ऐसी तरंगें जो व्यक्ति के स्वस्थ शरीर और मन का आधार बने। देवराज इन्द्र का स्वरूप सर्वाधिक सुन्दर एवं तेजस्वी होने के कारण विशेष रूप से उन्हीं के लिए यज्ञ की पद्धतियों का विवरण मिलता है, लेकिन यज्ञ पद्धति किसी भी देवी या देवता के संदर्भ में पूर्ण लाभकारी रहती है।

आज के प्रदूषित युग में जहां वातावरण एवं विचारों दोनों में ही प्रदूषण व्याप्त हो गया है, फिर उसमें निरोग रहने का कोई उपाय है तो केवल यज्ञ। दैनिक यज्ञ के माध्यम से व्यक्ति इन दोनों प्रकार के कलुषों का निराकरण कर सकता है। जिनकी धर्म - कर्म में थोड़ी भी रुचि हो उन्हें तो यज्ञ अपने दैनिक जीवन का, दैनिक साधना का अभिन्न अंग बना लेना चाहिए। तांबे के एक छोटे पात्र में आम की लकड़ियों को जिन्हें **'समिधा'** कहा जाता है रख कर, उनमें केवल शुद्ध घी,जौ, तिल, अक्षत एवं सुगन्धित हवन सामग्री के साथ, नित्य प्रति एक माला गायत्री मंत्र से अथवा प्रत्येक सदस्य द्वारा केवल ११ आहुतियां गायत्री मंत्र से देने पर भी घर में शुद्ध वातावरण का निर्माण होता है। इस प्रकार सामूहिक रूप में करने पर परिवार में आपसी मेल -मिलाप बढ़ता है, तथा **यज्ञ क. पवित्र धूम्र नासिकाओं के माध्यम से श्वास - प्रश्वास के द्वारा व्यक्ति के शरीर में भीतर जाकर, उसे पवित्रता तो देती ही है, साथ ही अनेक रोगों का निराकरण तथा सबलता भी देती है, जिससे शरीर पर खिल उठता है ऐसा सौन्दर्य जिसमें देवताओं के समान तेज और आभा भी होती है।** वहीं वाह्य रूप से भी यज्ञ अनेक दूषित रश्मियों तथा घर में अशुद्ध आत्माओं को भी इस प्रकार समाप्त करती है, जिससे व्यक्ति के घर में स्वस्थ वातावरण बन सके। जिस वातावरण में आप अपने दैनिक जीवन का एक बड़ा भाग बिताते हैं, यदि वही स्वस्थ न हुआ तो स्वास्थ्य लाभ की आशा कैसे कर सकते हैं? यज्ञ पद्धति, कुण्ड की स्थापना, मंत्रोच्चारण, हवि प्रदान करने की विधि इत्यादि एक जटिल प्रक्रिया है, किन्तु साधक इसके स्थान पर ताम्र पत्र पर अंकित **'सर्वतोभद्र यंत्र'** स्थापित कर उसका पूजन कर, यज्ञ सम्पन्न करने पर भी मनोवांछित फल प्राप्त कर सकता है।

साधना चिकित्सा

यदि किसी से पूछा जाय कि स्वास्थ्य की परिभाषा आपकी दृष्टि में क्या है, तो प्रत्येक व्यक्ति अपने ढंग से रोचक उत्तर देगा। किसी की दृष्टि में उभरा हुआ बलिष्ठ वक्ष स्थल पौरुष का पर्याय है, तो कोई अपनी चौड़ी कलाइयों का गर्व करता है, कोई भुजाओं में उभरी मांस -पेशियों को स्वास्थ्य मानता है, तो कोई मजबूत उदर प्रदेश को, अर्थात् शरीर की गठन पर स्वास्थ्य को परिभाषित करके देखा जाता है। निः संदेह यह सभी स्वास्थ्य ही है, लेकिन केवल यही स्वास्थ्य नहीं है, यह तो एक प्रकार से स्वास्थ्य के बाह्य लक्षण और शरीर के अंग हैं, **वास्तविक स्वास्थ्य तो वह होता है जो आन्तरिक पक्ष से सम्बन्धित हो, मन में उत्तेजना रहित शांति हो, द्वंद्व और पीड़ाएं न हो , अनिद्रा एवं डिप्रेशन जैसा गम्भीर रोग न हो , उचित निर्णय लेने की क्षमता हो और जीवन के प्रत्येक पल का आनन्द लेने की कला आती हो।** ऐसा सब कुछ व्यक्ति को प्राप्त हो सकता है, केवल साधना के माध्यम से। स्वास्थ्य को खण्ड - खण्ड करके नहीं देखा जा सकता है। शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक स्वास्थ्य दो अलग प्रकार नहीं है, दोनों एक दूसरे पर आश्रित हैं, और मानसिक स्वास्थ्य या आन्तरिक सौन्दर्य व्यक्ति को प्राप्त हो सकता है तो केवल साधना के द्वारा। साधना आसन पर बैठकर, दैनिक भजन - पूजन तक ही सीमित नहीं होती। जब साधक दृढ़ चित्त होकर, संकल्प विकल्प रहित होकर आसन पर बैठ विशिष्ट मंत्र उच्चारण, प्रयास पूर्वक करता है तो उसके समस्त शरीर में विद्युत के समान ऊर्जा उत्पन्न होती है और यही तरंगें सम्पूर्ण रूप से सारे शरीर में इस प्रकार से फैल जाती हैं कि आन्तरिक रूप से जो हमारा सूक्ष्म शरीर है, वह कम्पित हो उठता है। प्रत्येक साधना का एक निश्चित विधान होता है। प्रत्येक साधना में ऊर्जा का विस्फोट होता है, जीवन के कई अनसुलझे रहस्य, दृश्यों व संकेतों के माध्यम से स्पष्ट होते हैं। साधना तो जीवन का आनन्द है, जो व्यक्ति के पूरे जीवन को एक रस में भिगो देती है, जिसके समक्ष संसार का कोई भी सुख और आनन्द तुच्छ और लघु हो जाता है, लेकिन साधना स्वयं में एक चिकित्सा पद्धति भी बन जाती है यदि उसे विशिष्ट ढंग से प्रयोग में लाया जाय।

> **भगवान शिव, काली, भैरव एवं हनुमान . . . ये ही तो हैं वे चार देव, रोगनाश में समर्थ . . .**

विभिन्न रोगों के उपचार से संबंधित, विभिन्न साधना पद्धतियों का और अलग - अलग व्याधियों के संदर्भ में, अलग - अलग देवी - देवताओं की उपासना का विधान शास्त्रों में मिलता है, लेकिन यह एक सामान्य सी बात है कि जहां कोई व्यक्ति अस्वस्थ हो फिर वह क्या लम्बी और कष्ट साध्य साधना में बैठ सकता है? यह आवश्यक नहीं है। उसके लिए कोई संकल्प करके भी साधना करने के लिए उपलब्ध हो सकता है। ऐसी दशाओं में जहां व्यक्ति को स्वयं ही अपने रोग का निदान करना पड़ता है, वहां फिर उसके लिए उचित रहता है कि वह दीर्घ कालीन साधनाओं के स्थान पर लघु प्रयोग करे। लघु प्रयोग की सबसे बड़ी विशेषता होती है कि वह तुरंत आराम देने में समर्थ होते हैं। जहां साधनाएं पूर्ण रोग निदान प्रस्तुत करती है, वहीं लघु साधनाएं आधार भूमि निर्मित करती हैं। प्रस्तुत साधना ऐसी ही एक छोटी सी साधना है, यदि साधक को निरंतर ज्वर की बाधा घेरे रहती है तो वह किसी भी मंगल वार को सिर पर से **२१ चिरमी** के दाने घुमा कर दक्षिण दिशा में फेंक दें। ऐसा करने पर उसे तुरंत आराम मिल जाता है। इसी प्रकार यदि मंगवार की प्रातः **एक बजरंग विग्रह** सामने रख कर **मूंगे की माला** से निम्न मंत्र की ५ माला मंत्र जप कर, उसे श्रद्धा के साथ मंदिर अथवा पीपल के वृक्ष पर चढ़ा दें तो साधक को अपने कष्ट में तुरंत आराम मिलने लग जाता है।

मंत्र -

ॐ श्रीं ह्रीं ऐं फट्

भगवान शिव , काली, भैरव एवं हनुमान ये चार ऐसे देव है, जिनकी साधना करने से व्यक्ति को अपने जीवन में रोगों से मुक्ति मिलती है। साधना द्वारा रोग का निदान विस्तृत विषय है और साधक अपने रोग की प्रकृति तथा संबंधित देव एवं साधना को समझ कर ही यथा शीघ्र रोग मुक्त हो जाता है। **साधना केवल रोग मुक्ति तक ही सीमित नहीं है, वरन निरन्तर साधना- रत रहने से साधक सदैव स्वस्थ एवं प्रसन्नचित्त भी बना रहता है।**

सूर्य चिकित्सा

जिसके जीवन में सूर्य तत्व ही नहीं रह गया वह तो रीढ़ रज्जुहीन केंचुए के समान ही रह जाता है . . . बल,पौरुष, तेज के देव . . . सूर्य पर आधारित श्रेष्ठ चिकित्सा पद्धति . . .

स्वास्थ्य एवं ज्योतिष शास्त्र का परस्पर गहन संबंध है, क्योंकि दोनों ही मानव शरीर से संबंधित होते हैं। शरीर में स्थित मानव के रोग, शोक, हर्ष , उल्लास का प्रमुख आधार नौ ग्रह होते हैं , और इन्हीं नौ ग्रहों में सर्वाधिक तेजस्वी और ब्रह्माण्ड का सबसे प्रखर ग्रह है-- **'सूर्य'** जो सम्पूर्ण रूप से व्यक्ति के बल , साहस , शौर्य, पराक्रम और तेजस्विता से संबंधित होता है। सूर्य नमस्कार भी इसी प्रकार से यौगिक व्यायाम होते हुए भी वास्तव में विशेष बीज मंत्रों के साथ सूर्य की तेजस्विता को सम्पूर्ण जीवन में उतारने की ऐसी प्रक्रिया है, जिससे सभी अंगों को समुचित पुष्टि और तेजस्विता मिल सके। जब सूर्य को ही आधार मान कर चिकित्सा पद्धति की बात आती है, तो उसे केवल एक ग्रह न मानकर सम्पूर्ण रूप से रोग निवारक शक्ति और उपचारक माना गया। **क्रोमोपैथी** के नाम से विकसित की गई सूर्य चिकित्सा का सीधा सा आधार है कि **मनुष्य के शरीर का निर्माण विभिन्न कार्बनिक एवं अकार्बनिक तत्वों के गठन से हुआ है और वे पदार्थ अपने मूल रूप में प्रकाश की विभिन्न किरणों से निर्मित होते हैं।** सूर्य की रश्मियां भी तो विभिन्न रंगों से निर्मित होती हैं और इसी कारण मानव का शरीर का तादात्म्य सहज ही सूर्य से किया जा सकता है। सूर्य की विभिन्न किरणों का अर्थात् विभिन्न रंगों की रश्मियों का उपयोग, शरीर में किस प्रकार से किया जाए, इसी की पूर्ण विवेचना इस पद्धति में की गई है -- रंगीन पानी, सेलोफेन कागज द्वारा शरीर में किसी विशेष रंग का प्रवेश, सूर्य स्नान, सूर्य ऊर्जा से संतृप्त तेल, ग्लीसरीन, सूर्य ऊर्जा से अनुप्राणित शुद्ध घृत इत्यादि विभिन्न उपाय हैं, जिनके द्वारा सूर्य की कोई एक रश्मि विशेष अथवा सम्पूर्ण रूप से उसकी दहकता और तीव्रता को इस शरीर में ग्रहण कर दाद, अनेक जटिल चर्म रोग, नेत्र रोग, गठिया और नपुंसकता जैसे असाध्य रोग साध्य करते देखा गया है। सूर्य चिकित्सा के रूप में सर्वाधिक प्रचलित एवं चर्चित विधि रंगीन पानी की है। रंगीन पानी का अर्थ रंग से युक्त पानी से नहीं होता, वरन शरीर को जिस रंग की आवश्यकता होती है, उसी रंग का पानी, सूर्य की किरणों में उसी रंग की कांच की बोतल में रख कर तैयार किया जाता है। यदि सम्बन्धित रंग की बोतल न मिले तो सफेद रंग की बोतल पर मनोवांछित रंग का सेलोफन कागज लपेट कर कार्य लिया जाता है। एक बार सूर्य के प्रकाश में दो - तीन घंटे तक जल में रखा गया जल, अगले तीन दिनों तक के लिए लाभकारी रहता है। प्रत्येक बार नये स्वच्छ जल को लेना ही लाभकारी रहता है। उसी जल को बार - बार सूर्य की ऊर्जा में तप्त नहीं करना चाहिए। सूर्य के सात रंग होते हैं , किन्तु क्रोमोपैथी के कुछ विशेषज्ञों ने केवल तीन रंगों को ही प्रमुखता दी है, क्योंकि शरीर में कफ , पित्त और वायु इन्हीं तीन तत्वों के संतुलन अथवा अथवा असंतुलन से रोगों की उत्पत्ति मानी गयी है और यह तीन रंग माने हैं-- लाल - जिसका संबंध किया है शरीर में स्थित 'कफ' से, हरे रंग का संबंध किया है वायु से तथा नीले रंग का शरीर स्थित 'पित्त' से संबंध माना गया है। क्रोमोपैथी के कुछ अन्य विशेषज्ञ सूर्य के प्रत्येक रंग को महत्व देते हुए उसके उपयोग की बात कहते हैं। वास्तव में क्रोमोपैथी एक विस्तृत विज्ञान है और शरीर के गुण - दोष को समझते हुए उचित निर्देशन में विभिन्न रंग के पानी का सेवन करना लाभप्रद रहता है। प्रत्येक रंग अपनी प्रकृतिगत विशेषता को प्रदान करता है। यदि सफेद रंग की बोतल में पानी भर कर, एक **सूर्य गुटिका** डाल उसे सूर्य की किरणों के समक्ष उपचारित कर उसका नित्य सेवन किया जाए तो व्यक्ति को जहां एक ओर बिना किसी परिश्रम अथवा अतिरिक्त व्यय के कीटाणु रहित जल उपलब्ध हो जाता है। वहीं फिर **सूर्य की सप्त किरणों से तप्त एवं परिपक्व जल व्यक्ति के शरीर की सप्त धातुओं की पुष्टि करने वाला एवं बल, वीर्य में वृद्धि करने में समर्थ होता ही है।**

योग चिकित्सा

चिकित्सा की सबसे प्रामाणिक विधि, जो मानव की मूलभूत ऊर्जा- ''प्राण'', पर केन्द्रित करती है अपना ध्यान . . .

मानव में आधारभूत रूप से पांच शक्तियां होती हैं। यह शक्तियां हैं-- प्राण शक्ति, मनः शक्ति, क्रिया शक्ति, भावना शक्ति, बुद्धि शक्ति। इन्हीं पंच शक्तियों के आधार पर भारतीय परम्परा में पांच प्रकार के योग निर्मित हुए- हठ योग, ध्यान योग, कर्म योग, भक्ति योग एवं ज्ञान योग। हठ योग का संबंध मानव के प्राण शक्ति से, ध्यान योग का उसकी मनः शक्ति से, कर्मयोग का क्रिया शक्ति से, भक्ति योग का भावना शक्ति से तथा बुद्धि शक्ति का ज्ञान योग से संबंध जोड़ा गया। योग शब्द जिस रूप में लिया जाता है एवं जब हम योग चिकित्सा की बात कहते हैं तब तात्पर्य हठयोग से होता है। हठयोग का उद्देश्य मूलतः आध्यात्मिक है, लेकिन उसकी पूर्णता के क्रम में जिन पद्धतियों का, योगासनों का निर्माण किया गया फिर वे दैनिक जीवन में भी पर्याप्त लाभप्रद हैं। **किंवदन्ती है कि भगवान शिव ने मानव देह में उत्पन्न होने वाली व्याधियों की असंख्य प्रकारों का विचार करके ही चौरासी लाख योगासनों की सृष्टि की थी।** उनकी दृष्टि में तो विश्व के सभी मानव थे, विविध आकृतियों के, स्वास्थ्य की विभिन्न जटिलतायें लिए हुए और भगवान शिव ने प्रत्येक से तालमेल करते हुए, प्रत्येक के लिए योगासनों का विधान किया। योगासनों द्वारा चिकित्सा की पद्धति कोई नवीन बात नहीं है और सच कहा जाय तो योगासन सम्पूर्ण रूप से एक चिकित्सा पद्धति ही तो है, जो मात्र रोगों का निवारण ही नहीं करती है, अपितु अंग - प्रत्यंग में स्वाभाविक रूप से शक्ति का संचार भी तो करती है। योग अर्थात योगासन केवल शारीरिक सौष्ठव एवं पुष्टता से ही संबंधित नहीं होते, योगासन साथ ही साथ सम्पूर्ण रूप से सौन्दर्य के भी पर्यायवाची होते हैं , क्योंकि प्रत्येक योगासन सम्पूर्ण रूप से सारे शरीर में खिंचाव पैदा करता है और यदि उचित ढंग से कुशल निर्देशक की देख -रेख में यौगिक व्यायाम एक सेट बनाकर किए जाए तो बहुत कम समय में ही सारा स्नायुमण्डल चैतन्य हो जाता है। योग - चिकित्सा पद्धति का आधार है 'प्राण शक्ति', और रोग विशेषज्ञ किसी अंग में रोग उत्पन्न होने का कारण, उस स्थान पर प्राण शक्ति के प्रवाह में बाधा से मानते हैं, तथा विभिन्न व्यायामों एवं प्राणायाम के द्वारा प्राण का संचय कर, उस अंग विशेष को पुनः स्वस्थ एवं संचालित करते हैं। **योग - चिकित्सा पद्धति में प्राणायाम का विशेष महत्व है, क्योंकि प्राणायाम ही तो वह ऊर्जा है जिससे शरीर का बैटरी रूपी यंत्र संचालित होता है।** अपने मूल स्वरूप में अध्यात्म से ही जुड़ा होने के कारण यौगिक चिकित्सा के सन्दर्भ में यह बात सदैव स्मरण में रखनी चाहिए और इसी भावना से अनुप्राणित होकर गतिशील होना चाहिए कि यह सब कुछ जो भी है वह आध्यात्मिक ही है। ऐसा करने से यौगिक चिकित्सा से मिलने वाले प्रभाव द्विगुणित हो जाते हैं। सम्पूर्ण शरीर में प्राण शक्ति का प्रवाह इस प्रकार से हो जाता है कि व्यक्ति का व्यक्तित्व खण्ड - खण्ड में गठित न हो कर, एक सम्पूर्णता लेकर गठित होता है और इसी सम्पूर्णता से निखर आती है ऐसी ताजगी और आंखों में लपक, जो कि केवल इसी पद्धति की विशेषता है। वास्तव में कुशल योग चिकित्सक ही बता सकता है कि व्यक्ति किस प्रकार का आसन अथवा किस प्रकार का प्राणायाम करे।

प्राणायाम के समस्त प्रचलित विधियों में से जो विधि सम्पूर्ण रूप से सारे शरीर को गतिशील करने वाली है और यौगिक चिकित्सा की सर्वमान्य पद्धति है वह है-- भस्त्रिका प्राणायाम। जिसके द्वारा व्यक्ति के ७२००० नाड़ियों का शोधन हो जाता है । इस पद्धति के दीर्घ कालीन अभ्यास से व्यक्ति इस स्थिति में आ जाता है कि वह जब चाहे अपने जिस अंग को प्राण ऊर्जा से भर कर, उसे सबल कर सकता है। वास्तव में योग जगत और यौगिक चिकित्सा का क्षेत्र अत्यन्त विशाल और ज्ञान की गूढ़ता से भरा हुआ है।

यंत्र चिकित्सा

> **जब जीवन के पुण्य उदय होते हैं . . भविष्य कल्याणकारी हो, तभी तो मन में विचार आता है यंत्र प्राप्त करने का. . उसे उत्कीर्ण करने का-- ''यंत्र चिन्तामणि''**

जहां मंत्र चिकित्सा की बात आती है, जहां तंत्र चिकित्सा की बात आती है, वहां यंत्र की भूमिका का तो स्वयमेव ही अन्तर्निहित होती है। मंत्र, साधक, यंत्र और सम्बन्धित देवता यह मिलकर ही एक पूर्ण चक्र बनता है और यही दृढ़ता पूर्वक किए जाने पर तंत्र कहलाता है। यंत्र अपने आप में स्वतन्त्र विधा भी है और मंत्र की पूरक भी। यंत्र तो ताम्रपत्र पर व भोजपत्र पर या विशेष स्थितियों में रजत पत्र एवं स्वर्ण पत्र पर भी उत्कीर्ण किए गए देवताओं के स्वरूप ही हैं। यदि आपने परमाणु का चित्र देखा हो तो वह देखने में सितारे जैसा लगता है जबकि वह परमाणु का चित्र नहीं है, वह तो एक प्रारूप है, जिसके माध्यम से हमारे नेत्रों के समक्ष अणु का वह स्वरूप प्रकट होता है जो कि अन्यथा हम इन आंखों से हम सीधे नहीं देख सकते हैं, हम उन्हें देख सकते हैं तो केवल किन्हीं विशिष्ट यंत्रों के उपाय से और **भारतीय विज्ञान में भी यंत्र यही स्थान रखते हैं, वे किसी देवी या देवता के चित्र तो नहीं होते उसका यथार्थ प्रारुप होते हैं जिसे हम उनका प्रतिरूप भी कह सकते हैं।**

यंत्रों का विधान संभवतः भारतीय विधान का सबसे जटिल विज्ञान है, क्योंकि किस देवी या देवता की क्या शक्तियां हैं, क्या मात्रकाएं हैं, क्या कलाएं हैं, इनका पूर्ण ज्ञान हो जाने पर ही यंत्र विज्ञान के क्षेत्र में प्रवेश किया जा सकता है। यंत्र केवल आड़ी - तिरछी खिंची कुछ रेखाएं ही नहीं होती, यंत्र अपने- आप में किसी भी देवी या देवता का एक छोटे से तांबे के टुकड़े में आबद्धीकरण ही होता है, उसका पूर्ण स्वरूप होता है और सम्पूर्ण रूप से स्थापना होती है। वर्षों की गहन तपस्या और शोध के बाद ही भारतीय ऋषियों ने जो प्रतीक खोजे, वे ही कहीं 'षोडष कमल' बन यंत्र पर उत्कीर्ण होते हैं, तो कहीं त्रिकोण बन कर, तो कहीं वृत बन कर, कहीं अधोमुख त्रिकोण बन, तो कहीं बिन्दु के रूप में और यह प्रतीक स्वतः निर्धारित नहीं है, इनमें पर्त दर पर्त भेद और रहस्य छुपे हुए हैं।

साधक के मुख से निःसृत ध्वनियां ही यंत्र के माध्यम से परावर्तित हो ईथर के माध्यम से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में विकसित होती हैं। जहां यंत्र स्वतः चैतन्य होते हैं, वहां वे अपने आप में समाए रहते हैं-- किसी भी देवी या देवता का एक विशिष्ट स्वरूप, जो बन जाते हैं अपने साधक के लिए पूर्ण रूप से कल्याणप्रद, फलदायी तुरंत मनोकामना पूर्ण करने में समर्थ। ऐसे कई यंत्र चाहे वह चौबीसा हो, चाहे छत्तीसा या फिर पन्द्रहिया, व्यापारी परम्परा से उसे पीढ़ी दर पीढ़ी अंकित करते आ ही रहे हैं, लेकिन इन यंत्रों का केवल एक क्षेत्र में ही प्रयोग नहीं वरन अनेक क्षेत्रों में उपयोग संभव होता है। **जहां तक स्वास्थ्य का विषय है पन्द्रहिया यंत्र अद्भुत रूप से सहयोगी और लाभदायक यंत्र सिद्ध होता है।** उसके विषय में नाथ सम्प्रदाय की अनेक पाण्डुलिपियों में विशदता से वर्णन दिया गया है। ऐसे ही महत्वपूर्ण पन्द्रहिया यंत्र की कुछ ऐसी विशेषताएं हैं कि यह पेट संबंधी बीमारियों में ऐसा अचूक और सिद्ध प्रयोग है जैसा कि किसी भी चिकित्सा पद्धति में तो संभव हो ही नहीं सकता। जिनको पेट संबंधी बीमारी हो उन्हें चाहिए कि वे शनिवार की सुबह केले के पत्ते पर केसर से १०८ बार इस यंत्र को उत्कीर्ण कर मौली से बांध, किसी कोने में रख दें और यदि एक बार में लाभ न हो तो प्रयोग को दोहराएं। तीसरी बार तक व्यक्ति को निश्चित ही लाभ हो जाता है और आगे के जीवन में उसे अपने दाएं हाथ की कनिष्ठिका में मंत्र सिद्ध और नाथ साबर पद्धति से आबद्ध, रोग नाशक **पन्द्रहिया यंत्र की अंगूठी** धारण करनी चाहिए। जो व्यक्ति शारीरिक रूप से कमजोर हो या नामर्द हो अथवा वैवाहिक जीवन से संबंधित कोई भी बीमारी हो, तो उसको चाहिए कि वह इसी अंगूठी को कांसे के थाली के बीचों - बीच में रखे और अलग कटोरी में कुंकुम और हल्दी का लेप बनाकर इसके चारों ओर १०८ बार इस यंत्र को लिखे तो उसके शरीर में साहस और ताकत आ जाती है और नए सिरे से जीवन जीने में सफल हो जाता है।

सम्मोहन चिकित्सा

सम्मोहन एक प्रक्रिया ही नहीं यह तो अनेक प्रक्रियाओं का समन्वित रूप है। जब सम्मोहन चिकित्सा की विधि ा की बात हो, तब सम्मोहन की मूल धारणा मानव मन तक जाना पड़ता है। सम्मोहन का क्रियात्मक स्वरूप एवं पद्धति भी इसी पर तो आधारित है। चिकित्सा से हमारे मन में जो धारणा बनती है, वह किसी व्याधि अथवा दुर्घटना में ग्रस्त व्यक्ति के उपचार की बनती है, लेकिन इससे भी अधिक महत्वपूर्ण पक्ष होता है 'मानव का मन'। **आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में स्वीकार किया जाने लगा है कि अनेक व्याधियों का उपचार जिसमें 'कैंसर' जैसी असाध्य बीमारी भी आती है, का उपचार रोगी के अन्तर्मन को स्पर्श करके किया जा सकता है।** "मन" को स्पर्श करने का उसे निर्देश देने का एक मात्र उपाय है, और वह है 'भावना'। सम्मोहन द्वारा चिकित्सा पद्धति में भावना के द्वारा ही बहुत कुछ घटित किया जा सकता है जो कि अन्यथा संभव न हो रहा हो। सम्मोहन चिकित्सा के क्षेत्र में इसी भावना तत्व को अधिक व्यावहारिक एवं वैज्ञानिक ढंग से एक सम्पूर्ण प्रक्रिया में मूर्त रूप दिया जाता है।

यह तो स्पष्ट है कि भारतीय मतानुसार सम्मोहन प्राण - शक्ति का तथा पाश्चात्य मत से चुम्बकत्व का विज्ञान है। वैज्ञानिकों ने अनुभव से पाया कि जब इस चुम्बकत्व में अतिरिक्त ऊर्जा के रूप में भावना जोड़ दी जाती है, तो वह चुम्बकत्व शीघ्र ही एक घनत्व को प्राप्त कर लेता है, तथा व्यक्ति के अन्दर विकीर्ण रूप से व्याप्त चुम्बकत्व किसी को स्पर्श करने की दशा में आ जाता है।

भावना अपने - आप में एक जटिल प्रक्रिया है एवं इसमें काफी दिनों के अभ्यास के बाद ही परिपक्वता आ पाती है। इसके द्वारा रोगी के अन्तर्मन को अपने वश में करने का प्रयास किया जाता है, जो कि एक अत्यंत तीव्र गति वाला तत्व है। रोगी के बाह्य मन को अपने वश में करना कठिन होता है क्योंकि वह बुद्धि से परिचालित होता है। **भावना का आधार चिकित्सक का इच्छा कम्पन है। विश्व में जितने भी चेतन व सक्रिय पदार्थ हैं उनमें कम्पन आवश्यक है। हवा, प्रकाश , ध्वनि सभी कम्पन युक्त हैं।** कम्पन का प्रभाव चिकित्सक अपनी वाणी से ही नहीं सम्पूर्ण व्यक्तित्व से उत्पन्न करता है और सम्मोहन द्वारा चिकित्सा की पद्धति में सर्वोत्तम दशा तो वह मानी जाती है, जब चिकित्सक सर्वथा मौन और शांत रहते हुए अपने रोगी को अपने बाह्य व्यवहार से अभिभूत करता हुआ, मानस तरंगों के माध्यम से उचित निर्देश दे सके। कई एक ऐसी दशाएं होती हैं जिनके विषय में यदि स्पष्ट रूप से रोगी से कुछ कहा जाए तो उतना प्रभावी नहीं रहता, जबकि उसी बात को मानसिक तरंगों के माध्यम से प्रयास पूर्वक रोगी के मानस में प्रवेश देकर, उसे कई तरह के फोबिया, अनिद्रा, डिप्रेशन और यौन - विसंगतियों में पर्याप्त उपचार दिया जा सकता है।

केवल दुःसाध्य मानसिक रोग ही नहीं. . .
सम्मोहन विज्ञान के बढ़ते कदम पहुंच रहे हैं कैंसर जैसी असाध्य बीमारियों के उपचार में भी . . .

जो व्यक्ति सफल सम्मोहनकर्त्ता बनने के इच्छुक हों, उनके लिए भी आवश्यक होता है कि वे भावना के महत्व को समझें और सफल सम्मोहनकर्ता बन इस श्रेष्ठ पद्धति के माध्यम से अनेक गम्भीर या जटिल व्याधियों से ग्रस्त व्यक्तियों के उपचार में सहायक सिद्ध हों।

सम्मोहन चिकित्सा में सम्मोहन दीक्षा के माध्यम से सद्गुरुदेव अपनी प्रबल इच्छा शक्ति से रोगी की इच्छा शक्ति को भी प्रबल कर देते हैं, और यह तो हम सभी जानते हैं कि प्रबल इच्छा शक्ति ही रोग का वास्तविक्ि निदान कर सकती है। इच्छा शक्ति की यह प्रबलता किसी औषधि से प्रदान नहीं की जा सकती। वास्तव में जिसे मनोवैज्ञानिक चिकित्सा कहा जाता है, वह एक प्रकार की सम्मोहन चिकित्सा ही है, भले ही तौर - तरीकों व संज्ञा में कुछ अन्तर हो।

कुण्डलिनी चिकित्सा

कुण्डलिनी में बहती ऊर्जा बन जाती है किसी भी रोग के निदान का सरल उपाय. . . इस प्रयोग से . . .

कुण्डलिनी जागरण और कुण्डलिनी चिकित्सा दो अलग - अलग दशाएं होती हैं। कुण्डलिनी जागरण शब्द को प्रयुक्त करते ही पाठक के मन में, षटचक्रों का विवरण और विभिन्न रूपों की कल्पना आने लगती है और वे रूप इस प्रकार से मानस में छा चुके हैं कि कुण्डलिनी जागरण का जो सहज और स्वाभाविक अर्थ था, वह तो विलुप्त हो गया, उसके स्थान पर रह गयी जटिल और दुरुह व्याख्याएं। कुण्डलिनी शक्ति तो इस दैहिक शक्ति से भी श्रेष्ठ किन्तु शरीर में अन्तर्निहित ऐसी शक्ति है जो सुप्तावस्था में पड़ी रहती है और इसी शक्ति को उचित रूप से जाग्रतं कर, इसके वेग को शरीर में धारण करने की क्षमता उत्पन्न करना ही कुण्डलिनी जागरण का सीधा सा अर्थ है और **इसके लिए आवश्यक नहीं कि व्यक्ति सभी चक्रों का पूर्ण ज्ञान अर्जित करें, कुण्डलिनी से संबंधित जटिल प्रक्रियाओं में रत हों, वरन सदगुरु के निर्देशन में अभ्यास कर और अनेक सरल उपायों में से कोई एक उपाय प्राप्त कर, अपना सम्पूर्ण जीवन बदल सकते हैं।** कुण्डलिनी जागरण वास्तव में अपनी इच्छा शक्ति को और मनः शक्ति को पहचान कर उस पर सहज रूप से नियंत्रण स्थापित करने की कला है और ऐसा करते ही साधक को अपने शरीर पर पूर्ण नियंत्रण हो जाता है, फिर उसके रोग इत्यादि स्वतः समाप्त होने की स्थिति में आ जाते है, उन्हें समाप्त करने के लिए साधक को विशेष प्रयास नहीं करना पड़ता।

कुण्डलिनी जागरण के लिए ज्योतिष शास्त्रों में तथा **च्यवन संहिता** में पौष मास सर्वश्रेष्ठ बताया गया है, क्योंकि यह माह ज्योतिषीय विधि - विधानों के अतिरिक्त स्वास्थ्य की दृष्टि से भी सुखद होता है। इस वर्ष यह माह १४ दिसम्बर से प्रारम्भ हो रहा है और यही कुण्डलिनी जागरण का सर्वश्रेष्ठ काल है। कुण्डलिनी जागरण की यह प्रक्रिया जिस प्रकार से च्यवन संहिता में रोग नाश के लिए बतायी गई है, वह सर्वाधिक सरल एवं व्यावहारिक है तथा इसका आधार आध्यात्मिक पक्ष से अधिक शारीरिक पक्ष से, चिकित्सकीय दृष्टि से संबंधित है। **इस पद्धति से कुण्डलिनी जागरण करने के लिए साधक को राजयोग अथवा हठयोग की दुरुह प्रक्रियाएं प्रयोग में नहीं लानी पड़ती,** वरन उसकी समस्त नाड़ियां चेतना युक्त बन जाती हैं तथा मूलाधार से लेकर सहस्रार तक सम्पूर्ण कुण्डलिनी पथ में स्पन्दन आरम्भ हो जाता है। इसी कुण्डलिनी पथ में स्थान - स्थान पर स्थित नाड़ी गुच्छक जिन्हें 'पद्म' कहा जाता है, वे वास्तव में ऊर्जा के प्रवाह को ट्रांसफार्मर की भांति उचित मात्रा में निर्धारित कर, शरीर में भेजने का कार्य करते हैं। अतः शरीर के किसी भी भाग में कैसा भी जटिल रोग हो वह निश्चय ही ठीक होता ही है।

च्यवन संहिता के अनुसार एक **नाभि चक्र** लेकर उसके पीछे के भाग में शुद्ध घी का हल्का सा लेप लगाएं तथा प्रातः काल स्नानादि से निवृत्त होकर मूलाधार अर्थात गुप्तेन्द्रिय स्थान से धीरे - धीरे वह नाभि चक्र सामने की ओर शरीर पर हल्के दबाव से रगड़ते हुए कंठ तक ले जाएं तथा कंठ से वापस गुप्तेन्द्रिय तक ले जाएं। ऐसी क्रिया करते समय इस मंत्र को मन ही मन निरंतर दुहराते रहें --

मंत्र -

ॐ हुं ब्रह्म हुं

इस क्रिया को कम से कम २१ बार और अधिक से अधिक १०८ बार तक किया जा सकता है, लेकिन प्रतिदिन एक निश्चित क्रम ही रखें। प्रयोग के उपरान्त नाभि चक्र को किसी डिब्बी में सुरक्षित रख दें, तथा भविष्य में भी इस क्रिया को निरन्तर करते रहें। जिस स्थान पर कोई पीड़ा हो, वहां इस चक्र को अधिक दबाव से ले जाएं। शरीर में प्रत्येक चक्र किसी विशेष स्थिति से संबंधित है और इसके पूर्ण ज्ञान के अभाव में **यदि साधक केवल अपने मणिपुर चक्र पर ही नाभि चक्र का स्पर्श नियम पूर्वक करें तब भी उससे अपूर्व लाभ होता है।** कुण्डलिनी चिकित्सा द्वारा रोग निवारण की यह पद्धति अपने - आप में अत्यंत सरल और व्यावहारिक है। केवल रोग की दशा में ही नहीं सामान्य स्वास्थ्य की दशा में भी यह प्रयोग सुखद अनुभूति देने में समर्थ होता है।

देव चि कि त्सा

औषधि प्रभावी होती है दैवी कृपा से और मां भगवती जगदम्बा से अधिक कौन कृपालु हो सकती है अपने भक्तों पर. . .

जहां व्याधियों की अनेक औषधिजनक एवं उपचार मूलक पद्धतियां प्रचलित हैं, फिर वहीं व्यक्ति को जीवन में पूर्णता प्राप्त करने के लिए यह भी आवश्यक हो जाता है कि वह देव कृपा का बल भी प्राप्त करे। देव कृपा के अभाव में तो औषधि भी लाभकारी नहीं होती। **देव चिकित्सा का अर्थ है - कि व्यक्ति अपने - आप को इस प्रकार प्रार्थनामय बनाए कि देवता की विशाल शक्ति भण्डार से एक अंश लेकर अपने को निरोग बना ले। वह किन्हीं लम्बी पद्धतियों और जटिलताओं की अपेक्षा शीघ्र स्वस्थ हो सके।** देव चिकित्सा मनुष्य को अपनी समस्त वृत्तियों को केन्द्रित करने की पद्धति भी है। प्रार्थना के द्वारा व्यक्ति केवल देवता की स्तुति ही नहीं करता, वह उस क्षण विशेष में इस प्रकार एकाग्र हो जाता है कि उसके समस्त शरीर में ऊर्जा लहरियां उत्पन्न होने लगती हैं। नित्य प्रति प्रार्थना के द्वारा व्यक्ति ऐसी ऊर्जा लहरियों को अपने शरीर में उद्भूत करके और अन्दर ही अन्दर आलोड़न - विलोड़न के माध्यम से इस प्रकार वितरित कर देता है कि वह शीघ्र ही स्वास्थ्य लाभ का अधिकारी बन जाता है। देव चिकित्सा के रूप में तो केवल श्रद्धा-भक्ति और विश्वास ही फलीभूत होता है। कुछ लोगों का ऐसा मानना है कि व्यक्ति श्रद्धा ,भक्ति के द्वारा वास्तव में अपने अन्दर निरोधक क्षमता उत्पन्न कर लेता है, लेकिन यह बात पूर्ण रूप से सत्य नहीं है, वरन यह आंशिक सत्य है। आन्तरिक रूप से शक्ति उत्पन्न करना तथा बाह्य रूप से देव बल, यह दोनों मिलकर ही एक सम्पूर्ण चक्र का निर्माण करते हैं। **जब देव चिकित्सा की चर्चा होती है तो निश्चित रूप से व्यक्ति के पास हृदय बल के साथ -साथ कोई ऐसा माध्यम भी होना चाहिए जिसके द्वारा वह अपनी प्रार्थना, अपना मनोभाव, देवता विशेष के समक्ष स्पष्ट करके उचित लाभ प्राप्त कर सके।** मां भगवती जगदम्बा से श्रेष्ठ , उनसे अधिक सहयोगी, व्यक्ति के जीवन में और कौन हो सकता है? उनके समान करुणा करने वाली शक्ति अन्य कौन हो सकती है? और देव चिकित्सा पद्धति में यदि मां भगवती जगदम्बा का बल लिया जाय तो कोई कारण ही नहीं कि व्यक्ति शीघ्र स्वस्थ न हो सके। ऐसी समस्त स्थितियों में अनुभव से यह पाया गया है कि किसी स्तोत्र का पाठ करना मंत्र जप की अेपक्षा अधिक लाभप्रद रहता है। **"दुर्गा द्वात्रिंशन्नाम माला"** का पाठ साधक को प्रत्येक दृष्टि से अनुकूल सिद्ध होता है।

यह उपाय दुर्गा के बत्तीस विशिष्ट नामों को एक स्तोत्र में समाहित करता हुआ, ऐसा लघु पद है जिसमें मां भगवती दुर्गा के बत्तीस विशिष्ट बाधा निवारक स्वरूपों का स्मरण किया गया है। यदि कोई नियम पूर्वक इस स्तोत्र का कुछ दिनों तक पाठ करता है तो वह निश्चित रूप से पीड़ा, व्याधि से मुक्त होता ही है। इस स्तोत्र को यदि व्यक्ति किसी मंगलवार की रात्रि में भोजपत्र पर लाल चंदन से लिखकर उसे **त्रिलोह ताबीज** में भरकर अपने गले में अथवा दाहिनी भुजा पर धारण कर लेता है, तो उसे कैसा भी असाध्य रोग हो, पूर्ण रूप से मुक्ति मिल जाती है। मिर्गी आना, चक्कर खाकर बेहोश हो जाना, किसी अंग विशेष में तीव्र ऐंठन होना, बेहोश होकर मुंह से झाग निकलने लगना, जैसी दुःसाध्य स्थितियों में तो अवश्य ही पीड़ित व्यक्ति के गले में यह ताबीज धारण करा देना चाहिए।

आगे की पंक्तियों मैं मैं यह विशिष्ट बत्तीस नामों की माला **"दुर्गा द्वात्रिंशन्नाम माला"** स्पष्ट कर रहा हूं --

दुर्गा दुर्गातिशमनी दुर्गापद्वि निवारिणी,
दुर्गमच्छेदिनी दुर्गसाधिनी दुर्गपनाशिनी।
दुर्गतोद्धारिणी दुर्गेनिहन्त्री दुर्गमापहा,
दुर्गमज्ञानदा दुर्गदैत्यलोक दवानला।
दुर्गमा दुर्गमालिका दुर्गमात्मस्वरूपिणी,
दुर्गमार्ग प्रदा दुर्गमविद्या दुर्गमाश्रिता।
दुर्गमज्ञान संस्थाना दुर्गमध्यानभासिनी,
दुर्गमोहा दुर्गमगा दुर्गमार्थ स्वरूपिणी।
दुर्गमासुर संहन्त्री दुर्गमायुध धारिणी,
दुर्गमांगी दुर्गमता दुर्गम्या दुर्गमेश्वरी।
दुर्गभीमा दुर्गभामा दुर्गभा दुर्गदारिणी,
नामावलिमिमां यस्तु दुर्गाया मम मानवः।
पठेत सर्वभयान्मु क्तो भविष्यति न संशयः।।

यह प्रयोग सुरक्षा चक्र प्रयोग भी है और आज के युग की प्रकृति को देखते हुए स्थितियां सामान्य होने फिर भी इस तरह का प्रयोग कर लिया जाए तो यह सुरक्षा चक्र सदैव दैहिक व दैविक आपदाओं से सुरक्षित रखता है।

साक्षात् महेश्वर . . . पूज्यपाद गुरुदेव की कृपा का प्रत्यक्ष फल . . . जिसके साक्षी बन चुके हैं, अब तक सैकड़ों, हजारों साधक . . . जो कृतज्ञ और चिर ऋणी हो गए हैं. . .

"दीयते इति दीक्षा" अर्थात् जो प्रदान की जाए वह दीक्षा होती है और जो इसे प्रदान करने में समर्थ होते हैं वे होते हैं श्री सद्गुरुदेव। श्री सद्गुरुदेव स्वयमेव शक्ति के और कृपा के ऐसे पुंज होते हैं, जो कि अपनी कृपा के माध्यम से साधक अथवा शिष्य के रोग , दोष या दुख सभी समाप्त करने में पूर्ण समर्थ होते ही हैं। **वे साक्षात् शिव रूप में जहां एक ओर कुछ भी अनिष्ट निवारण करने में समर्थ होते हैं, अपनी तपः शक्ति रूपी तृतीय नेत्र की ज्वाला से कुछ भी भस्मीभूत करने में समर्थ होते हैं, फिर वहीं ब्रह्म स्वरूप में स्थित हो निर्मित कर देने की सामर्थ्य भी रखते हैं। वास्तव में तो ईश्वर की सदेह प्रस्तुति ही गुरु रूप में होती है** और जहां तक एक क्षेत्र विशेष की बात है अर्थात् दीक्षा द्वारा चिकित्सा की बात है फिर वहां वे अपनी कृपा का प्रवाह किसी भी रूप में कर सकते हैं, चाहे वह **धनवन्तरी दीक्षा** हो, चाहे वह **रोग निवारण दीक्षा** के रूप में हो, **कायाकल्प दीक्षा** हो अथवा **सम्मोहन दीक्षा,** तात्पर्य एक है कि व्यक्ति के शरीर को किसी भी प्रकार से सजाया - संवारा जा सकता है, क्योंकि जो वास्तव में सद्गुरु होते हैं वे शरीर की उपेक्षा नहीं करते, वे शरीर को सुखाने और तपाने की शिक्षा नहीं देते, वे जानते हैं कि शरीर ही वह माध्यम है जिसके द्वारा उनका शिष्य साधना के पथ पर गतिशील होता हुआ, अपने इच्छित को पूर्ण कर सकता है। शरीर भी तो एक तंत्र ही है।

रोग के पीछे व्यक्ति के जन्म - जन्मान्तर के संस्कार, उसके द्वारा किए गए पाप कर्मों का पूंजीभूत स्वरूप और माता - पिता के द्वारा मिले रक्त की दूषितता जैसे कई कारण होते हैं, इसी से कई बार व्यक्ति अनेक पद्धतियों का प्रयोग करने के बाद भी निराश हो जाता है, लेकिन उसे पूर्ण सफलता नहीं मिल पाती। वह जिस प्रकार का स्वास्थ्य , जिस प्रकार का सौन्दर्य अपने अन्दर भरना चाहता है, उसे प्राप्त नहीं हो पाता। ऐसी स्थिति में सद्गुरुदेव द्वारा दीक्षा प्राप्ति के माध्यम से व्यक्ति के अनेक जन्म - जन्मान्तरों के पाप कर्मों का निवारण संभव हो पाता है और फिर व्यक्ति बिना किसी उपचार के भी तेजी से स्वास्थ्य लाभ करने की ओर अग्रसर हो जाता है। कई बार ऐसा होता है कि किन्हीं इतर योनियों अथवा दूषित आत्माओं के कारण ही या द्वेष वश करा दिए गए तांत्रिक प्रयोगों के कारण भी, व्यक्ति का स्वास्थ्य गिरा - गिरा रहने लगता है। विभिन्न प्रकार की समस्याओं, विभिन्न प्रकार के रोगों एवं विभिन्न प्रकार के तांत्रिक प्रयोगों को देखते हुए, यह संभव नहीं होता कि व्यक्ति के लिए उसके रोग निवारण अथवा उत्तम स्वास्थ्य के लिए कोई एक दीक्षा ही निर्धारित की जा सके, जिस प्रकार से एक कुशल चिकित्सक एक ही रोग में रोगी की प्रकृति के अनुकूल अलग - अलग प्रकार की औषधि का निर्धारण करता है, उसी प्रकार से पूज्यपाद गुरुदेव भी शिष्य की प्रकृति एवं पूर्व जन्म के क्रम को समझकर उचित दीक्षा का निर्धारण करते हैं। **साधकों का भी यही मत है कि निश्चित रूप से आज के व्यस्त युग में 'साधना' की अपेक्षा 'दीक्षा' का मार्ग एक सरल पद्धति है, और वह भी जब पूज्यपाद गुरुदेव जैसे सिद्ध हस्त तपः पुंज व आयुर्वेद के आचार्य से प्राप्त हो रही हो।**

धनवन्तरी के जीवन का रहस्य

मृगाक्षी रूप गर्विता किन्नरी साधना

" देव वैद्य धनवन्तरी भी तब तक पूर्णता नहीं प्राप्त कर सके जब तक उन्होंने अपने को रस सिद्ध नहीं कर लिया, अपने को रस साधना का आचार्य नहीं बना लिया. . . अद्वितीय देव पुरुष 'धनवन्तरी' जिनके समक्ष अप्सराएं और देव कन्याएं हाथ जोड़े खड़ी रहती थीं, उनको भी यदि कोई अपने रूप और यौवन से आकर्षित कर सकी तो वह थी 'मृगाक्षी रूप गर्विता '. . . और जिसका रूप गर्व पिघल गया धनवन्तरी की साधना और तपस्या के समक्ष . . .

न्यौछावर हो गई ऐसे युग पुरुष पर और आधार बन गई उनकी साधना और रस विद्या की परिपूर्णता की . . . फिर तो रची गई दोनों के मध्य यौवन की अठखेलियां, और धनवन्तरी ने पा लिया अपना यौवन . . . वापस मृगाक्षी की अठखेलियों से , और दे दी अपने चिकित्सा शास्त्र को ऐसी परिपूर्णता कि फिर वह अमर हो गए, एक कुशल वैद्य के रूप में, नवयौवन प्रदाता के रूप में . . ."

किन्नरी का सौन्दर्य . . . शीतकाल में वृक्ष पर गिरी बर्फ की भांति शीतल और आंखों को सुखद स्पर्श देने वाला, जो झलके उसके गोल और भोले चेहरे से। टुकुर - टुकुर देखती काली कजरारी आंखों में भोलापन ही भोलापन तो लिखा दिखता है। अप्सराओं के चकाचौंध भरे रूप रंग की जगह उसका सौन्दर्य लिए होता है एक ठहराव . . . और उस शांत ठहराव में, निर्मल जल की भांति शांत चेहरे में दिखाई देता है प्रेम का प्रतिबिम्ब, उसी की तरह निश्छल और शांत , जिसमें कोई उत्तेजना नहीं, कोई छिछलापन नहीं, वासनाओं का उमड़ता ज्वार नहीं और न कोई उद्वेलन। अप्सराओं के तीखे नयन नक्श की जगह किन्नरी के चेहरे पर बिखरी होती है मृदुता, उसके अंग - अंग की तरह ही कोमल और सुडौलता लिए हुए . . . सभी रूप में, चाहे वह अण्डाकार चेहरा हो या भरे

- भरे स्वस्थ कपोल, आंखों की नरमी भी तो . . . व्यवहार में घुली शालीनता, अपनापन लिए होंठों से मुखरित होती गुनगुनाहट में जीवन का मधुर संगीत सुनाती हुई।

ऐसी ही तो है मृगाक्षी रूप गर्विता। गर्व अपने रूप का, अपने हृदय में भरी गुणों की खान का और गर्व अपना नारीत्व का, ऐसा गर्व जिसमें कोई हेठी नहीं, गर्व जिसमें कि वह बोध हो कि मैं नारी हूं, पुरुष को पूर्ण करने में समर्थ, अपने हृदय से प्रेम - प्रदान करने में समर्थ, गर्व जो कि उसमें समाया हो अपनी आन्तरिकताओं को लेकर और ऐसा ही मादक गर्व जो घंटियों की तरह खनकते हुए आकर घुल जाता हो कानों में, जीवन को आश्वस्ति देता हुआ। अपने रूप के प्रकाश से अपने यौवन की आभा से हल्की - हल्की, दबी - दबी उठती हंसी की फुलझड़ियों से, जब यह अपने ही यौवन की मादकता पर मुग्ध हो जाती है, खुद ही उसमें खोकर जब अपनी खिलखिलाहट बिखेर देती है, भूल जाती है कि वह कहां है, और कैसे है, तो **घनी से घनी रात में भी खिल जाते हैं सौ - सौ दीपक, ज्यों दीपावली अभी गई न हो, जाते - जाते फिर लौट आई हो. . . उसे भी पता लग गया हो कि मृगाक्षी जो उतर आई है, इस धरा पर . . .** उसके कोमल होठों के भीतर से झांकती, स्वच्छ श्वेत छोटी और सुघड़ दंत पंक्ति की झिलमिलाहटों से भर जाता है, मन में, जीवन में उत्साह का वातावरण। दाड़िम के दानों की तरह एक पर एक चढ़ गये दांत और स्वस्थ कपोलों की आभा, जिनकी कोई उपमा ही नहीं, और जिस तरह से इसका ध्यान प्राचीन शास्त्र में मिलता है, वही इसके रूप की एक हल्की सी झलक है -- ''व्यर्थ है कामदेव के पंच बाणों की संज्ञा क्योंकि मृगाक्षी की मादक खिलखिलाहट की उसमें गणना ही नहीं की गई है, जिससे मुनिजन अपना चिंतन छोड़ इस भ्रम में पड़ जाते हैं कि यह कोई नूपुर ध्वनि है अथवा किसी वाद्य यंत्र से निकला कोई संगीत का स्वर, कल्पना ही नहीं कर पाते, विश्वास ही नहीं होता कि ऐसा नारी स्वर भी हो सकता है। मंद

नूपुरों का ही बाहुल्य, कमर की करधनी , पांवों की पायजेब और कंगनों की रूनझुन से लेकर सारी देह से भी. . .

पल-पल और अधिक गहरी होती, मादक ध्वनि की . . . खिलखिलाहटों से. . .

पीत आभा के रेशमी वस्त्रों से सुसज्जित, सुडौल अंगों से युक्त, मादक छवि वाली, मध्यम कद की यह रूप गर्विता जिसके आभूषणों में यत्र - तत्र नूपुर की बाहुल्य है . . . पैरों में पड़ी पायजेब या कमर में पड़ी करधनी अथवा केशराशि और उन्नत वक्ष स्थल को मर्यादा में बांधने काअसफल प्रयास करते स्वर्ण तारों से रचित आभूषण मण्डल . . . जिसके शरीर से आती मादकता की ध्वनि इन नूपुरों के संगीत को भी लज्जित कर रही है, वही तो है रूप गर्विता . . . रूप भी अपनी परिभाषा भूल गया हो और निहार रहा हो मृगाक्षी के चेहरे को खुद अपने - आप को वहां खिला - खिला देखकर आश्चर्य चकित और स्तम्भित हो कर।''

तभी तो धनवन्तरी जैसे श्रेष्ठ आचार्य भी बाध्य हो गए ऐसी अद्वितीय सुन्दरी को अपने जीवन में उतार कर अपने शास्त्र को पूर्णता देने के लिए। सम्पूर्ण चिकित्सा शास्त्र लिखने के बाद भी उन्हें वह उपाय नहीं मिल रहा था, जो एक ही बार में उनका सम्पूर्ण काया-कल्प कर दे। शिथिल पड़ गए शरीर और इन्द्रियों को पुनः यौवनवान बना दे, क्योंकि यौवन के अभाव में तो फिर व्यर्थ है सारी चिकित्सा पद्धति। **शरीर निरोग हो लेकिन उसमें यौवन की छलछलाहट न आए, उसमें कुछ प्राप्त कर लेने की, किसी को अपना बना लेने की अदम्य लालसाएं न उफन रही हों तो फिर वह यौवन किस अर्थ का . . . .** और यही उपाय नहीं मिल रहा था धनवन्तरी को, और न वे बन पा रहे थे चिकित्सा जगत के अद्वितीय आचार्य। कितने प्रकार की जड़ी - बूटियां, कितने प्रकार के भस्म, कितने प्रकार के लेप और सभी प्रकार के रस का प्रयोग करके देख चुके थे, लेकिन कोई तो नहीं सिद्ध हुआ, उनकी आशाओं पर पूर्ण रूप से खरा उतरता हुआ और तभी उन्हें प्राप्त हुआ यह साधना सूत्र। साधना जगत में वे तो कल्पना भी नहीं कर रहे थे, चिकित्सा जगत की इस समस्या का अद्वितीय यौवन प्राप्त करने का -- यह रहस्य जो किन्हीं जड़ी-बूटियों में नहीं, जो जाकर छुप गया है मृगाक्षी रूप गर्विता की मादक देह में, वहीं से तो खिलेगी इस शरीर और मन में यौवन की को तरंगें और सच भी तो है बिना ऐसे सौन्दर्य का साक्षात किए , बिना ऐसे सौन्दर्य को बांहों में भरे, फिर कहां से फूट सकती है इस जर्जर शरीर में यौवन की गुनगुनाहट और

उल्लसित हो गए आचार्य धनवन्तरी, अपने चिकित्सा शास्त्र की इस परिपूर्णता का रहस्य प्राप्त कर।

वे तो सिद्धतम आचार्य हुए हैं, इस चिकित्सा जगत के ही नहीं, साधना जगत के भी। और उन्होंने ढूंढ निकाली मृगाक्षी रूप गर्विता को अपने वश में करने की एक नवीन पद्धति। सच तो यह है कि मृगाक्षी खुद आतुर हो गयी, ऐसे युग पुरुष का सान्निध्य प्राप्त करने को, और इसी तालमेल का परिणाम बनी रूप गर्विता की यह साधना। इसने फिर आगे मार्ग प्रशस्त कर दिया प्रत्येक ऐसे साधक के लिए जो आतुर हो अपने जीवन को नवयौवन से भरने के लिए। ऐसे सौन्दर्य का सान्निध्य पाकर अपने जीवन में कुछ नया रचित कर देने के लिए। **एक साधारण सी अप्सरा साधना नहीं या सामान्य किन्नरी साधना नहीं यह तो किन्नरियों में भी श्रेष्ठ, रूप का आधार, रूप गर्विता की उपाधि से विभूषित, एक नारी देह में घुला सौन्दर्य, अपने रग - रग में बसा लेने की बात है।**

सायंकाल जब सूर्य अस्त हो जाए तब अत्यंत उल्लसित मन से साधना में प्रवृत्त हों। इस साधना के लिए कोई विशेष दिवस निर्धारित नहीं है, वस्त्रों का भी कोई बंधंन नहीं है। लेकिन पुरुष साधक हो तो पीली रेशमी धोती और स्त्री साधिका हो तो पीले रंग की रेशमी साड़ी तथा पीले रंग की ही कन्चुकी पहन कर बालों को खुला रखे और इत्र आदि से अपने को सुगन्धित कर ले। दिशा दक्षिण के अतिरिक्त कोई भी हो सकती है। सामने पीले रेशमी वस्त्र पर ही तांबे के पात्र में **''अष्ट किन्नर्यै नमः ''** कुंकुम से लिखकर **अष्ट किन्नरी यंत्र** स्थापित करें जिसका तात्पर्य है कि मृगाक्षी अपनी अष्ट शक्तियों के साथ आवाहित और मुझमें समाहित हो। इसका पूजन पुष्प की पंखुड़ियों, अक्षत एवं सुगंधित इत्र से करें तथा निम्न मंत्र का एक सौ आठ बार उच्चारण करते हुए केसर की एक सौ आठ बिन्दियों को इस यंत्र पर लगाएं, इसके लिए आप **सौन्दर्य माला** का प्रयोग कर सकते हैं, अथवा यदि आपके पास पहले से कोई मंत्र सिद्ध और बिना प्रयुक्त की हुई **स्फटिक माला** पड़ी हो तो उसका प्रयोग भी कर सकते हैं। दाहिने हाथ से मंत्र जप करते हुए धीमे क्रम में बांए हाथ की अनामिका से केसर की बिन्दियां यंत्र पर लगाते रह सकते हैं। घी का दीपक पूरे साधनाकाल में अवश्य ही जलते रहना चाहिए। यह साधना १५ दिनों की है। इसे किसी भी माह के शुक्ल पक्ष की प्रतिप्रदा से आरम्भ कर पूर्णिमा तक किया जाए तो अधिक लाभप्रद देखा गया है। प्रतिदिन साधना के उपरान्त यंत्र एवं माला को वहीं स्थापित रहने दें तथा उसे किसी स्वच्छ वस्त्र से ढंक दें।

एक ही पल में पुनः काले हो गए बाल और बदलने लगी रंगत त्वचा की . . . ज्यों पर्दा हटा कर यौवन फिर चुपके से आ गया . . . पहले की ही तरह, शरारत से भरा . . .

मंत्र -

ॐ मृगाक्षी अप्सरायै वश्यं कार्य सिद्धयं फट्

प्रतिदिन एक माला अर्थात १०८ बार उच्चारण करने के साथ-साथ अंतिम दिन अर्थात पूर्णिमा को इस मंत्र की ११ माला मंत्र जप करना है अतः उस दिन साधना में एकाग्र होकर सावधानी पूर्वक बैठें, वातावरण को सुगंध से भर दें और पूजन स्थान पर सुगंधित पुष्पों का आसन बना कर उस पर यंत्र स्थापित करें। इस दिन सर्वथा एकान्त और गोपनीयता आवश्यक है, क्योंकि यही दिवस है मृगाक्षी के साक्षात् उपस्थित होने का और इसमें कोई भी विघ्न होने से वह उपस्थित होते - होते रह जाती है।

साधना पूर्ण होते - होते कमरे की सुगन्ध बढ़ती दिख सकती है या प्रकाश बढ़ता दिख सकता है या नूपुर ध्वनि आरम्भ हो जाती है और ठीक यही समय है मृगाक्षी से वचन लेने का उसे जीवन भर अपनी प्रेमिका, अपनी सहचरी बना कर रखने का।

इस प्रकार यह जीवन की परिवर्तनकारी साधना सम्पन्न होती है और आधार बन जाती है आगामी साधनाओं की सफलता का **क्योंकि जहां ऐसी श्रेष्ठ किन्नरी का साहचर्य हो वहीं प्रेम की कोमलता है, फिर वहीं यौवन की चमकती बिजली जैसी तीव्रता है और जो आधार है, किसी भी साधना या विद्या को प्राप्त कर लेने का।**

अद्वितीय आचार्य धनवन्तरी द्वारा प्राप्त, एवं अनुभूत यह पद्धति सौ टंच खरी तथा प्रामाणिक है ही।

पल पल अमृत छलके वाणी से

जो निरन्तर सृजित हो रहा है पूज्यपाद गुरुदेव की रसमय वाणी में

आडियो (प्रति कैसेट-३०/-)

कायाकल्प साधना-

पूज्यपाद गुरुदेव की वाणी में कायाकल्प की प्राचीन पद्धति के सभी रहस्यों को स्पष्ट किया गया है, प्रामाणिकता और दुर्लभ मंत्रो के साथ . . .

कुण्डलिनी ब्रह्म-

क्योंकि संगीत से ही स्फुटित होती है उर्जा की अलौकिक लहरियां, तन मन को नवीनता देने में समर्थ, इसी नाद संगीत का अनोखा अंकन . . .

विशेष लामा मंत्र-

तिब्बत की लामा पद्धति में ही छिपा है सिद्धियों में सफलता का रहस्य, पूज्यपाद गुरुदेव द्वारा उन्हीं मंत्रों का विशेष पद्धति से स्वयं उच्चारण कर वर्णन।

वीडियो (प्रति कैसेट - २००/-)

जीवन पग-पग साधना है-

जीवन जिस प्रकार हर पग पर मधुरता और साधना का समन्वय है, वर्णित करता और अपने साथ प्रत्येक दृश्य में नवीन भाव भूमि पर ले जाता यह एक दुर्लभ वीडियो कैसेट

स्वर्ण देहा अप्सरा-

सौन्दर्य और शारीरिक सौष्ठव का सिद्ध प्रयोग, पूर्णता से प्रामाणिक अंकन, अनेक कौतुहूल पूर्ण दृश्यों के साथ, स्वयं पूज्यपाद गुरुदेव के सान्निध्य में सम्पन्न हुई एक गुह्य साधना।

सम्पर्क

गुरुधाम
३०६ ,कोहाट ऐन्क्लेव, पीतमपुरा,
नई दिल्ली -११००३४
फोन-०११-७१८२२४८
फेक्स-०११-७१८६७००
अथवा
मंत्र शक्ति केन्द्र
डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाईकोर्ट कॉलोनी,
जोधपुर-३४२००१,
फोन-०२९१-३२२०६

हाँ! नपुंसकता निवारण संभव है . . . दीक्षा पद्धति से

" पुरुष और पौरुष --दोनों एक दूसरे के पर्याय ही हैं, शारीरिक रूप से भी और आन्तरिक रूप से भी, पौरुष बाह्य रूप से देखने में तो सौन्दर्य की विषय - वस्तु होता ही है, उतना ही अन्दर उफनती हुई भावना से भी . . .

कारण कोई भी हो, जब थम जाती है ऐसी उफनती भावनाएं, मस्ती, जोश और दमखम से भरा हौसला . ... तो फिर मजबूर हो जाना पड़ता है, सोचने के लिए, अपने बारे में कि यह क्यों हो गया हमारे भीतर, क्यों मंद पड़ गयी हमारी आंखों की चिंगारी . . .

क्योंकि पौरुष केवल स्त्री - पुरुष सम्बन्धों या देह तक ही तो सिमटने वाली बात नहीं . . . "

पौरुष की बात कहें या उसकी विपरीत स्थिति नपुंसकता की, मानस में जो चक्र बनता है वह केवल स्त्री - पुरुष सम्बन्ध को लेकर ही बनता है। यह अधूरा सच है क्योंकि नपुंसकता तो व्यक्ति के शारीरिक पक्ष से संबंधित होने के साथ - साथ उससे भी अधिक मानसिक पक्ष से संबंधित होता है। सम्पूर्ण विश्व के मनोवैज्ञानिक और यौन विशेषज्ञ निरन्तर इस दिशा में शोध करने और आंकड़े एकत्र करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि पुरुषों में नपुंसकता की स्थिति शारीरिक कारणों की अपेक्षा, मानसिक कारणों से अधिक बढ़ रही है।

यौन जीवन का क्षेत्र जटिल और विचित्रता से भरा होता है। **किन्हीं भी दो स्त्री - पुरुषों के बीच में यह निर्धारित नहीं किया जा सकता कि वे दोनों किस प्रकार से एक दूसरे के लिए आदर्श सहयोगी सिद्ध होंगे, किस प्रकार से एक दूसरे की भावनाओं को समझने वाले व तद्नुकूल आचरण कर पूर्ण तृप्ति देने में समर्थ होंगे**। इसकी पूर्व धारण भी नहीं बनाई जा सकती और आज जबकि विवाह पूर्व यौन संबंध एक सामान्य बात हो गयी है, तब भी यह पूर्ण रूप से निर्धारित नहीं हो पाता तथा वास्तविकताएं विवाह के पश्चात् ही खुलकर सामने आ पाती हैं।

मनोजगत का विषय हो अथवा शारीरिक पक्ष का , पुरुष के सन्दर्भ में नपुंसकता अत्यन्त दुखदायी स्थिति होती है। किशोरावस्था की अनियमित जीवन शैली, दूषित आदतों, अप्राकृतिक यौन - संसर्गों, काम - साहित्य का अध्ययन या फिर बढ़ती हुई नशाखोरी कोई भी आगे चलकर पुरुष में नपुंसकता अथवा अपनी पत्नी को सन्तुष्ट न कर पाने की कमी उत्पन्न कर देती है। पूर्व की भांति अब ऐसी जीवन दशाएं नहीं रही हैं कि स्त्री इसे अपनी नियति मानकर और 'पति

परमेश्वर' की धारणा पर स्थिर रहती हुई, अपनी अतृप्ति को छुपाए हुए, घर - गृहस्थी और बच्चों में अपने - आप को भुला दे। **अब स्त्री, पुरुष के साथ आ खड़ी हुई है और यौन जीवन में बराबर की सहयोगिनी बनकर पूर्ण सुख प्राप्त करने की आकांक्षी रहती है,** जिसके अभाव में अन्यथा आ खड़ी होती हैं अनेक व्यावहारिक कठिनाइयां। उधर प्रायः पुरुष लाचार हो जाता है, अपनी पत्नी की अत्यधिक कामुकता के कारण और कतराने लगता है सामान्य सहवास से भी। यदि चिकित्सा की दृष्टि से पुरुष की नपुंसकता को समझने का प्रयास करें तो विविध प्रकार की कठिनाइयां अथवा शारीरिक त्रुटियां सामने आती हैं। सहवास काल में स्तम्भन शक्ति का अभाव होना, शीघ्र पतन जैसी कमजोरी होना, पर्याप्त लिंगोद्रेक न होना, सम्भोग काल में दाहकता अथवा पीड़ा अनुभव करना , वीर्य का पतला अथवा दुर्गन्ध पूर्ण होना, सम्भोग के पश्चात सारे शरीर में विशेष रूप से कमर में असह्य पीड़ा अनुभव करना तथा अन्य प्रकार से कामकला में सिद्धहस्त न होना एवं यंत्र चालित ढंग से क्रिया- कलाप सम्पन्न करना इत्यादि स्थितियां नपुंसकता की श्रेणी में ही मानी जाती हैं। इन सब का तात्पर्य यह है कि व्यक्ति कामकला में सक्षम नहीं है और उस काल तक क्रीड़ारत नहीं हो पाता कि उसकी पत्नी भी पूर्ण रूप से सन्तुष्ट हो सके।

मानसिक रूप से यह स्थिति इस प्रकार का रूप धारण कर लेती है कि व्यक्ति रति - कर्म के लिए आतुर एवं इच्छुक नहीं रह जाता, उसमें लालसाएं समाप्त हो जाती हैं, तथा एक प्रकार से सम्भोग के प्रति अरुचि मन में पनपने लगती है। ऐसा अनेक कारणों से हो सकता है, जीवन साथी के प्रति पूर्ण रूप से भावनात्मक लगाव न होना, जीवन साथी का असभ्य अथवा फूहड़ व्यवहार होना, उसका अत्याधिक कामुक होना, अथवा कोई अन्य मानसिक दबाव। प्रायः व्यक्ति दैनिक जीवन - चर्या में एवं कार्यों के दबाव में ही इस प्रकार तनाव ग्रस्त हो जाता है एवं दबाव से भरा रहता है, कि वह जीवन के इस पक्ष की ओर से कट जाता है **क्योंकि जीवन शक्ति तो शरीर में एक ही है, वह उसका किसी एक दिशा विशेष में ही प्रयोग कर सकता है।**

> **नपुंसकता का कारण शारीरिक दुर्बलता से भी अधिक मानसिक स्थिति है, ऐसा मानना है सभी मनोवैज्ञानिकों का।**
>
> **लेकिन इसके आगे का उपाय उनको भी तो ज्ञात नहीं. . .**
>
> **अलग-अलग स्थितियों में निर्धारित हैं अलग - अलग दीक्षाएं . . . कायाकल्प,अनंग, धनवन्तरी या फिर अप्सरा दीक्षा भी तो!**

संक्षेप में यही कहा जा सकता है कि व्यक्ति अनेक कारणों से नपुंसक हो सकता है अथवा नपुंसकता जैसी स्थितियों में रह सकता है और यह स्थिति उसके जीवन के लिए घातक हो सकती है क्योंकि वह धीरे- धीरे निस्तेज और निरुत्साह बनने लग जाता है। ऐसी जटिल स्थितियों में मनोवैज्ञानिक प्रयास तथा चिकित्सकीय प्रयास पूर्ण रूप से सफल सिद्ध नहीं होते, क्योंकि व्यक्ति अपने आन्तरिक भाव या वह किन दबावों के कारण इस प्रकार का हो गया है , खुलकर नहीं कह पाता, तब *ऐसी स्थिति में एक ही मार्ग शेष रह जाता है और वह होता है कि व्यक्ति उचित दीक्षाओं के माध्यम से अपने अन्दर गुणकारी परिवर्तन ला सके।*

पाठक आश्चर्य कर सकते हैं कि क्या दीक्षा के माध्यम से ऐसी स्थितियों का भी समाधान किया जा सकता है! निःसन्देह, क्योंकि साधना के मार्ग में शरीर को गौण माना ही नहीं गया है, भोग को त्याज्य घोषित किया ही नहीं गया, क्योंकि साधना तो व्यक्ति के सम्पूर्ण रूप से गठन की बात है और जो व्यक्ति अपने दैनिक जीवन में ही किसी न्यूनता अथवा हीनता से ग्रसित हो वह फिर कैसे आगे बढ़कर साधना में श्रेष्ठ स्थिति प्राप्त कर सकता है। साधना और सिद्धि तो उत्साह और उमंग से भरकर पौरुष द्वारा प्राप्त करने की क्रिया है। जहां उत्साह व उमंग की बात आती है, वहां काम तत्व की उपेक्षा की ही नहीं जा सकती क्योंकि काम तत्व ही व्यक्ति के जीवन में गतिशीलता का आधार है, काम तत्व ही उसके देह रूपी पुष्प में सुगन्ध है, और योग्य गुरु अपने शिष्य में ऐसी समस्त विकृतियों और विसंगतियों को उचित दीक्षा के माध्यम से दूर कर देते हैं। ऐसा वे **अनंग दीक्षा** द्वारा भी कर सकते हैं, **कायाकल्प दीक्षा** के द्वारा भी कर सकते हैं, **सम्मोहन दीक्षा** के द्वारा अथवा **धनवन्तरी दीक्षा** के द्वारा भी, साधक की स्थिति को समझ कर उसकी दीक्षा का निर्धारण गुरुदेव स्वयं ही करते हैं क्योंकि वे पूर्ण हैं और इसी से उन्हें ज्ञात रहता है कि मुझे कब और कौन सा उपाय प्रयोग में लाना है। विशेष परिस्थितियों में कुछ गोपनीय जड़ी-बूटियों के सेवन के पश्चात भी दीक्षा प्रदान की जाती है और जो साधक पूर्व में पूज्यपाद गुरुदेव से ऐसी दीक्षाएं प्राप्त कर चुके हैं उन्हें अनुभव है कि किस प्रकार से पूज्यपाद गुरुदेव ने उन्हें दीक्षा के तीन दिन पहले तक **शक्ति**

(शेष पृष्ठ ४१ पर)

यदि किसी धनवान से पूछिए कि क्या आप अपने जीवन से सन्तुष्ट हैं और वह आपका आत्मीय हुआ तो निश्चय ही कुछ मुस्करा कर 'यदि - किन्तु' की भाषा में बोलकर यही कहेगा. . . **काश!** . . .किसी कवि से पूछिए कि क्या तुम अपने अन्तर की भावनाओं को व्यक्त कर सके हो, तो उसका भी यही उत्तर होगा . . . **काश!**. . . किसी राजनेता से पूछा जाए कि आपकी इच्छा क्या है, तो वहां पर भी यही. . . **काश!**

जीवन के किसी भी क्षेत्र में किसी भी व्यक्ति से उसका हृदय टटोल कर यदि छिपे तो प्रत्येक स्थान पर यही '**काश!**' एक शून्य की तरह बचा रह जाता है, जो व्यक्ति के जीवन की अपूर्णता भी हो सकती है और उसकी विडम्बना भी। प्रत्येक व्यक्ति अपने ढंग से, चाहे वह भौतिक पक्ष से संबंधित हो, या आध्यात्मिक पक्ष से, कला, सौन्दर्य, प्रेम सभी क्षेत्रों में व्यक्ति को सदा ही यह लगता रहता है कि यदि मेरे जीवन में **'ऐसा'** कुछ जुड़ जाता, तो मैं जीवन में **'ऐसा'** कुछ प्राप्त कर लेता, जो मुझे पूर्ण तृप्ति व जीवन की सार्थकता दे देता। यह व्यक्ति की तृष्णा नहीं है, वरन यह तो उसके जीवन का बहता हुआ वह प्रवाह है, जो छलकता हुआ बहता रहता है। जब इस प्रवाह में बाधा रूपी कोई शिलाखंड आकर गिर जाता है, तब यह प्रवाह तो रुक ही जाता है, साथ उसमें तैरने लगती है कुंठा और हताशा की बदबूदार काई और धीरे- धीरे करके सारा जीवन ही विषैला हो जाता है, जिसमें न तो संगीत होता है, न स्वच्छता और न शीतलता. . .

जब जीवन के प्रवाह में कोई शिलाखण्ड आकर गिर जाए तो उसे छेनी और हथौड़े लेकर ठुक - ठुक करके वर्षों में नहीं तोड़ा जाता, यदि वह शिला खंड बहुत दिन तक पड़ा रह जाए तो धीरे - धीरे उसके पीछे जमा होता हुआ जल किसी दिन विध्वंस का कारण भी बन सकता

काश! . . . काश! मुझे पहले ही ज्ञात हो गया होता इस दीक्षा का अर्थ, जीवन को संवारने का रहस्य. . .

तो फिर न भटकना पड़ता मुझे इतने वर्ष . . . जीवन को निर्मित कर लेना -- तनाव रहित व आध्यात्मिक चेतना से भरपूर. . .

तंत्र की एक महत्वपूर्ण दीक्षा दक्षिणमार्गी ढंग से . . . विशेषकर गृहस्थ शिष्यों के लिए, जिनके लिए अनुकूल नहीं तंत्र का वाम मार्ग. . . तिब्बत के गुह्य मठों की अद्वितीय 'श्री चक्र' साधनाओं का मूल रहस्य. . .

. . . इस दीक्षा द्वारा प्रत्येक के जीवन में सहज सुलभ. . .

है, और इसी से ऐसे शिला खंड को डायनामाइट की तरह विस्फोट कर एक ही झटके में तोड़ देना होता है। **साधना के क्षेत्र में यही डायनामाइट प्रयुक्त होती है शक्ति साधनाओं के रूप में अथवा पूज्य गुरुदेव द्वारा प्राप्त शक्तिपात के माध्यम से।** जीवन के ऐसे शिलाखंड, साधारण प्रयास से हटाए नहीं जा सकते और न ही प्राप्त की जा सकती है, जीवन में स्वच्छता और आनन्द की लहरियां, जो निर्बाध बहती नदी का एक अभिन्न अंग होती हैं।

शक्ति साधनाएं तो कई हैं। महाविद्या साधनाएं भी दस हैं, लेकिन ऐसी कौन सी प्रक्रिया है, ऐसा कौन सा प्रभाव है, जो एक ही झटके में समस्त कठिनाइयां और जीवन की विविध बाधाओं को समाप्त कर दे, इस पर गहन विचार करने के पश्चात् पूज्यपाद गुरुदेव इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि केवल **'षोडशी त्रिपुर सुन्दरी'** ही एक मात्र ऐसी दीक्षा है, जो व्यक्ति के समस्त कष्टों का निवारण करने में समर्थ है। केवल यही एक ऐसी महाविद्या है जो जीवन के प्रत्येक पक्ष से संबंध रखती है। तभी तो षोडशी त्रिपुर सुन्दरी के अनन्य उपासकों में **आदिशंकराचार्य** जैसे प्रखर युग पुरुष भी सम्मिलित रहे, जिनके सम्पूर्ण जीवन में विजय का रहस्य, भारत के चारों कोनों को एकता के सूत्र में बद्ध करने का आधार ही उनके गुरुदेव **पूज्य गोविन्दपाद** द्वारा प्रदत्त षोडशी त्रिपुर सुन्दरी दीक्षा ही रही।

"त्रिपुरार्णव" नामक ग्रंथ में इन्हीं त्रिपुर सुन्दरी की व्याख्या इस प्रकार की गई है -- **"सुष्मना"**, **"पिंगला"** और **"इड़ा"** यही तीन मुख्य नाड़ियां हैं और मन, बुद्धि व चित्त ये तीन पुर है, जिनमें निवास करने वाली देवी ही त्रिपुरा हैं। त्रिपुरा की उपासना विभिन्न विशेषणों से की गई है। इन्हीं को **'ललिता'** कहा गया है इन्हीं को **'त्रिपुराम्बा'**, **'त्रिपुर सिद्धा'**, **'त्रिपुर मालिनी'**, **'त्रिपुरेश्वरी'** भी कहा गया है। **पद्म पुराण** में वर्णित है कि ऐसी सम्पूर्ण सुन्दरी और सर्वांग सुन्दर देवी द्वारा जो कुछ भी प्रदत्त होगा वह विशिष्ट होगा ही।

त्रिपुर सुन्दरी दीक्षा अत्यंत दुर्लभ और सौभाग्य से प्राप्त होने की क्रिया है, क्योंकि इसके विषय में शास्त्रों में स्पष्ट निर्देश है कि राज्य भी दिया जा सकता है, सिर भी बलिदान में दिया जा सकता है, लेकिन त्रिपुर सुन्दरी साधना का रहस्य नहीं दिया जा सकता। पहले शिष्य जब एक साल तक अपने गुरु के आश्रम में रहकर निःस्वार्थ भाव से उनकी सेवा करता था तब वह इस दीक्षा को प्राप्त करने का अधिकारी समझा जाता था और इसके पश्चात् आगे चलकर इसका गोपनीय मंत्र दिया जाता था। जिसकी वह विधिवत् साधना करता था। यह दीक्षा और साधना, शास्त्र परम्परा से नहीं अपितु कर्ण परम्परा से इस भूतल पर विद्यमान है -- **कर्णात् कर्णोपदशेन सम्प्राप्तम वनीतले।** (नित्यषोडिशिकार्णव) **अर्थात गुरु परम्परा से ही यह विद्या इस भूतल पर सुरक्षित है। केवल गुरु मुख द्वारा ही इसका ज्ञान और लाभ जीवन में प्राप्त किया जा सकता है।**

यह केवल एक आध्यात्मिक विद्या की दीक्षा नहीं है, यह तो विजय यात्रा की दुन्दुभी है, जो व्यक्ति जीवन के किसी भी क्षेत्र में शिखर तक पहुंचने की लालसा रखता है, तब उसके लिए यह दीक्षा जीवन का एक नितांत आवश्यक पक्ष बन जाती है। फिर यही दीक्षा जीवन भर व्यक्ति के साथ पग - पग पर सहायक बनती हुई उसके जीवन में पूर्णता का आधार बनती है।

षोडश त्रिपुर सुन्दरी की साधना और उपासना ही प्राचीन भारत में **श्री विद्या साधना** और **श्री चक्र साधना** के रूप में विख्यात रही, जो कालान्तर में बौद्धों द्वारा ग्रहण कर सुदूर चीन, जापान में विस्तृत हुई। **तिब्बत के गुह्य मठों के अद्वितीय साधनाओं का आधार यही श्री चक्र साधना है।** यद्यपि परम्परा से और भाषा से नाम में किंचित परिवर्तन हो गया है।

आज यही दीक्षा चैतन्य घन स्वरूप पूज्यपाद गुरुदेव के श्रीमुख से हम सभी के लिए हस्तकमलावत रूप से सुलभ है और सत्य तो यह है कि श्री विद्या साधना का आधार, श्री विद्या का रहस्य केवल मात्र गुरुचरणों में ही निहित है। गुरु को ही शास्त्रों में षोडशनन्द नाथ की संज्ञा से विभूषित किया गया है अर्थात षोडश त्रिपुर सुन्दरी के अधिष्ठात्रा देव श्री गुरुदेव ही हैं --

षोडशम्बार सास्वाद प्रसक्तकरपात्रिणे।
षोडशनन्दनाथाय नतोऽमि गुरुमूर्त्ये।।

"योगिनी हृदय" में कहा गया है जिस प्रकार से मछली फंसाने के जाल में सभी सूत्र लोहे के वलय में पिरोए रहते हैं, वैसे ही इस त्रिपुर साधना में संसार के सभी मंत्र पिरोएं हैं। इससे स्पष्ट है कि ऐसी श्रेष्ठ साधना को छोड़कर किसी भी अन्य की साधना करना किसी भी प्रकार से उचित नहीं कही जा सकती।

प्रिया वर्ग, रति प्रिया वर्ग, सुरति प्रिया वर्ग, अह्लादिनी वर्ग और ऐसे ही कई - कई उपवर्गों में से एक वर्ग है **'मानिनी अप्सरा वर्ग'**। जिसमें सर्वाधिक मादक अप्सरा है **'यौवन गर्विता।'** अपने नाम के ही अनुरूप यौवन से सिर से पांव तक भीगी- भीगी, **जो कार्तिक माह से बसंत ऋतु तक अपने रूप बल की आभा से सारे शरद ऋतु को पिघलाती हुई और अपने यौवन से मदमस्त होकर, उसे देह में न संभाल कर रख पाने के कारण इस धरा पर छलकाती हुई, विचरण करती रहती है,** निखर आती है इसकी अदाओं से सारी शरद ऋतु, सम्पूर्ण शिशिर में कोई खनक और ऐसी ऊष्मा, जिससे तैर जाती है साधक की आंखों में भी मादकता की इतराती लहरें।

स्वर्णिम आभा से मंडित, तनंवंगी यौवन गर्विता अपनी इकहरी और बेंत की तरह लचकती तरल देह के साथ जब अपने घने बालों को समेट और सहेज रूचि ले - लेकर शिरोभाग पर गूंथती है तो लगता है कि उसने अपनी केश राशि में सभी साधकों और योगियों के पौरुष को भी बांध, अपनी सघन केश राशि में बसाकर, अपनी मस्तक पर धारण कर लिया है, और इतरा रही है-- उनकी इस पराजय पर। वास्तव में ही सभी योगी और मुनि भी तो इसी तरह खो जाना चाहते हैं, इसकी सघन केश राशि में, जो बंधी हो कोमल ग्रीवा को चुम्बित करती हुई। आंखों की कनखियों से तीक्ष्णता से झांकती हुई पैनी नजर, लगता है उसके स्वाभिमान को भी पी गई हो और यह कम्बुग्रीविणी अपनी ग्रीवा को कुछ और उन्नत करती हुई, जब अपने क्षीण पल्लवों को कुछ और भींच कर मंद - मंद मुस्कराती हुई, हल्के से अपने क्षीण कटि को खम देकर हंसिनी की भांति इस धरा पर उतरती है, फिर तो सारे ऋषि, मुनि और उच्च कोटि के साधक भी इसकी साधना से भी अधिक, इसकी आराधना में तल्लीन हो जाते हैं। ऊंचे से ऊंचे साधकों ने भी अपने स्वाभिमान को एक ओर धर यौवन गर्विता की एक झलक मिलने के बाद, उसकी जिस तरह से अभ्यर्थना की है, वह तो साधना जगत का एक अलग रोचक विषय है और **किस - किस तरह से इस अभिमानिनी ने कौतूहल करें, अपने साधकों के साथ, और छेड़ - छेड़ कर रख दिया उनकी देह के एक - एक तार को, अपने शरारतों से और चुलबुलाहटों से, उसकी तो कोई तुलना ही नहीं।** इस

अप्सराएं तो अनेक हैं और प्रत्येक अपने आप में किसी न किसी ढंग से अनूठी ही हैं, और हो भी क्यों न, यह तो वर्ग ही विशेष है-- मदमाते यौवन का और सौन्दर्य से भरपूर तत्वों का, इसी वर्ग में हो जाते हैं कुछ भेद और कुछ सूक्ष्मताएं, जिसका ज्ञान किसी भी शास्त्र में नहीं मिलता और इन्हीं में परत दर परत में छिपा होता है उन्हें वश में कर लेने का रहस्य, गोपनीय क्रियाएं . . . .

कारण ही अनायास सुध-बुध खो बैठते हैं साधक गण, इसका स्पर्श पाकर। *क्यों कि इसी की साधना में तो छिपा है अप्सरा साधना का सम्पूर्ण रहस्य, यौवन की भरपूर मस्ती को घूंट- घूंट पी लेने का रहस्य, क्योंकि यौवन गर्विता केवल अपने यौवन से ही नहीं, यह तो गर्वित रहती है अपने साथ समेटे षोडश अप्सराओं के गर्व को। क्योंकि यौवन गर्विता अकेले उपस्थित होती ही नहीं,* कौतुक प्रिय यह सदैव तल्लीन रहती है अपनी सखियों के संग उल्लास, उमंग और मादकता में। यह तो साक्षात् कामदेव के धनुष पर चढ़ी, वह पुष्प बाण है, जिसकी देह दृष्टि एक लचक के साथ आकर टकराती है, साधक के देह से, और धरी रह जाती है उसकी सारी तपस्या, एक ओर। कामदेव की खिंची प्रत्यंचा के समान ही इसकी आंखों में वह भाव भरा होता है कि अब छूटा कोई कटाक्ष, अब छूटा . . . . . और साधक बेसुध होकर देखता रह जाता है, एक बाण के पश्चात छूटने वाले दूसरे बाण की प्रतीक्षा में।

छू गया जिसका भी तन और मन इसके मादक यौवन की सुनहरी चम्पई आभा से, फिर उसके जीवन में तो यौवन की चम्पई आभा बिखरती ही है, और फिर ऐसे साधक को जीवन गिड़गिड़ा कर नहीं जीना पड़ता, अपना लिया यौवन गर्विता ने जिसको फिर प्रियतमा बन कर उस पर अपनी सभी सहयोगिनियों के द्वारा रस और मस्ती की वर्षा खुद भी की है और करवाई है कि इस जगत की ओर से हट कर साधक खो जाए ऐसी दुनियां में जहां यौवन और यौवन की स्वप्निल कामनाओं के अतिरिक्त कुछ हो ही न, मन में तैरने लगे इन्द्र - धनुषी रंग, और वही रंग उतर आए जीवन में यौवन गर्विता के साथ उसकी सहयोगिनी अप्सराओं के रूप में।

अप्सरा वर्ग का सौन्दर्य, लक्ष्मी का लावण्य और सिद्धि प्रदान करने का आग्रह भरे, यह क्षीण कटि नवयौवना जब अपनी सरस और तेजस्विता भरे अलंकृत देह के साथ, जब साधक के समक्ष आती है, तो उसे इस प्रकार प्रस्तुत करती है कि उर्वशी और मेनका जैसी श्रेष्ठतम कही जानी वाली अप्सराओं का गर्व भी खण्डित हो जाए। सचमुच इसकी देह पर ही इसके यौवन ने गढ़े हैं ऐसे आभूषण, जो इसे किसी अलंकरण की जरूरत रहने ही नहीं देते, और सराबोर कर देती है साधक की देह भी, अपने यौवन के प्रभाव से। ज्यों किसी अन्य अप्सरा के शरीर पर पड़े आभूषणों की चमक से दमक उठे किसी साधक की देह, वही कार्य यह कर देती है, अपने देह की मादक यौवन की आभूषणों से। **चम्पई आभा ही नहीं, चम्पई सुगन्ध भी बिखेरती हुई साधक के मन में यों हिलोर पैदा करती है कि साधक स्वयं फूलों भरी मस्ती और यौवन से लचीला बन कर बिखर जाए।** प्राप्त हो गई जो किसी साधक को इसकी साधना, वह तो फिर अन्य किसी अप्सरा की साधना करने की बात सोच भी नहीं सकता। हल्की गूंजती वह मादक ध्वनि, जो अपने - आप में कैसा आमंत्रण और गहराई भरे है। जिसे सुनने के बाद तो वीणा का स्वर भी फीका लगने लगे, और सारा तन - मन यौवन की उत्तेजना से भरा-भरा रहने लगे। साधक की भी आंखों में उतर आए उसी की तरह यौवन की शरारतें, बातों में हास्य - विनोद, और चतुराई से बातों को व्यक्त करने की एक अनोखी अदा, कि सामने वाला लाजवाब होकर रह जाए, और मुग्ध हो जाए विनोद प्रियता से। **उसकी कानों के पास कोई सफेद लट उतर आयी हो या आंखों में धुंधली सी उदासी छा रही हो और मन कुछ थक गया हो तो फिर यौवन गर्विता से बढ़कर श्रेष्ठ साधना हो ही कौन सकती है? जो केवल पुरुष साधकों के लिए ही नहीं, स्त्री साधिकाओं के लिए अनुकूल सिद्ध होती ही है।** लेकिन पुरुष वर्ग के लिए. . . . पुरुष वर्ग को तो नवजीवन से भर देने की क्रिया ही है, साक्षात् उसका कायाकल्प है उसके अन्दर १८ - २० वर्ष के युवक जैसा तोड़ - फोड़ कर देने का बल भर देने का रहस्य है, और वयस्क साधकों के साथ - साथ सन्यासी साधकों ने भी इस साधना को सम्पन्न किया, तो वे इसके अचूक प्रभाव को देखकर दंग रह गए।

अप्सरा साधना के कई भेद खोलती यह विशिष्ट अप्सरा साधना "यौवन गर्विता अप्सरा साधना", दमखम रखने वाले मजबूत पुरुषों की प्रिय साधना, चुनौती पूर्ण साधना अपने को यौवन से कुछ और भर लेने की क्रिया. . .

प्रत्येक अप्सरा साधना का सामान्य रूप से निर्धारित दिवस होता है शुक्रवार, लेकिन इस निराली अप्सरा की तो प्रत्येक अदा ही निराली है। इसकी साधना कार्तिक माह से लेकर बसंत पंचमी तक कभी भी प्रारम्भ की जा सकती है। केवल मंगलवार और शनिवार को छोड़कर और यौवन की मस्ती में सरस इसकी देह की तरह ही यह साधना भी सम्पूर्ण रूप से रस की साधना है, यौवन की उमंगों में खो जाने की साधना है पौरुष की मदमाती उमंगों में जीवन व्यतीत करने की साधना है। वस्त्र दिशा जैसा कोई बन्धन ही नहीं इसमें और साधक पूरी मस्ती से बैठकर जब भी चाहे रात्रि के किसी भी प्रहर में कैसे भी इस साधना

को कर सकता है। वस्त्र चाहे जैसे हों लेकिन सुगन्धित एवं स्वच्छ हों, सामने स्थापित हो **षोडश अप्सरा यंत्र** और हृदय से लगा लेने की प्रतीक रूप में आपके पास हो **पीले हकीक की माला,** इसके तन की ही तरह चम्पई आभा स्पष्ट करती हुई और आपके सामने स्थापित हो **यौवन गन्धा मुद्रिका** जो कि इस साधना की सर्वाधिक आवश्यक वस्तु है, जिस प्रकार प्रत्येक अप्सरा साधना में पूजन करते हैं, उसी प्रकार इस साधना में केसर अक्षत, सुगन्धित द्रव्य, पुष्प की पंखुड़ी से पूजन करें तथा निम्न मंत्र की ११ माला अथवा संभव हो तो २१ माला मंत्र जप करें --

मंत्र -

ॐ श्रीं अप्सरायै नमः

यद्यपि इसे बसंत पंचमी तक भी आरम्भ किया जा सकता है, फिर भी यदि शीघ्रता पूर्वक आरम्भ कर बसंत पंचमी तक इस साधना को कम से कम पांच बार कर लिया जाय तो यह साधना पूर्णता से प्राप्त हो जाती है **। जब एक बार यौवन गर्विता का स्पर्श साधक को मिल जाता है, तो फिर वह अपने सिद्ध साधक को जीवन में कभी भी धोखा नहीं देती,** फिर भूल जाती है वह अपने यौवन का गर्व और लुटा देती है, अपना सब कुछ अपने सिद्ध साधक पर। इस साधना को प्रारम्भ करने के पश्चात मध्य में कदापि नहीं छोड़ना चाहिए, भले ही प्रारम्भ में एकाएक सफलता न मिलें, क्योंकि यह एक गर्वीली अप्सरा की साधना है और सिद्ध होने के पूर्व यह साधक को इसी तरह लुका - छिपी करके सताकर एक मस्ती लेना चाहती है, **और क्या इस लुकाछिपी में भी आनंद नहीं . . .**

साधना के उपरान्त यंत्र एवं माला को तो सुगन्धित पुष्प अक्षत एवं केसर की कुछ पंखुड़ियों के साथ पीले वस्त्र में बांधकर गोपनीय ढंग से किसी ऐसे स्थान पर प्रवाहित कर देना चाहिए जिससे यह किसी अन्य के हाथ न लग सके । लेकिन **यौवन गन्धा मुद्रिका** अपने दांए हाथ की किसी भी अंगुली में धारण कर लेनी चाहिए, अपने नाम के ही अनुरूप यह मुद्रिका साधक को तो यौवन गंध से भरे ही रखती है साथ ही आगामी अप्सरा साधनाओं में इसी मुद्रिका को रखकर साधना करने पर साधनाएं सिद्धिप्रद बनती हैं। ध्यान रहे कि इस मुद्रिका का स्पर्श रजस्वला स्त्री से न हो जाए। **इसी मुद्रिका पर एक विशेष प्रयोग भी है कि यदि इसी मुद्रिका को किसी स्त्री के नाम का संकल्प करके पहनें और फिर उसके सामने जाएं तो वह वशीभूत हो ही जाती है।**

(पृष्ठ ३६ का शेष भाग)

मार्तण्ड नामक औषधि का सेवन कराया। कुछ विशेष परिस्थितियों में जहां साधक किसी मनोविकार के कारण अथवा बचपन के संस्कारों के कारण उचित रूप से विकसित नहीं हो पाया हो, वहां उनका उपचार **अप्सरा दीक्षा** द्वारा भी सफलता पूर्वक किया।

साधक कुछ झिझकते हुए और कुछ लज्जाभाव से भरकर पूज्यपाद गुरुदेव के समक्ष आए और अपनी मानसिक व्यथा को कहा, क्योंकि नपुंसकता, शारीरिक पीड़ा से भी ज्यादा मानसिक कष्ट की स्थिति है, और उन्होंने पाया पूज्यपाद गुरुदेव से न केवल अपने अन्दर पहले जैसा ही जोश और बल , वरन अतिरिक्त रूप से उन्हें मिला, मानसिक तरोताजगी का ऐसा वातावरण जिससे फिर वे अपना बिगड़ता हुआ दाम्पत्य जीवन संभाल सके। नीम - हकीम के पास चक्कर लगाने और यौन विशेषज्ञों के जाल में फंसने से कुछ नहीं होने वाला, बाजीकरण की औषधियां भी तत्कालिक रूप से लाभ तो दे सकती हैं, लेकिन मानसिक रूप से निरंतर ऊर्जा का प्रवाह केवल दीक्षा के माध्यम से ही संभव होता है तथा पूज्यपाद गुरुदेव के तपस्यात्मक अंश से अनुप्रमाणित भावना, जब जाकर साधक के चित्त पर टकराती है, उसे उद्वेलित करती है तो वह प्रभाव उसके साथ जीवन भर चलता रहता है। पूज्यपाद गुरुदेव तो त्रिकालज्ञ हैं, सर्वज्ञ हैं उनसे अपना कष्ट , अपनी मानसिक व्यथा कहने की आवश्यकता नहीं पड़ती, वे संक्षिप्त वार्तालाप में ही समझ जाते हैं अपने शिष्य का सारा कष्ट, और पिता की भावना तथा गुरु के करुणा के समवेत प्रभाव से उसके कष्टों का निवारण कर देते हैं। पूज्यपाद गुरुदेव तो प्रखर आयुर्वेदाचार्य हैं और उनके कुछ सन्यासी शिष्यों ने जिन आश्चर्यजनक औषधियों का तथा पारद पर आधारित भस्म आदि का निर्माण किया है, पूज्यपाद गुरुदेव दीक्षा के साथ - साथ उन्हें वे सभी गोपनीय ढंग से प्रदान करते ही हैं क्योंकि उनका एक ही चिंतन है कि मेरा शिष्य सम्पूर्ण हो, प्रखर हो और इसी चिंतन से करुणारिक्त हो कर पूज्यपाद गुरुदेव का एक स्वरूप यह है जो अपनी विषय वस्तु के कारण पाठकों के समक्ष तथा उनके साधकों के भी समक्ष बहुत कम आ सका है।

. . . किंतु जो लाभ पा चुके हैं, जीवन संवार चुके हैं, पुत्र लाभ प्राप्त कर चुके हैं, उजड़ता हुआ घर पुनः बसा चुके हैं, उनसे पूछ कर देखिए, कृतज्ञता से उनकी आंखों में आंसू छलछला आते हैं . . .

कहीं आप पर किसी ने तंत्र प्रयोग तो नहीं करवा दिया
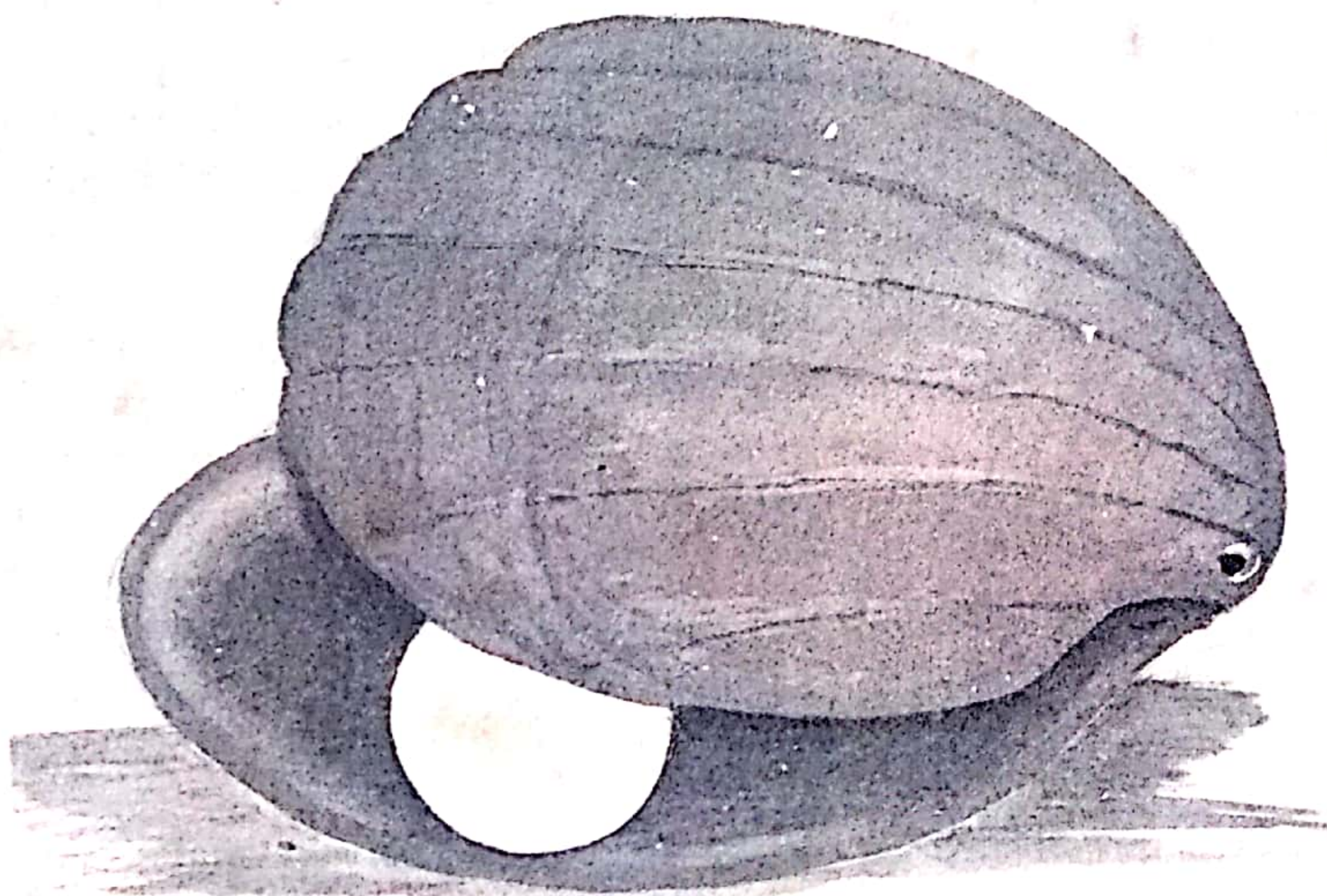
कवच के रूप में उपलब्ध है

विशेष तंत्र रक्षा कवच

दैनिक जीवन में आने वाली हर कठिनाई को सामान्य सा समझ कर मत टाल दीजिए, इन्हीं छोटी - छोटी बाधाओं के पीछे छिपा होता है रहस्य - द्वेष वश कराए गए किसी तांत्रिक प्रयोग का . . .

जिसका निराकरण सामान्य उपचारों से संभव ही नहीं-- विवाह में बाधा, रोग का बना रहना, ऋण से मुक्ति न मिलना इत्यादि - इत्यादि। इन सभी का उपाय है तो केवल **'विशेष तंत्र रक्षा कवच'** . . .

. . . और तंत्र की सैकड़ों- सैकड़ों विधाओं में से कौन सी आपके लिए अनुकूल होगी, उसका निर्धारण कर निर्मित किए जाते हैं ये विशेष तंत्र रक्षा कवच, गुरुदेव की तपस्यात्मक ऊर्जा का स्पर्श पाकर, संस्थान के योग्यतम विद्वानों, कर्मकाण्ड के श्रेष्ठतम ज्ञाताओं से सम्पर्क कर . . . लोकहितार्थ, समाज में निरन्तर बढ़ती जा रही तांत्रिक प्रयोगों की प्रबलता के नाश के लिए . . .

न्यौछावर- ११०००/-

सम्पर्क

गुरुधाम
३०६, कोहाट एन्क्लेव, पीतमपुरा,
नई दिल्ली - ११००३४,
फोन - ७१८२२४८
फेक्स- ०११-७१८६७००

अथवा

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान
डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाई कोर्ट कॉलोनी,
जोधपुर-३४२००१,
फोन - ०२९१-३२२०६

सम्पूर्ण चिकित्सा शक्तिपात

रोगों की उत्पत्ति का कारण क्या होता है, इस विषय में यदि चिकित्सकों से पूछा जाए तो वे भी एक मत होकर शायद बताने में असमर्थ रहेंगे। कुछ के अनुसार शरीर में प्रतिरोधात्मक शक्ति का ह्रास, कुछ के अनुसार कोशिकाओं का मृत हो जाना और प्रचलित पद्धतियों से अलग हट कर यह विश्वास की शरीर में उत्पन्न होने वाली विद्युत ऊर्जा का क्रम भंग हो जाना अथवा रक्त प्रवाह की गति अनियमित हो जाना, किसी अंग विशेष में इसका सुचारु रूप से संचालन न होना, तथा इसी प्रकार से भिन्न - भिन्न पद्धतियों के भिन्न - भिन्न मत। **कारण कुछ भी हो रोगी की ऐसी स्थिति नहीं होती कि उनके उलझाव में उलझे,** उसे इस बात से कोई मतलब नहीं होता कि मेरा रोग क्यों उत्पन्न हुआ है? इसका निदान क्या है? कौन सी पद्धति उपयोगी रहेगी और कौन सी नहीं? दर्द से छटपटाते व्यक्ति को तत्काल राहत और निदान की आवश्यकता होती है। दर्द नाशक गोलियां या बाह्य रूप से किसी अन्य प्रकार से रोग को शांत करना कालान्तर में रोगी के साथ उपहास ही सिद्ध होता है, **क्योंकि स्थायी निदान के स्थान पर उसे मिल जाती हैं -- स्थायी वेदनाएं, जिन्हें डॉक्टरी भाषा में साइड इफेक्ट की संज्ञा दी जाती है!** रोग का कारण चाहे देह में हो, चाहे इस देह के भीतर सूक्ष्म देह में, अथवा इस मन में, कोई ऐसी चिकित्सा पद्धति नहीं है जो व्यक्ति के सभी पक्षों को स्पष्ट करके उसे सम्पूर्ण रूप से रोग मुक्त कर सके। प्रत्येक चिकित्सा पद्धति आंशिक रूप से ही कल्याणप्रद होती है, तब ऐसे में क्या किया जा सकता है?

जब जीवन की ऐसी स्थिति आ जाती है कि व्यक्ति सोचने पर बाध्य हो अब मैं और क्या कर सकता हूं, तब उसके पक्ष में विज्ञान पक्ष रुक जाता है और ज्ञान पक्ष के जागरण की दशाएं बनने लगती हैं। ज्ञान पक्ष के जागरण का अर्थ है कि व्यक्ति लौकिक माध्यमों से परे हट कर, अलौकिक माध्यम की ओर अग्रसर होने की क्रिया करता है। इस यात्रा में उसे सफलता भी मिल सकती है और असफलताएं भी, क्योंकि इस मार्ग में जिस प्रकार से छल - कपट और ढोंग और पाखण्ड व्याप्त हो चुका है, वह लज्जास्पद है, एक पीड़ित व्यक्ति के साथ किया गया अन्याय है, उसे शांति देने के स्थान पर दी गई अशांति है। व्यक्ति पूजा - पाठ और अन्य माध्यमों से कुछ क्षणों के लिए शांति तो प्राप्त कर सकता है, लेकिन स्थायी निदान प्राप्त करने की क्रिया नहीं सम्भव हो पाती **क्योंकि ऐसी रोगावस्था में उसे आवश्यकता होती है 'प्राण ऊर्जा' की, जिसे उसका शरीर न तो उत्पन्न कर सकता है, और न औषधि द्वारा प्राप्त कर सकता है।** प्राण ऊर्जा अपने आप में सम्पूर्ण चिकित्सा पद्धति है यही विद्युत शक्ति है, यही चुम्बकीय शक्ति है, यही प्रतिरोधात्मक शक्ति है और यही विशेष प्रक्रियाओं से मृत पड़ गई कोशिकाओं को पुनः जागृत करने की क्रिया है।

प्राण ऊर्जा की आपूर्ति यदि संभव हो सकती है तो केवल शक्तिपात के माध्यम से। शक्तिपात सही माध्यम

में प्राण ऊर्जा को परिवर्तित करने की क्रिया है। इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में प्राण ही व्याप्त हैं, किन्तु उसे एक ऊर्जा के रूप में शरीर में उतार देने की क्रिया बहुत कम योगियों को ज्ञात होती है। जो योगी होते हैं वे ऐसी ऊर्जा को ब्रह्माण्ड से प्राप्त कर, उसे विद्युत शक्ति में बदलते हुए अपने शरीर के माध्यम से किसी के भी शरीर में प्रवाहित कर सकते हैं। एक प्रकार से वे अत्यन्त उच्च वोल्टेज से बह रही विद्युत ऊर्जा को अपनी देह रूपी ट्रांसफार्मर के माध्यम से सामने वाले व्यक्ति के शरीर में, उसकी क्षमता के अनुसार, शक्ति में परिवर्तित कर, प्रवाहित कर देते हैं। प्राण ही ऐसी शक्ति है जो कि इस शरीर के प्रत्येक कोष में जाकर व्याप्त होती है। **जहां अन्य चिकित्सा पद्धतियां शरीर के किसी एक पक्ष को लेकर चलती है वही शक्तिपात की क्रिया सम्पूर्ण शरीर को लेकर क्रियाशील होती है।** इसी से यह सम्पूर्ण चिकित्सा पद्धति है, जिसके द्वारा प्रत्येक गुरु अपने शिष्य को उसके साधना के क्रम में सदैव ही शक्तिपात से ऊर्जा युक्त बनाते रहते हैं, और यह क्रम वह धीरे - धीरे करते हैं, क्योंकि साधक या शिष्य का शरीर एकाएक उच्च क्षमता का शक्ति प्रवाह सहने में समर्थ नहीं हो पाता, और जहां ऐसे साधक के शरीर में कोई रोग होता है तो वे उसका निराकरण भी एक निश्चित क्रम अपना कर करते हैं, क्योंकि पूज्य गुरुदेव ही जानते हैं कि मुझे किस अवसर पर कितना शक्तिपात अपने सामने बैठे व्यक्ति पर करना है। यदि वे उचित समझते हैं तो वे केवल नेत्रों द्वारा शक्तिपात करते हैं। यदि वे इसके आगे का क्रम प्रदान करना चाहते हैं तो स्पर्श के माध्यम से प्रदान करते हैं। पूज्य गुरुदेव का तो समस्त शरीर ही शक्ति तरंगों से युक्त है, और किन्हीं अवस्थाओं में तो वे दाहिने पांव के अंगूठे से साधक के अनाहत चक्र पर, वक्ष स्थल पर भी प्रहार करते हैं, जो वास्तव में प्राण ऊर्जा का संचार करने की क्रिया ही होती है। बहुत कमयोगियों को यह तथ्य ज्ञात है कि व्यक्ति के शरीर में समस्त संचालन का केन्द्र उसका नाभि चक्र होता है। प्रसिद्ध वर्णित कथा जिसमें रावण नाभि पर तीर मारने की बात कही गयी, उसके मूल में यही रहस्य छुपा है। **व्यक्ति के सहस्रार में स्थित अमृत यदि निर्बाध रूप से उसके नाभि चक्र तक पहुंच जाता है तो व्यक्ति को कभी जरा, रोग, वृद्धावस्था व्याप्त हो ही नहीं सकती।** और सामान्य व्यक्ति अपने नाभि चक्र की ऊर्जा को स्पर्श नहीं कर सकता, किन्तु जब पूज्यपाद गुरुदेव शक्तिपात की क्रिया सम्पन्न करते हैं और विशेष कृपालु होकर साधक के मणिपुर चक्र पर आघात करते हैं, तो उसके अन्दर खुल जाता है वह अमृत कुण्ड जिसके द्वारा साधक अजर - अमर होने की स्थिति को प्राप्त कर ही लेता है, साथ ही उसे कुछ विलक्षण अनुभूतियां भी होने लगती हैं और वह निरंतर अपनी ही खुमारी और मस्ती में डूबा रहने लगता है।

शक्तिपात! नाभि में सुप्त पड़े अमृत कुण्ड को छेड़ने की सशक्त पद्धति . . .

जिसकी तो कोई धारणा तक नहीं, किसी भी चिकित्सा पद्धति में, तभी तो शक्तिपात को संज्ञा दी गई -- 'सम्पूर्ण चिकित्सा पद्धति'

शक्तिपात व्यक्ति को यौवन, सौन्दर्य, ओज, बल , मेधा देने के साथ - साथ आन्तरिक रूप से भी ऐसा समर्थ बनाने की क्रिया है कि साधक को फिर जीवन में औषधियों का प्रयोग तो करना नहीं पड़ता, साथ ही उसे सामान्य स्वास्थ्य रक्षा के लिए भी कोई प्रयास नहीं करना पड़ता, वास्तव में शक्तिपात पूज्यगुरुदेव की ओर से अपने साधक को दिया गया ऐसा वरदान है जो उसका सम्पूर्ण जीवन निरोग और सम्पूर्ण काया को आभा युक्त बना देता है। यह केवल शरीर की कोशिकाओं को ही नहीं रग - रग को ऐसा चैतन्य बना देता है, जिससे फिर संभव हो पाती है, यौवन की सारी मस्ती, क्योंकि जब तक मन में यौवन की उमंगें न हिलोरें ले रही हों, तब तक बलिष्ठ और यौवन से भरे शरीर का भी अर्थ ही क्या? **शक्तिपात सम्पूर्णता के प्रतीक पूज्यपाद गुरुदेव द्वारा सम्पन्न की गई एक क्रिया है और सम्पूर्ण द्वारा जो कुछ भी प्रदान किया जाय वह सम्पूर्ण ही तो होगा!**

ऊर्जा का केन्द्र

रावण के अजर- अमर होने का रहस्य ,भगवान विष्णु की नाभि से उत्पन्न कमल दल पर आसीन ब्रह्मा का अलौकिक अवतरण. . . नाभि में छिपे ऊर्जा के केन्द्र की ओर इंगित करती हुई . . .

. .. इस युग में भी कुछ दशक पूर्व प्रदर्शन किया था प्रसिद्ध योगी स्वामी विशुद्धानन्द ने नाभि से कमल दल की उत्पत्ति कर।

दिव्य सूर्यत्व साधना
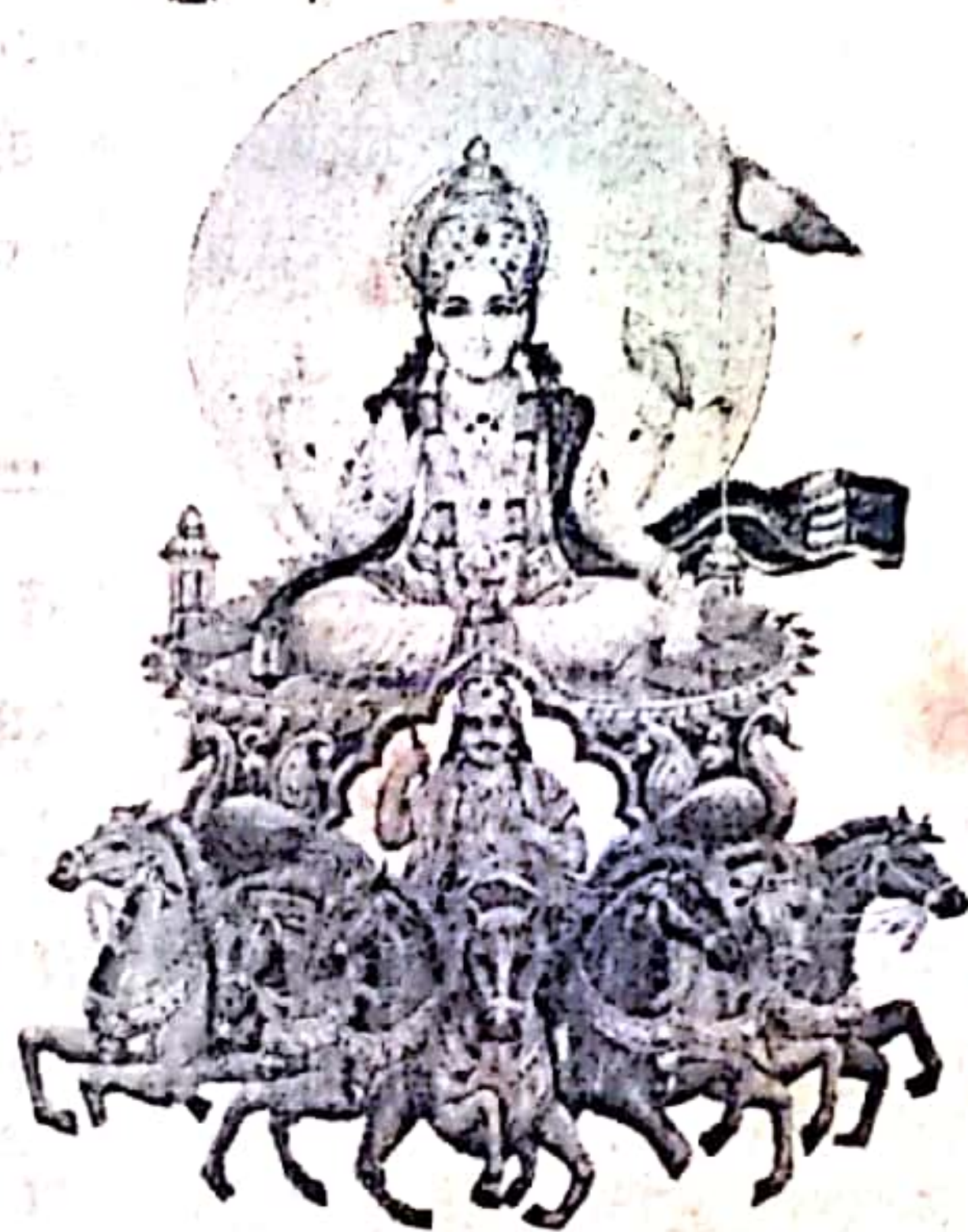
अब कोई भी बीमारी मेरे शरीर में रह ही नहीं सकती

ॐ नमः सहस्र बाहूवे आदित्याय नमो नमः।
नमस्ते पद्यम् हस्ताय वरुणाय नमो नमः।।
सर्वगः सर्वभूतेषु न हि किंचित्वया बिना।
चराचरे जगत्यस्मिन् सर्व देहे व्यवस्थितः ।।

"**सहस्र** भुजाओं (किरणों) से युक्त भगवान आदित्य को नमस्कार है, हाथ में कमल धारण करने वाले वरुण देव को नमस्कार है। तुम्हारी सर्वत्रगति और सब भूतों में स्थिति है, तुम्हारे बिना किसी भी जीव का अस्तित्व नहीं है। तुम ही इस चराचर जगत के समस्त प्राणियों में स्थित हो।"

सूर्य देव के द्वारा ही इस चराचर जगत का पालन होता है। सूर्य परम ब्रह्म के स्वरूप से प्रकट हुआ एक उत्कृष्ट तेज पुंज है जो व्यक्ति को चारों पुरुषार्थ - धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को देने वाला है। देवता, जरायुज, अणुज , स्वेदज और उद्भिज आदि जितने भी प्राणी हैं, सबके जीवन की रक्षा सूर्य के द्वारा ही होती है। सूर्य के द्वारा ही समस्त लोकों का उत्पादन और पालन होने के कारण इनकी समानता किसी अन्य से नहीं की जा सकती है। **पद्म पुराण** में वर्णितहै कि सूर्योदय के समय सूर्य दर्शन करने से पाप समाप्त हो जाते हैं। इनकी

उपासना द्वारा मनुष्य मोक्ष गति को प्राप्त कर लेता है। ब्राह्मण सन्ध्योपासना के समय अपना बाहु ऊपर उठा कर, सूर्य देव का पूजन करते हैं, जिसके फलस्वरूप ही ब्राह्मण समस्त देवताओं द्वारा पूजित होते हैं। इस पृथ्वी पर जो पतित मनुष्य हैं, वे भी भगवान सूर्य की किरणों के स्पर्श से पवित्र हो जाते हैं। सूर्य की उपासना करके मनुष्य अपने समस्त रोगों से मुक्ति पा जाता है। भगवान विष्णु, शिव आदि देवताओं के दर्शन सर्व सुलभ नहीं होते, किन्तु भगवान सूर्य देव का प्रत्यक्ष दर्शन प्रत्येक प्राणी करता है।

वेदों में स्वतन्त्र सूक्तों द्वारा आदित्य की बहुत स्तुति की गई है, **ऋगवेद** में सूर्य के छः नाम तथा **अथर्ववेद** में सूर्य के आठ नामों का उल्लेख है। **"शतपथ ब्राह्मण"** में सूर्य के बारह नाम बारह महीनों के आधार पर लिखे गए हैं। इस ग्रन्थ में सूर्य का "अरीयमन" अर्थात मित्र नाम दिया गया है, तथा फारसी धर्म ग्रंथ "अवेस्ता" में सौर पक्ष में ईरानी प्रजा द्वारा सूर्य का पूजन, अफगानिस्तान में प्राप्त सूर्य से संबंधित ग्रंथ व मंदिर, ग्रीस के सूर्य मंदिर आदि इस बात के द्योतक हैं कि सूर्य की उपासना अत्यंत प्राचीन काल से समस्त पृथ्वी पर होती रही है। नव ग्रहों में सूर्य ही एक ऐसा ग्रह है, जिसके प्रायः स्वतन्त्र मन्दिर बनाए गए। **कश्यप मुनि के अंश और अदिति के गर्भ से उत्पन्न होने के कारण सूर्य आदित्य के नाम से प्रसिद्ध हुए।** राज्ञी, छाया, विभुक्षा और सुवर्णसा नामक सूर्य की चार पत्नियां हैं। सूर्य का वाहन सप्ताश्व रथ होता है। सूर्य का सारथी अरुण है। मुख्य पंच देवों (ब्रह्मा, विष्णु, महेश, गणेश, सूर्य) में भी सूर्य का स्थान है।

मध्य काल के इतिहास का अध्ययन करने पर पता चलता है कि मध्य युग में सूर्य पूजा का और उसके मंदिरों का बहुत महत्व था। इस प्रकार सूर्य देव हमारे समस्त देवी - देवताओं में अत्यंत महत्वपूर्ण और पूज्य है।

सूर्य देव की साधना करने से रोग और क्रूर ग्रहों का प्रभाव नष्ट हो जाता है। मनुष्य चाहे किसी भी असाध्य बीमारी से ग्रस्त हो तो **"दिव्य सूर्यत्व साधना"** सम्पन्न करके इससे मुक्ति पा सकता है।

आदित्य भास्कर, सूर्य, अर्क, भानु, दिवाकर, सुवर्णरिता, मित्र, पूषा, त्वष्टा, स्वयम्भू और तिमिराश - ये सूर्य के बारह नाम हैं, जो मनुष्य इन बारह नामों का पाठ करता है उसे परम गति प्राप्त होती है. . .

दिव्य सूर्यत्व साधना विधि -

इस साधना को प्रारम्भ करने से पूर्व तेजस्वी **दिव्य सूर्य यंत्र** प्राप्त कर लें। रविवार के दिन ब्रह्म मुहूर्त में उठकर, अपने घर की खुली छत पर या ऐसे स्थान पर जाएं जहां से आप सूर्योदय होते हुए देख सकें। साधना प्रारम्भ करने से पूर्व नैवेद्य, मदार या केले के पत्ते, लाल चंदन, सिन्दूर, फल तथा पुष्प एकत्र कर लें। जहां आपको साधना करनी है, उस स्थान को धोकर साफ करें। पत्ते को जमीन पर बिछा कर सिन्दूर से एक गोल घेरा बनाएं, इस घेरे के बीच मे दिव्य सूर्य यंत्र स्थापित करें। यंत्र पर लाल चंदन से तिलक करें तथा पुष्प, फल व नैवेद्य समर्पित करें।

दोनों हाथ जोड़कर भगवान सूर्य को प्रणाम करें तथा उनसे प्रार्थना करें -- "हे देव! आप सम्पूर्ण संसार के नेत्र स्वरूप और निरामय हो। आप प्रलय काल की अग्नि के समान तेजस्वी हैं, सम्पूर्ण देवताओं के भीतर आपकी स्थिति है। आपके द्वारा ही अन्न आदि का पाचन तथा जीवन की रक्षा होती है। आप के बिना समस्त संसार का जीवन एक दिन भी नहीं चल सकता है। शरीर के अन्दर - बाहर समस्त विश्व में आपकी सत्ता है। हे सर्वज्ञ! आप सबके संहारक, रक्षक, अन्धकार, कीचड़ और रोगों का नाश करने वाले तथा दरिद्रता के दुखों का निवारण करने वाले हैं। इस लोक तथा परलोक में सबसे श्रेष्ठ बन्धु एवं सब कुछ देखने वाले आप ही हैं। अतः हे सुरेश्वर! आप मेरे शरीर के समस्त रोगों का नाश करके मुझे निरोगी काया प्रदान करें।"

इसके बाद आप निम्न दिव्य सूर्य मंत्र का १०८ बार **स्फटिक माला** से मंत्र जप करें --

मंत्र -

ॐ घृणिं सूर्याय फट्

मंत्र जप पूर्ण होने के बाद भगवान सूर्य को जल का अर्घ्य प्रदान करें। इसके बाद यंत्र को उठाकर शरीर के रोग ग्रस्त भाग से स्पर्श कराएं। ऐसा अगले रविवार तक करें। यदि आप नित्य घर से बाहर नहीं जा सकते हैं तो घर में ही यंत्र का स्थापन कर उपयुक्त विधि द्वारा पूजन सम्पन्न करने पर भी मनोवांछित फल प्राप्त होता है। साधना शुरू करने से पूर्व सामान्य गुरुपूजन एवं एक माला गुरु मंत्र का जप अवश्य करें। अर्ध्य में निम्न आठ पदार्थ डालते हैं -- गंगा जल, शहद, अक्षत, रक्त चन्दन, कच्चा दूध, दही, लाल पुष्प।

ऑटो - हीलिंग की पद्धति, जिसके सफल प्रयोग से गहरे घाव तक भी स्वतः भरते देखे गए हैं . . .

क्रियायोग, राज योग, हठ योग यह सब आपस में एक ही पक्ष के विभिन्न रूप हैं। इनका तात्पर्य है कि किस प्रकार से इस शरीर द्वारा ईश्वर का साक्षात्कार किया जा सके और ईश्वर जिसे परम शुद्ध, निर्विकल्प , शांत और एवं आनन्द युक्त माना गया है, उसी के तद्नुरूप अपनी इस काया को भी संवारने का प्रयास किया गया है। इसी से यह सहज स्वाभाविक रहा है कि इन पद्धतियों में शरीर के परिमार्जन और शुद्धिकरण के अनेक उपाय ढूंढे गए। क्रिया योग वास्तव में योग की विभिन्न पद्धतियों द्वारा, अपने शरीर के विभिन्न मल का निवारण करते हुए, उसे ऐसा पात्र बना देने का प्रयास है कि जिससे उसमें ईश्वरत्व स्पष्ट हो सके। क्रिया योग केवल त्राटक, धोती, वस्ति, ध्यान, धारणा, समाधि का ही विषय नहीं है। क्रिया योग तो सम्पूर्णता को प्राप्त करने का प्रयास है। क्रिया योग चिकित्सा पद्धति के रूप में भी ग्रहण की जा सकती है और कोई आवश्यक नहीं की व्यक्ति इसमें उस प्रकार संलग्न हो जिस प्रकार योगी संलग्न होता है। वह योग्य गुरु के निर्देशन में, **क्रिया योग दीक्षा** प्राप्त कर, एक सरल और व्यवहारिक पद्धति भी प्राप्त कर सकता है। जिसके द्वारा वह शांत मन बनाने में समर्थ हो।

क्रिया योग की उच्चतम अवस्था होती है निर्विकल्प समाधि, लेकिन इसी को चिकित्सा के रूप में निर्विचार मन की प्राप्ति तक ले जाया जा सकता है और निर्विचार मन बनाकर व्यक्ति स्वतः ही अपना उपचार स्वयं कर सकता है। इसे ही विदेशों में ऑटो हीलिंग की संज्ञा दी गई है। इंगलैण्ड के प्रमुख चिकित्सक **डॉ. साइमन** ने अपने अनेक रोगियों को यह पद्धति अपनाने को कहकर उसके सफल परिणाम प्राप्त किए है।**जिसको ऑटो-हीलिंग कहा गया है, उसे ही हमारे योगियों ने योग निद्रा की संज्ञा दी, और वास्तव में योग निद्रा के माध्यम से व्यक्ति अपने - आप को इस प्रकार से निर्देशित कर सकता है,** अपने - आपको इस प्रकार से साध सकता है कि उसकी अनेक व्याधियां स्वतः ही नष्ट हो जाएं। जिस प्रकार से अन्तर्प्राण चिकित्सा एवं सम्मोहन चिकित्सा में अन्तर है, उसी प्रकार क्रिया योग की यह चिकित्सा पद्धति स्व सम्मोहन से बहुत कुछ मिलती हुई होने पर भी अलग है। स्व सम्मोहन तो अपने - आप को दिया गया एक निर्देश है, जबकि क्रिया योग की चिकित्सा पद्धति में उस ऊर्जा का प्रयोग किया जाता है, जिसका प्रस्फुटीकरण क्रिया योग दीक्षा द्वारा सम्भव होता है और फिर व्यक्ति सद् गुरुदेव के निर्देशन में अपने मन को निर्विचार बनाते हुए, योग निद्रा में जाकर स्वयं अपने शरीर को इस प्रकार स्पष्ट देखने लगता है जैसे सामने रखे शीशे में अपना मुख स्पष्ट दिखाई पड़ता है और वह उस ऊर्जा का प्रवाह या आघात स्वयं ही उस अंग में कर लेता है जो कि निर्बल अथवा व्याधि - ग्रस्त हो।

अनेक विदेशी विद्वानों ने भारतीय योगियों के इन्हीं सब सिद्धान्तों को समझ कर, इन्हीं सब सूक्ष्म भेदों को समझ कर, शोध कर, अलग - अलग चिकित्सा पद्धतियां निकाली और **फिर चाहे परासम्मोहन चिकित्सा हो , निद्रा चिकित्सा, क्रीड़ा चिकित्सा हो, यौन चिकित्सा, रंग - मंच चिकित्सा यह सब उसी की बाई प्रोडक्ट जैसी है।** बहुचर्चित **डॉ. मैस्मर** की विधि मैस्मरिज्म भी मूलतः इन्हीं सिद्धान्तों पर आधारित है और धीरे - धीरे अब विदेशों में यही सब सिद्धांत मान्य होते जा रहे हैं। जिस प्रकार हमारे योगासन विदेशों से **'योगा'** बन कर लौटे, क्या पता कल को क्रियायोग पर आधारित यही चिकित्सा पद्धति हमारे देश में किसी अन्य नाम से प्रचलित हो।

अब अभिशाप नहीं

सौन्दर्य का परम शत्रु है यह रोग, जिसका मात्र एक दाग ही किसी रूपसी अथवा सुन्दर नवयुवक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को ही नष्ट कर देता है,उसके हंसते- खेलते जीवन में ग्रहण सा लग जाता है और भीतर ही भीतर कुंठित होता हुआ, वह स्वयं को समाज से बहिष्कृत अनुभव करने लगता है। वास्तव में ही श्वेत कुष्ठ के रोगी बड़े साहस से जीते हैं. . .

इसकी अचूक चिकित्सा आज भी संभव है , कैसे? आइए देखते हैं क्या कहते हैं योगी आत्मानंद इस गोपनीय विषय में . . .

महर्षि अत्रि, की वह परम रूपवती कन्यी थी, नाग था -- 'अपाला'। पिता के सुरम्य आश्रग में चंचल हिरणी सी विचरण करती हुई, उस दिव्य बाला को देखकर सभी मुग्ध हो जाते थे। कंचनवर्णीय, कोमलांगी वह सुलक्षणा युवती, वास्तव में ही रूप व बुद्धिमता का अपूर्व संगम थी, पर अपनी प्रिय दुहिता की युवावस्था को देखकर महर्षि अत्रि उसके सुयोग्य वर न मिलने की आशंका से कुछ चिंतित से रहने लगे थे।

दैववशात् एक दिन प्रातः काल स्नान करते वक्त अपाला की दृष्टि अपनी जंघा पर पड़ी। त्वचा पर कुछ श्वेत दागों को देखते ही वह चौंक पड़ी और नित्य प्रति उन धब्बों को ध्यान पूर्वक देखने लगी। वैसे तो वह उन्हें कुशलापूर्वक वस्त्रों के भीतर छिपा कर रखती थी, पर दिन पर दिन उनका आकार बढ़ते देखकर वह अत्यंत चिंतित हो उठी। पिता के समक्ष अपनी चिंता अभिव्यक्त करने का उसे साहस नहीं हुआ।

उन्हीं दिनों महान विद्वान कृशास्व महर्षि का आश्रम में पदार्पण हुआ। उनके आतिथ्य का भार अपाला को सौंपा गया। कई दिनों तक उनके आतिथ्य का सुन्दर प्रबंध करके अपाला ने अपने व्यवहार कुशलता का परिचय दिया। कृशास्व स्वयं अपाला के अनिन्द्य सौन्दर्य पर आसक्त हो उठे थे, फलतः उन्होंने महर्षि अत्रि के समक्ष अपाला को अपनी जीवन संगिनी बनाने का प्रस्ताव रखा।

महर्षि अत्रि ने प्रसन्नता पूर्वक दोनों का विवाह कर, अपाला को पति के साथ विदा कर दिया। उस आश्रम में भी अपाला अत्यंत चतुरता के साथ अपने सफेद दागों को पति से छिपाए रखती थी। परन्तु धीरे - धीरे वे दाग और भी अधिक बढ़ गए और एक दिन पति की दृष्टि उन पर जा पड़ी। फिर क्या था, अपाला के सुखी जीवन पर विपत्ति के बादल मंडरा उठे। कृशास्व का प्रेम तिरस्कार में परिवर्तित हो गया। वे बात - बात में पत्नी की उपेक्षा करने लगे। अन्ततः रोज - रोज की प्रताड़ना से क्षुब्ध होकर अपाला वापस अपने पिता के आश्रम में चली आई।

अपाला को अकेले आया देख कर महर्षि अत्रि को बड़ा विस्मय हुआ। आशंकित मन से उन्होंने पूछा - " पुत्री, तू

कुशल से तो है न, तेरे पति कहां है? " प्रत्युत्तर में अपाला फूट - फूट कर रो पड़ी। पुत्री की दशा देखकर महर्षि को अत्यंत दुख हुआ। पिता के वक्षस्थल से लगकर अपाला ने सिसकते हुए श्वेत दागों के विषय में बता दिया। जिनके कारण से परित्यक्ता होना पड़ा था। ऋषि ने सान्त्वना देते हुए, पुत्री को आश्वस्त किया कि वह पिता के आश्रम में सुखपूर्वक निवास कर सकती है, परन्तु अपने रोग के निवारण के लिए कठोर तपस्या करनी पड़ेगी। कुछ समय तक पूर्ण मनोयोग पूर्वक तपस्या करने के पश्चात एक दिन उसे कोई पाषाण खंड न दिखाई दिया, जिससे कि वह सोमरस निकाल सके। निरूपाय होकर उसने अपनी दंत पक्तियों से सोम लता को पीस कर, उसका रस भूमि पर गिराते हुए, अपने इष्ट देव से नैवेद्य स्वीकार करने की प्रार्थना की।

उसी क्षण प्रसन्न होकर इष्ट देवता ने उसे दर्शन देकर कहा -- "अपाला, तुम्हारे प्रेम व कठोर तपस्या से मैं अत्यंत प्रसन्न हूं, आज से तुम्हारा रोग जड़- मूल से समाप्त हो जाएगा। तुम्हारी काया पुनः कंचनवत हो जाएगी, और इतिहास में तुम्हारा नाम अमर हो जाएगा।" इसी पौराणिक कथा छिपा में हुआ है जीवन में कुष्ठ रोग हो जाने का अभिशाप और उसके निवारण का उपाय, जिसकी भुक्तभोगी रही अपूर्व रूपवती अपाला।

सौन्दर्य का परम शत्रु --

वर्णहीनता ही इस व्याधि का मुख्य लक्षण है। जो कि किसी भी अंग से प्रारम्भ हो सकता है रोगी जितना ही इस रोग को छिपाने का प्रयत्न करता है, यह उतना ही बढ़ता जाता है, और धीरे - धीरे पूरे शरीर को अपने प्रभाव में ले लेता है। इसलिए आयुर्वेद में लिखा है --

कुष्ठादपि वीभत्सं यच्छी प्रतरं यात्यसाहयताम।
श्वित्रम्तास्तच्छान्त्यै यतते वीप्ते यथा भवने ।।

श्वित्र अथवा श्वेत कुष्ठ के रोगी की ओर देखने में ही कष्ट का अनुभव होता है। मन में जुगुप्सा उत्पन्न होती है। जब देखने वाले को इतनी घृणा व अरुचि होती है तो रोगी की मनोदशा का तो वर्णन ही नहीं किया जा सकता। बिना शारीरिक कष्ट के इतनी मर्मान्तिक पीड़ा होती है कि बयान करना ही असंभव होता है। पुरुष तो किसी प्रकार जीवन बिता लेता है, परन्तु स्त्री तो सुन्दरता की ही पर्याय मानी गयी है, अतः उसका तो जीवन ही नरक तुल्य हो जाता है, जो उसे आत्म - हत्या के कगार पर भी पहुंचा सकता है।

महर्षि अत्रि की परम रूपवती कन्या. . . अपाला, अभी-अभी तो बस कदम रखा था यौवन में उस कंचनवर्णीया ने. . .

. . . और कहां से उतर आया पैरों पर वह सफेद धब्बा. . .

श्वेत कुष्ठ के निवारण का रहस्य बताती एक पौराणिक कथा. . .

रोगोत्पत्ति का कारण -

ताम्र हमारे शरीर का एक आवश्यक तत्व है , जिसकी न्यूनता के कारण रंजक (मिलेनिन) का निर्माण कम हो जाता है और श्वित्र विभिन्न आकार के दागों के रूप में प्रकट होता है। पाचक संस्थान का कार्य न करना, लम्बी अवधि तक ब्रॉडस्पक्ट्रम एंटीबायोटिक का सेवन करना, प्रोटीन की कमी होना तथा अत्यधिक चिंताग्रस्त रहना भी रोगोत्पत्ति में सहायक बनते हैं। कुछ व्यक्तियों में यह रोग वंशानुगत भी पाया गया है। आज के वैज्ञानिक युग में रबर व प्लास्टिक के निरन्तर सम्पर्क में रहने से भी यह रोग हो जाता है।

आयुर्वेद में इस रोग को श्वित्र रोग की संज्ञा दी गयी है और इसका कारण संयोग विरुद्ध आहार कहा गया है। जैसे दूध और दही मिलाकर ग्रहण करना अथवा दूध के साथ मछली का सेवन करना तथा इसी प्रकार संयोग विरुद्ध आहारों की एक लम्बी श्रृंखला गिनायी गयी है। आयुर्वेद जहां भौतिक कारणों की विवेचना करता चलता है, वहीं रोगों के मूल में निहित अदृश्य कारणों को भी भली - भांति स्पष्ट करता है।

वंचांस्य त्थ्यानि कृतघ्न भावो निन्दां गुरुणां गुरुर्धणंच।
पापक्रिया पूर्वकृतं च कर्म हेतुः किलासस्य विरोध चन्नरा।।

अर्थात असत्य भाषण, कृतघ्नता, गुरु निंदा , वृद्धों का अपमान तथा पिछले जन्मों का पाप, श्वित्र रोग के मूल - भूत कारण हैं।

विधि विरुद्ध संयोगों एवं पाप कर्मो की संयुक्ति से उपजे रोग की चिकित्सा सम्भव होती है, केवल मात्र 'गुरु कृपा' से, अन्यथा यह रोग असाध्य ही है। गुरु कृपा व्यक्ति के ऊपर प्रकट होती है या तो दीक्षा के माध्यम से अथवा उन दुर्लभ जड़ी - बूटियों के ज्ञान से जिनकी पहचान और प्रयोग की विधि सामान्य चिकित्सा शास्त्रों में वर्णित नहीं है। विगत कई वर्षों से पूज्य गुरुदेव के समक्ष ऐसे रोगी अथवा रोगियों के रिश्तेदार आते रहे हैं, जिन्हें श्वेत कुष्ठ अथवा सफेद दाग की

(शेष पृष्ठ ५२ पर)

मानसिक रोग असाध्य नहीं

जीवन का सौभाग्य होता है कि व्यक्ति को सक्षम सद्गुरु से, जीवन के किसी भी मोड़ पर शक्तिपात का वरदान मिल जाए, क्योंकि शक्तिपात एक साधारण क्रिया नहीं, सहज घटित हो जाने वाली घटना नहीं. . . और क्या ऐसे सद्गुरु का मिल जाना ही जीवन का सबसे बड़ा सौभाग्य नहीं?

. . . यह तो देव दुर्लभ संयोग है, जब एक मानव को सद्गुरु का स्पर्श मिले, उनका जीवन में आगमन हो और उनके तपस्यात्मक अंश का स्पर्श हो - साधक के जीवन से, शक्तिपात के माध्यम से. . . दीक्षा के उपरान्त ही घटित होती है शक्तिपात की क्रिया . . . वर्षों का एवं वर्षों का ही नहीं, कई-कई जन्मों का पुण्य जाग्रत होता है, तब इस लौह खंड जैसी देह पर पारस रूपी सद्गुरु का स्पर्श होता है . . . जो देह और मन, लौह खंड बन गया हो-- घरेलू झगड़ों से, व्याधियों और मानसिक तनावों से।

क्या आप अभी भी इनका उपाय चिकित्सा में खोज रहे हैं? क्या आप ऐसा मानते हैं कि मानसिक तनाव, समझौतों और उपायों द्वारा सुलझाए जा सकते हैं? व्याधियां क्या केवल शरीर में असंतुलन से ही होती हैं? पति-पत्नी के झगड़े और कलह की स्थितियां क्या पारस्परिक समझौते का अभाव ही होती हैं?

यह तो लौकिक रूप से सोची गई बात है और लौकिक रूप से उपाय ढूंढने का प्रयास है, क्योंकि जीवन में अहं प्रतिक्षण घेरे जो रहता है व्यक्ति को, खुद अपने भाग का नियन्ता होने का . . .

जीवन में अवसर सीमित होते हैं और यदि उनका उपयोग न किया जाए, तो कष्टों में घिसटती यह जिन्दगी बोझ बन जाती है। एक-एक पल काटने लगता है व्यक्ति को, और तिल-तिल कर वह न तो जी पाता है और न मर पाता है। कभी उपाय ढूंढता है किसी नशे में, तो कभी बहलाना चाहता है अपने को किसी व्यसन में, *लेकिन सूनी - सूनी आंखें और होठों पर जम गई पपड़ी तो नहीं छुपा सकता, फीकी सी मुस्कान तो सब रहस्य खोल ही देती है कि हृदय से निकल कर आनन्द का रस या तो आ नहीं रहा और आ भी रहा है तो वह धारा बहुत क्षीण हो गई है. . .*

. . . जो नदी जैसा वेग उछलना चाहिए अट्टहासों में, वह नहीं आ पाता। आंखों में चमक और चेहरे पर बेफिक्री नहीं झलकती. . . क्या यही जीवन है? कुछ हजार या कुछ लाख सम्पत्ति जोड़ने में यही मिला होगा ब्याज के रूप में, जो चक्रवर्ती रूप से बढ़ता दिखाई दे रहा है। क्या उपयोगिता है ऐसे धन की? क्या पूर्णता है इसकी जीवन में? इन प्रश्नों पर आज नहीं सोचा तो फिर कब सोचा जाएगा? **सद्गुरु की कृपा रोज मिलने वाली घटना नहीं होती। शक्तिपात बाजार में मिलने वाली वस्तु नहीं है, शक्तिपात आग्रह करने की भी क्रिया नहीं होती। वर्षों - वर्षों तक शिष्य सेवा करते रहते थे अपने गुरु की, उस क्षण की प्रतीक्षा में, कि जब वे उन पर शक्तिपात करेंगे और एक ही क्षण में समाप्त**

आवश्यक नहीं कि किसी मानसिक तनाव की दशा में किसी गुत्थी को सुलझाने में मनोचिकित्सक की सहायता ली जाए. . . अन्य भी कई उपाय संभव है जीवन को तनाव रहित बनाने के लिए. . .

कर देंगे, जीवन का सारा दुख- दारिद्र्य और तनाव, निर्निमेष दृष्टि से देखा करते थे अपने गुरु के मुख की ओर, कि कब वे रीझेंगे और कब एक कृपा कटाक्ष कर देंगे. . .बस एक पल की ही तो बात होती है, एक क्षण की ही घटना होती है. . . शक्तिपात। पारस, लोहे को बस स्पर्श ही तो करता है, वर्षों रगड़ नहीं देनी पड़ती और फिर वह लोहे का टुकड़ा एक पल में स्वर्णिम हो जाता है . . . यह जीवन भी ऐसा ही स्वर्णिम हो जाता है।

. . . फूट पड़ती है पता नहीं कहां से सूखे पड़े मन में रस की धाराएं, उमड़ने लगता है प्रेम का सागर। प्रेम - जो कि हम इस जीवन में विस्मृत कर चुके हैं। एक अनोखा आस्वाद . . . जो वासना से भेद न कर पाने के कारण दुर्गन्ध बन कर मन, मस्तिष्क में विष की तरह फैल चुका है। यह विष , यह पीड़ा ही कारण है सारे दुखों का, तनाव और लड़ाई झगड़ों का, चाहे वह घर का कलह हो या ऑफिस का तनाव। **कोई भी औषधि प्रेम नहीं उत्पन्न कर सकती और प्रेम नहीं है तो जीवन में प्रार्थना नहीं है, प्रभु चरणों में नत होने की क्रिया नहीं है ,** एक सूखे ठूंठ की तरह अकड़ा हुआ मन है, जिसे बल - पूर्वक झुकाएं भी, तो वह दो टुकड़े ही हो जाएगा। बिना रस के यह मन झुकेगा भी कैसे, और जब तक फूल की डाल धरा पर बिखर नहीं जाती, तब तक न तो इस धरा का श्रृंगार होता है, और न उस वृक्ष का . . .

. . . शक्तिपात ऐसी ही क्रिया है। गुरुदेव द्वारा दिया गया ऐसा ही वरदान है। सब कुछ समझते हैं गुरुदेव और इसी से कोई उपदेश या साधना नहीं बताते अपने शिष्य को, क्योंकि पहले तो उसका मन सरस करना है, पहले तो उसमें लोच लाना है, फिर तो वह खुद ही हर सिंगार के फूलों की तरह पूरी धरा पर बिखर जाएगा। कोई उसे अंजुलि में भर लेगा, और कोई उसे अपने हृदय से लगा लेगा, जिसमें पुष्प की सार्थकता है, जिसमें शिष्य की पूर्णता है। **किसी का हो जाना या किसी को अपना बना लेना, केवल यही एक सूत्र तो दिया है पूज्यपाद गुरुदेव ने जीवन जीने का। और उपाय में वे ही देते हैं 'शक्तिपात'।**

. . . साधना सिद्धि, देवी और देवता और फिर बहुत आगे की स्थितियां हैं जो सहज सुलभ हो जाती हैं, क्योंकि शक्तिपात से जीवन का आरम्भ जो हो रहा है!

. . . सीधा और सरल उपाय जिसमें बोझिलता से भरा कोई भी उपदेश नहीं, कोई भी साधना नहीं. . . क्योंकि पहले तो मन सरस करना है. .

(पृष्ठ ५० का शेष भाग)

समस्या रही है। उपचार रूप में पूज्य पाद गुरुदेव के दुर्लभ औषधि ज्ञान के किसी एक कण को प्राप्त कर अपने जीवन को मानसिक व शारीरिक हताशा के गर्भ से निकाल, सामान्य जीवन यापन करने के पात्र बने। जहां अन्य उपचार व्यक्ति के शरीर पर एक भद्दा सा धब्बा छोड़ जाते हैं, वहीं प्राकृतिक उपचार ऐसा कोई दुष्प्रभाव नहीं रहने देते।

पूज्यपाद गुरुदेव ने विभिन्न रोगियों की दशाओं को देख, उनकी स्थितियों के अनुरूप ही, उनके लिए औषधियों का निर्माण किया। उन्हें **पापमोचनी** या **धनवन्तरी दीक्षा** से भी शुद्ध किया , जिससे वे औषधियों का पूर्ण लाभ प्राप्त कर सकें। आयुर्वेद में औषधियों को तभी प्रभावी माना गया है जब वे विशिष्ट मंत्रोच्चार के साथ तोड़ी एवं परिपक्व की जाएं और यही क्रिया पूज्यपाद गुरुदेव ने सम्पन्न की दीक्षाओं तथा मंत्रों के माध्यम से।

अपने सन्यस्त जीवन के विस्तृत अनुभवों एवं इस गृहस्थ जीवन में अनेक रोगियों पर परीक्षण कर पूज्यपाद गुरुदेव ने जिस औषधि को निर्विवाद रूप से उपयोगी पाया वह है **''कन्तुरयून जड़ी''**। केवल यही एक ऐसी जड़ी है, जो कि चाहे जैसा भी कुष्ठ रोग हो, उपयोगी सिद्ध होती ही है। जम्मू से श्रीनगर की ओर बढ़ने पर इस झाड़ी को सामान्य प्रयासों से खोजा जा सकता है और इसकी विशेषता दूर से ही पहचानी जा सकती है। लगभग दो - ढाई फीट ऊंची इस घनी झाड़ी के रक्त वर्णी और ताम्र वर्णी रंग के पत्तों के मध्य छोटे - छोटे लाल रंग के फल दूर से ही ध्यान आकृष्ट कर लेते हैं। इसकी पत्तियों का रस ही लाभकारी होता है तथा फल प्रयोग में नहीं लाए जाते। इसके तने की छाल का लेप उचित निर्देश में, घाव पर करने से आराम मिलता है।

पूज्यपाद गुरुदेव का तो ज्ञान आयुर्वेद में तो असीम है और उन्होंने अपने एक रोगी को तो केवल तुलसी के पंचांग का विशिष्ट अनुपात में प्रयोग कराकर भी पूर्ण रूप से रोग मुक्त किया है। कुष्ठ रोग सामाजिक जीवन में एक अभिशाप है और शारीरिक कष्ट के साथ - साथ असह्य मानसिक कष्ट भी झेलना पड़ता है। स्वस्थ हो जाने के बाद भी घावों के शेष रह गए चिन्ह के कारण उसे समाज में उपेक्षा की दृष्टि से देखा जाता है। व्यक्ति न केवल कुष्ठ रोग से मुक्त हो वरन पुनः समाज में सामान्य जीवन जी सके, उसके लिए औषधियों के प्रयोग के साथ - साथ गुरु कृपा व उनका आशीर्वाद नितांत आवश्यक हो ही जाता है।

एक्यूप्रेशर -

ऐसी लोकमान्यता है कि वास्तव में यह पद्धति उन बौद्ध- भिक्षुओं द्वारा विकसित की गई, जो कि धर्म के सिद्धान्तों के अनुसार, अपने साथ कोई भौतिक सामग्री नहीं रखते थे, लेकिन आवश्यकताएं तो जीवन के साथ चलती ही रहती हैं और तब उन्होंने विकसित की यह पद्धति, जो उनके साथ चीन तक पहुंच गई, वहां से जापान में फैली, और पुनः भारत में वापस आई। जापान में **शिआत्सु** के नाम से यही पद्धति, वहां की राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति के रूप में स्थान प्राप्त कर चुकी है।

रक्त नलिकाएं, लसिका तंत्र, स्नायु तंत्र यह तीन आधार होते हैं -- **'एक्यूप्रेशर पद्धति'** के।

इस पद्धति में दोनों तलवे मुख्य रूप से सम्पूर्ण शरीर का केन्द्र माने जाते हैं और इन तुलवों में शरीर के प्रत्येक अंग का प्रतिनिधित्व करने वाले केन्द्र पर -- रोग के अनुसार उचित विधि से दबाव देकर, जिसे एक्यूप्रेशर की भाषा में **डीपमसाज** कहा जाता है, रोगी को पूर्ण लाभ दिया जा सकता है।

एक्यूप्रेशर की पद्धति में यह माना जाता है कि यह विभिन्न केन्द्र वास्तव में शरीर के वे संवेदनशील बिन्दु हैं, जिनके द्वारा अंग सही संचालित किया जा सकता है, पैर के तलुओं में एवं दोनों हथेलियों के

चिकित्सा की यह तेजी से लोकप्रिय होती पद्धति, किसी अन्य चिकित्सा पद्धति की विरोधी नहीं, अतः व्यक्ति सहयोगी रूप से भी अपना सकता है, इस पद्धति को. . .

तल में ये विभिन्न केन्द्र किस प्रकार स्थापित हैं, यह विस्तृत चर्चा का विषय है, लेकिन संक्षेप में यही कहा जा सकता है कि एक्यूप्रेशर पद्धति का ज्ञान प्रत्येक व्यक्ति को होना आवश्यक ही है, क्योंकि संकट-कालीन स्थितियों में प्राथमिक उपचार के रूप में इस पद्धति का भली-भांति उपयोग किया जा सकता है। विभिन्न स्नायु संस्थान से संबंधित रोगों तथा विभिन्न अंगों की पीड़ा में एक्यूप्रेशर पद्धति का, रोगियों को विशेष लाभ मिलते देखा गया है। इस दिशा में निरन्तर शोध हो रहे हैं और कई प्रकार के वाईब्रेटर, बेलन एवं प्लास्टिक व कठोर रबड़ के उपकरण भी निर्मित किए जा रहे हैं।

एक्यूपंक्चर -

एक्यूप्रेशर और एक्यूपंक्चर दो मिलते हुए शब्द हैं, लेकिन दोनों में थोड़ा भेद है, जहां एक्यूप्रेशर विभिन्न अंगों अर्थात संवेदनशील बिन्दुओं पर दबाव के द्वारा उपचार प्रदान करता है, वहीं एक्यूपंक्चर में थोड़े से भेद के साथ शरीर के विभिन्न अंगों पर अत्यन्त बारीक सूईयां चुभोकर उपचार किया जाता है, ये सुईयां इन्जेक्शन की सुईयों से भी ज्यादा महीन होती हैं।

अन्तःस्त्रावी ग्रंथियों के स्राव को नियमित करने के लिए एक्यूप्रेशर की विधि उपयोगी रहती है, जैसे शरीर की मुख्य ग्रन्थि पिट्यूटरी ग्रंथि को सक्रिय करने के लिए हाथ एवं पैर के अंगूठों के अग्र भाग पर प्रायः दस सेकेंड तक दबाव देना लाभप्रद रहता है। थायराइड ग्रंथि हेतु हथेली में अंगूठे के नीचे की गद्दी जिसे शुक्रक्षेत्र कहते हैं, में प्रभावशाली केन्द्र बिंदु है।

संक्षेप में यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि एक्यूप्रेशर की पद्धति अपने - आप में सम्पूर्ण पद्धति है और भले ही रोगी की किसी भी पद्धति में आस्था हो लेकिन एक्यूप्रेशर का ज्ञान उसे अतिरिक्त लाभ देती ही है।

आयुर्वेदिक चिकित्सा

शतं वो अम्ब धामानि सहस्र वो रुहः।
अध शतक्रत्वो यूयमिमं में अगदं कृत।

— यजुर्वेद - १२/७६

" हे औषधियों! तुम माता के समान हितकारणी हो, तुम्हारे सैकड़ों नाम हैं, और असंख्य अंकुर हैं, तुम्हारे कर्म द्वारा संसार के सैकड़ों कर्म बनते हैं, अतः हे कर्मो को शुद्ध करने वाली औषधियों! तुम इस यजमान को भूख, प्यास, रोग आदि से रक्षित करो।"

भारतीय चिंतकों ने पेड़ - पौधों, वनस्पतियों को केवल जीवित - जाग्रत ही नहीं माना उनसे भी आगे बढ़कर उन्हें सम्माननीय मातृ- तुल्य माना। यह चिंतन केवल सम्पूर्ण दृष्टि रखने वाले, 'भारत' में ही संभव हो सकता था, सम्पूर्ण प्रकृति से तादत्म्य और आत्मीयता पूर्ण सम्बन्ध जोड़ा गया। उन्हें अपने जीवन का रक्षक और हितैषी माना। इसी से संभव हुआ भारत में 'आयुर्वेद' के उस ज्ञान का प्रादुर्भाव जिसकी उपयोगिता मानने को आज सम्पूर्ण विश्व बाध्य हो रहा है।

कृत्रिम तरीके से पशुओं का वध करके प्राप्त औषधियों के निर्माण को अमानवीय घोषित कर पुनः प्रकृति की ओर लौटने की बात कही जा रही है। आयुर्वेद केवल त्रिदोष सिद्धांत का ही शास्त्र नहीं है, आयुर्वेद की परिभाषा केवल इतनी नहीं है कि यह केवल मानव शरीर में उत्पन्न होने वाले कफ, वायु, पित्त की परस्पर विवेचना द्वारा, रोगों की सर्वथा अलग - अलग व्याख्या प्रस्तुत करता है, वरन आयुर्वेद सम्पूर्ण रूप से स्वास्थ्य एवं शरीर की रक्षा के साथ - साथ अध्यात्म और दिव्यता का आधार है। तभी तो उसे वेद की संज्ञा दी गई है, और आयु के वेद से भी आगे बढ़ते हुए केवल कुछ पेड़ - पौधों के अध्ययन तक अपनी परिधि सीमित न रखते हुए, अपने को इस प्रकार से विस्तृत किया, जिससे यह आज तक ग्राह्य और सम्माननीय है। आयुर्वेद का रचना का काल लगभग ५००० साल पूर्व माना जाता है। आयुर्वेद में शल्य चिकित्सा का भी पर्याप्त विवरण मिलता है। केवल सामान्य शल्य चिकित्सा का ही नहीं, वरन आज की आधुनिकतम पद्धति सर्जरी का भी विवरण अंग प्रत्यारोपण के रूप में प्राप्त होता है, और आश्चर्य होता है कि जो क्रियाएं आज सूक्ष्म और परिष्कृत यंत्रों द्वारा भी सफलता से नहीं की जा सकती उसे उन्होंने अपनी प्रज्ञा द्वारा समझ कर विवेचित किया और व्यापक रूप में भी शल्य चिकित्सा के माध्यम से सफलता प्राप्त की। आयुर्वेद शल्य चिकित्सा और औषधि के साथ - साथ आठ भागों में विस्तृत होता है -- काय, शल्य, मंत्र, शलाक्या, कौमार भृत्य, रसायन, अगद एवं बाजीकरण अर्थात् यह स्पष्ट रूप से मानव जीवन को सम्पूर्णता से अपने आधीन लेता ही है।

यह सर्वथा सत्य है कि प्रकृति से तादात्म्य स्थापित करने पर वह अपना भेद बताती ही है, पौधे और वृक्ष मुखर हो ही उठते हैं। एक - एक वृक्ष की, एक - एक पौधे की, इस संसार में उपयोगिता केवल उसके फल या किसी पुष्प विशेष में ही नहीं, वरन उसके प्रत्येक अंग में है। प्रत्येक वृक्ष की पत्तियां, जड़, टहनियां, पुष्प, परागकण, फल, फलों के बीज, कोंपल, मानव के किसी न किसी रोग में सहायक सिद्ध होते ही हैं। इसके उपरान्त किसी प्रमाण की आवश्यकता रह ही नहीं जाती कि मानव व प्रकृति के बीच केवल संबंध ही नहीं, पूर्ण तादात्म्य है।

प्रकृति के इसी तथ्य को नीचे दिए जा रहे विवरण से इस लेख में स्पष्ट किया जा रहा है। सामान्य वृक्षों की पत्तियां जो कि आपके घर के आस - पास उगती हैं, और मुरझा कर पुनः जमीन में जाकर, धरती का पोषण करती हैं, वे अपने आप में कितना अधिक औषधि गुण छिपाए होती हैं, इसी को स्पष्ट करता है यह विवरण --

(शेष पृष्ठ ७४ पर)

नाथ सम्प्रदाय का वह रहस्यमय योगी

. . .दीपक की थरथराती लौ में साये लम्बे और छोटे हो रहे थे बार - बार, मैं खुद चौंक जाता, कहीं आ तो नहीं गए. . . यही तो क्षण हैं, उनके आने के . . . जोगनाथ के बताए अनुसार, निस्तब्ध हो गई है रात्रि . . . अब तो मंदिर में भी कोई नहीं रहा होगा. . .

जैसी ख्याति सुन कर आया था, वैसा ही पाया। दूर - दूर तक फैली हुई पवित्र भूमि, और कण - कण अपनी दिव्यता को खुद ही कहता हुआ, यहां की माटी भी जैसी चमक रही हो देवी के तेज से, सूरज की आभा भी मद्धिम पड़ गयी हो, इस चैतन्य मंदिर के प्रांगण में, और धूप नहीं जैसे सूरज की किरणों का एक लघु पुंज उतर आया हो, इस मंदिर के प्रांगण में, देवी के चरणों में अर्घ्य देता हुआ . . . दूर - दूर तक फैली और हरियाली और वृक्षों का झुरमुट । लग ही नहीं रहा था कि यह बीसवीं सदी है या आज से दो तीन शती पूर्व का युग . . . ऐसा ही वातावरण तो है शक्तिपीठ पाटन देवी में . . . महामाया भगवती पाटेश्वरी का स्थान. . . जहां देवी का वाम स्कन्ध पाटन सहित गिरा, और बन गया एक चैतन्य पीठ। **जहां देवी का वाम स्कन्ध ही गिरा हो, वहां फिर ऊर्जा व्याप्त होनी ही थी . . . कण - कण मुखरित और नृत्यशील होना ही था और तभी तो महायोगी गोरखनाथ की योग साधना और भगवती की आराधना का केन्द्र बन गया यह।** उन्हीं के कर कमलों से स्थापित हुई, यहां पर देवी की पिण्डी . . . मूर्ति नहीं केवल चांदी मढ़ा गोल चबूतरा, जो प्रतीक है देवी की उपस्थिति का . . . पाटेश्वरी ही तो उसकी संज्ञा है यहां, और कहते हैं कि इसी विग्रह के नीचे से पाताल तक सुरंग गयी हुयी है।

गुरु गोरख नाथ ही नहीं, फिर तो नाथ सम्प्रदाय का तीर्थ बन गया यह, जहां स्पर्श है मां का, और चैतन्य पुरुष गोरखनाथ का। . . . तंत्र का अद्भुत प्रभाव देखना है तो या विलक्षण चमत्कार देखना हो तो फिर, यहां कुछ दिन रुक जाना चाहिए . . . कानों में बड़े - बड़े कुण्डल, कानों को फाड़ते हुए से और गले में पड़ी कौड़ियों की माला . . . अलबेले और फक्कड़ नाथ सम्प्रदाय की अद्भुत मिलन स्थली . . . अपनी ही धुन में मस्त बेपरवाह . . . अत्यंत आनन्द मग्न और अपने - आप में तृप्त और बलिष्ठ शरीर लिए, लगे ही नहीं कि इन्होंने जीवन में कभी दुख , तनाव जाना हो, चेहरे पर

बिखरी बेफ्रिकी और नशे से भी ज्यादा, उतर आए आंखों में मस्ती के लाल डोरे।

यही है मां भगवती पाटेश्वरी की महिमा और आज तक अक्षुण है, उस क्षेत्र की तपः ऊर्जा, जो कभी गुरुगोरखनाथ के सम्पर्क से चैतन्य हुई। **उत्तर प्रदेश का जिला गोंडा और गोंडा से कुछ दूर छोटी लाइन के रेलवे मार्ग पर पड़ने वाला स्टेशन तुलसीपुर . . .** यहीं से थोड़ी दूर पर बना यह शक्ति पीठ, लोक मान्यताओं में पाटन मैया, और तंत्र का सिद्ध पीठ पाटेश्वरी देवी। नेपाल के प्रसिद्ध सिद्ध योगी बाबा रतन नाथ का उपासना स्थल, जो अपनी देह शांत हो जाने पर नित्य सूक्ष्म रूप से यहां आते हैं, और पूज्य हैं एक देव की भांति **. . . इसी चैतन्य क्षेत्र की विशेषता है कि यहां कोई भी व्यक्ति, कैसा भी रोगी हो, रोग ग्रस्त रह ही नहीं सकता। मंदिर के उत्तर में बना सूर्य कुण्ड जिसमें रविवार को स्नान कर देवी का पूजन करने वाला, कुष्ठ जैसे असाध्य रोग से भी मुक्त हो ही जाता है।** कहते हैं कि यहां जिस व्यक्ति का जो अंग रोग ग्रस्त हो, वह अंग यदि चांदी का बनावा कर देवी को अर्पित कर दे, तो वह उसी क्षण उस रोग से मुक्त हो जाता है . . . ऐसी ही जाग्रत शक्ति पीठ, आराधना स्थली रही है नाथ सम्प्रदाय के विलक्षण योगी **व्याघ्रेन्द्र स्वामी** की . . . तंत्र के क्षेत्र में एक प्रसिद्ध नाम, पूज्य व्यक्तित्व और अद्भुत हठीला, मानों गुरु गोरखनाथ का कोई अंश उतर आया था उसमें . . . वास्तविक नाम और स्थान तो किसी को नहीं पता, लेकिन तेजस्विता देखकर इस क्षेत्र का कोई अज्ञात योगी स्वतः बोल पड़ा . . . "यह तो साक्षात् व्याघ्र है,!" और तभी से विख्यात हो गए, व्याघ्रेन्द्र के नाम से . . . अद्भुत आत्मलीन और साधनाओं की धुन में मग्न रहने वाला व्यक्तित्व।

. . . पाटन की पवित्र भूमि तपः स्थली रही उनकी, अपने गुरु, आदि गुरु गोरखनाथ की ही तपः स्थली, और ढूंढ निकाले उन्होंने वे ज्ञात - अज्ञात सूत्र जो अधूरे रह गये थे गुरु गोरखनाथ के देहावसान से। यही तो रहस्य बताया गया था मुझे . . . यह व्याघ्रेन्द्र स्वामी भी अपने सूक्ष्म शरीर से नित्य आते ही हैं, और दे जाते हैं साधना रत साधकों को दुर्लभ सूत्र।

> **. . . यह शक्तिपीठ ही नहीं, सिद्धपीठ ही नहीं, यह तो साक्षात् चैतन्य पीठ है. . . यहीं गिरा था मां का वाम स्कन्ध, कोई रोगी रह ही नहीं सकता इस क्षेत्र में . . . पुकारने का ढंग आना चाहिए. . .**

. . . ठीक वही क्षण, वही पल और दीपक की थरथराती लौ में मेरा मन भी थरथरा रहा था। क्रमशः छोटे और बड़े होते साये, क्या व्याघ्रेन्द्र स्वामी आ गए? हर पल होती बैचेनी . . . बाबा बटुक नाथ का स्मरण कर, काट रहा था एक - एक पल, और धुंधली हो गयी थी मंदिर की दीवारें, रहस्य मय आभा अपने में से प्रकट करती हुई . . . अद्भुत कथाएं उनके आकार - प्रकार को लेकर, उनकी चमत्कारी शक्तियों को लेकर और उनके किंवदंतियों को लेकर, कि वे नित्य सिंह पर बैठ कर पधारते हैं। अपनी प्रिय और आराध्या मां की स्तुति के लिए . . .

बटुक भैरव नाथ मंदिर के पीछे का क्षेत्र चुना था मैंने, क्योंकि वही तो निर्जन क्षेत्र था और उसी के समीप ही कहीं बैठा करते थे व्याघ्रेन्द्र . . . प्रतीक्षा के पल समाप्त हुए और एक भव्य आकृति प्रकट हो ही गई. . . मेरी धारणा के विपरीत, एक विशाल काय किन्तु श्वेत जटा और श्रमश्रु के साथ. . . आंखों में उतरा हुआ एक सौम्य तेज, गैरिक वस्त्र, नाथ योगियों की सामान्य वेश भूषा से विपरीत, केवल चेहरे पर तमतमाता वह तेज, ज्यों सिंह झपट्टा मारने के एक क्षण पहले उग्र हो बैठा हो . . . भय, श्रद्धा और रोमांच से सिहर गया मेरा शरीर . . . यह तो योगी ही नहीं, साक्षात् महा योगी हैं, क्या अर्पण करूं इन्हें, क्या भेंट दूं इन्हें। यह तो सामान्य साधक ही नहीं, साक्षात गुरुवत् ही हैं, मैं तो नाथ सम्प्रदाय का कोई मामूली सा हठ योगी समझ रहा था, और हाथ जोड़कर उठ खड़ा हुआ। आसन निवेदित करने के अतिरिक्त और कुछ भी तो नहीं हो सका मुझसे, चेतना लौटी, और पुष्प अर्पित किए उनके गौर धवल रक्तिम चरणों में. . . **कैसा अद्भुत व्यक्तित्व, सम्पूर्ण शरीर ज्यों किसी गुलाबी मूर्ति पर एक पतली से झिल्ली चढ़ा दी गई हो, और सारा रक्त उस पतली सी पर्त को फाड़ कर न बाहर निकल आए, ऐसा धधकता हुआ व्यक्तित्व, आंखों में नीलापन और हल्की अधमुंदी . . . इन जगत प्रपंचों से सर्वथा निस्पृह . . . दूर शून्य क्षितिज में मानों देख रही हों — मां भगवती पाटन देवी की लीला, श्रृंगार का रहस्य और खुल गया हो, जिसके समक्ष जीवन का एक - एक भेद . . .** किस ज्ञान की याचना करूं, मैं ऐसे श्रेष्ठतम योगी से, क्या प्राप्त करूं मैं ऐसे विलक्षण योगी से . . . जड़ हो गया था मेरा शरीर और जड़ हो गयी थी मेरी वाणी . . . जड़ हो गयी थी आंखें भी, लेकिन उस दिव्य रूप को देखने में . . . मानों नेत्र हटना ही नहीं चाहते हों, पलकें बन्द न होना चाहती हों, और समेट लेना चाहती हों सारी विलक्षणता अपने अंदर. . .

. . . किस उच्चता में व्यतीत हुई ऐसी मेरी चैतन्य रात्रि, वह तो शब्दों के वर्णन का विषय ही नहीं, लेकिन व्याघ्रेन्द्र

स्वामी सचमुच जिस रूप में विख्यात हैं, वैसे ही मिले जिनके औदार्य से तो स्पष्ट हो जाता है भगवान शिव का औढर दानी पन . . . एक से एक बढ़कर दुर्लभ रहस्य, एक से एक गोपनीय साधनाएं और प्रत्येक साधना उनकी कसौटी पर खरी उतरी . . . जीवन का कोई क्षेत्र क्यों न हो. . . क्या साबर मंत्र, क्या अघोर मंत्र, क्या कापालिक मंत्र, क्या शाक्त मंत्र और किसी भी तंत्र का कोई भी तांत्रिक मंत्र छूटा ही नहीं है स्पर्श से उनके। जीवन की सौभाग्यदायक साधनाएं, जीवन के एक - एक पग को निष्कंटक बनाने का उपाय . . . जीवन के दोनों छोर पकड़ रखे हैं उन्होंने, चाहे वह ज्ञान की ऊंचाई हो, तंत्र की जटिलता हो, या फिर रोज के जीवन में आने वाली समस्याएं . . .

ऐसा ही तो अद्भुत प्रयोग समझाया उन्होंने मुझे . . . सचमुच यह शक्ति पीठ ही नहीं, सिद्ध पीठ ही नहीं , यह तो चैतन्य पीठ है, मां की उपस्थिति का जीता - जागता प्रमाण है। करुणा दायक प्रवाह है . . . कोई रोगी रह ही नहीं सकता इस क्षेत्र में, उसे पुकारने का ढंग आता हो, अपनी बात का स्वर हो-- रहस्योद्घाटन किया उन्होंने मुझसे।

. . . और यह स्वर उतारने की यह विधि भी खोज निकाली थी उन्होंने, अपनी साधक जीवन में, और मुक्त कर दिया था सैकड़ों हजारों रोगियों को असाध्य रोगों से। मंदिर में स्नान कर , देवी का पूजन कर, कुष्ठ रोग से मुक्त होने का उपाय भी परिष्कृत किया था व्याघ्रेन्द्र स्वामी ने, और ढूंढ निकाला इन्हीं शक्तियों को समझते हुए, रोग निवारण की वह सम्पूर्ण पद्धति, जिसके पीछे जुड़ा *व्याघ्रेन्द्र स्वामी का नाम तो काल की परतों में छुप गया, लेकिन लोक मान्य हो गया यह शक्ति पीठ . . . जैसे काशी क्षेत्र में विन्ध्यवासिनी की महिमा, विश्व विख्यात है, वही तो स्थान है पूर्व और नेपाल के क्षेत्रों में पाटन देवी का।*

निःसंकोच रूप से मुझे रहस्य बता दिया उन्होंने, रोग निवारण की सम्पूर्ण पद्धति का, उजागर कर दिया वह गोपनीय साबर मंत्र, जो अब तक केवल व्याघ्रेन्द्र स्वामी की परम्परा में चल रहे योगियों को ही ज्ञात था। एक विलक्षण पद्धति के अन्तर्गत और साबर मंत्र का ऐसा मिला - जुला प्रभाव जो कि तीर की तरह असर करे, रोगी के शरीर पर। . . . पूरे वर्ष किसी भी दिन, कभी भी, उन्मुक्त रूप से किया जाने वाला सिद्ध प्रयोग , ठीक व्याघ्रेन्द्र जी की तरह तेजस्वी और व्याघ्र की तरह झपट्टा मारकर रोगों को समाप्त करने में सक्षम।

दिवस या मुहूर्त का कोई भी बंधन नहीं, फिर भी यदि रविवार की रात्रि में यह प्रयोग किया जाए, तो अधिक उपयोगी रहता है। साधक पीले अथवा काले रंग के वस्त्र धारण कर, दक्षिण दिशा की ओर मुंह करके बैठ जाए, उसका आसन और सामने बिछा वस्त्र उसके धारण किए हुए वस्त्र के ही रंग का हों। सामने चावल की तीन ढेरियां बनाएं, प्रत्येक पर एक - एक गोल सुपारी रख, मध्य में अपने गुरुदेव की स्थापना करें , उनके बांयी ओर गुरु गोरख नाथ एवं दाहिनी ओर गुरु व्याघ्रेन्द्र नाथ की भावना कर, उनका पूजन केसर, चंदन, अक्षत एवं पुष्प की पंखुड़ियों से करें, तथा कुंकुम का टीका लगाएं। सामने ताम्र पात्र में रोग निवारक **पाटेश्वरी यंत्र** स्थापित करें। इस साधना में साबर रोग निवारक पाटेश्वरी यंत्र तथा व्याघ्रेन्द्रनाथ पद्धति के मंत्रों से सिद्ध **एक सियार सिंगी** तथा व्याघ्रेन्द्र नाथ पद्धति से ही तैयार की गई **रोग निवारक माला** की आवश्यकता पड़ती है। इन तीन सामग्रियों के अतिरिक्त, कोई अन्य विधि - विधान आवश्यक नहीं है। वातावरण पूरी तरह से शांत हो, तीनों महायोगियों की उपस्थितियों की प्रार्थना कर **पाटेश्वरी यंत्र** का सामान्य पूजन करें, तथा उसके सामने सियार सिंगी को स्थापित कर उस पर सिंदूर चढ़ाएं ध्यान रखें कि सियार सिंगी यंत्र पर नहीं चढ़ानी है, और **रोग निवारक माला** से नीचे लिखे मंत्र का १०८ बार जप करें --

मंत्र -

ॐ इलि इलि चलि चलि इल हुम्

रोगी अपनी सामर्थ्य अनुसार अथवा संकल्प कर कोई दूसरा व्यक्ति साधना कर रहा है तो अधिक से अधिक एक हजार आठ बार उपरोक्त मंत्र का उच्चारण करे, इससे अधिक मंत्र जप की आवश्यकता नहीं है। यह एक सप्ताह का पूर्ण क्रम है। मंत्र जप के उपरान्त माला को गले में धारण कर लें तथा यंत्र को पूजा स्थान में स्थापित कर लें। सियार सिंगी को सिंदूर की डिब्बी में बंद कर अपने पास रखें, यह प्रकृति की एक चमत्कारी वस्तु है जिसके बाल स्वतः बढ़ते रहते हैं किन्तु उन्हें काटना नहीं चाहिए। ऐसी **सियार सिंगी पास रखना मात्र जीवन का एक ऐसा कवच है जिससे व्यक्ति पर कोई भी अपघात अथवा तांत्रिक प्रयोग असर कर ही नहीं सकते। मुझे यह सूत्र भी व्याघ्रेन्द्र नाथ जी से पता चला।**

बाबा बटुकनाथ के मंदिर के पीछे का क्षेत्र. . . वहीं तो रही उनकी साधना स्थली. . . साक्षी है वह विशाल वट वृक्ष . . . जहां आज भी वे नित्य सूक्ष्म या प्रकट रूप से आते ही हैं. . .अपनी आराध्या ''मां'' का नित्य दर्शन करने. . .

पारद चिकित्सा

पारद इस धरती पर एक ऐसी धातु है जो कि केवल धातु नहीं अपने-आप में छः प्रकार से फलदायक मानी गई है - दर्शन, स्पर्शन, भक्षण, स्मरण, पूजन एवं दान। पारद जहां स्वर्ण निर्माण प्रक्रिया की आधार धातु है, वहीं योगियों के जीवन का भी आवश्यक अंग रही है, क्योंकि जहां योगियों ने इसका भक्षण किया देह को सुदृढ़ करने में, फिर वहीं सांसारिक जीवन में इसका प्रयोग किया गया देह को चिरयौवनवान बनाने में। विभिन्न ग्रन्थों में पारद की उपयोगिता का वर्णन किया गया है। पारद इस प्रकार पवित्र माना गया है कि इसकी निन्दा करने वाले को भी परम पापी घोषित किया गया है। **जिस मनुष्य को पारद की सिद्धि होती है, वही दानशील, भोक्ता, सुन्दर, सुखी और बुढ़ापे की चंगुल से छूटा होता है।** बिना रस सिद्ध हुए अर्थात् पारद कर्म को जाने बिना वैद्य को सक्षम माना ही नहीं जाता। क्योंकि **टोडरमल** द्वारा रचित **टोडरानंद** में स्पष्ट कहा गया है कि केवल रसशास्त्र को जानने वाला वैद्य ही कीर्ति व धन को प्राप्त करता है, दूसरे वैद्य घास - फूस जैसी औषधियों से इनको नहीं प्राप्त कर सकते। पारद शास्त्र अत्यन्त विशाल शास्त्र है और भारत के अतिरिक्त अरबी व फारसी ग्रन्थों में भी इसका विशेष ज्ञान प्राप्त होता है।

शुद्ध पारद प्राप्त होना कठिन होता है। मल, वहनि, भूमि, उन्मत्त और शैल ये पांच दोष पारद में कहे गये हैं। इन दोषों को समाप्त करने से ही पारद फिर प्रयोजन योग्य और औषधि गुणों को देने वाला होता है। पारद के १०८ संस्कारों का वर्णन शास्त्रों में मिलता है, लेकिन १८ संस्कार ही मुख्य माने गए हैं। अलग - अलग संस्कारों के साथ ही फिर बढ़ती जाती है पारद की गुणवत्ता।

> **केवल पारद कर्म का ज्ञाता वैद्य ही धन, कीर्ति प्राप्त करता है। घास, फूस जैसी औषधियों से करने वाला नहीं. . .**
>
> **-- टोडरानन्द ग्रंथ से**

नामर्दी, शिथिलता, वृद्धावस्था अथवा वीर्य में शुक्राणु न होने जैसे असाध्य रोगों का एक मात्र उपाय पारद ही है। **पारद का किसी भी प्रकार से शरीर में स्पर्श सुखद व आरोग्य वर्धक होता ही है, इसी से प्रत्येक योगी और सन्यासी पारद माला के रूप में अथवा पारद मुद्रिका के रूप में अपने शरीर से निरंतर पारद का संस्पर्श बनाये ही रखते हैं, और फिर बने रहते हैं जीवन भर चिर यौवनवान।** तभी तो वज्र जैसा हो जाता है उनका शरीर, और धूप, गर्मी, सर्दी का कोई भी प्रभाव नहीं पड़ता उन पर। पारद के स्पर्श से प्राप्त हो जाती है व्यक्ति को अपूर्व सम्मोहन शक्ति, क्योंकि **पारद मुद्रिका** या **पारद माला** को धारण करने से धीरे- धीरे उसके अणु- अणु समाहित होते रहते हैं व्यक्ति के शरीर में। अपने गुण के समान ही पारद दे देता है उनको, वज्र जैसी शक्ति भी। जहां पारद भस्म या पारद पर आधारित औषधियां प्रत्येक व्यक्ति के लिये अनुकूल सिद्ध नहीं होती, वहीं पारद निर्मित विग्रह व्यक्ति को पूर्ण चैतन्य बनाने में समर्थ होते हैं। यदि **पारद शिवलिंग** पर व्यक्ति नित्य जल चढ़ाते हुए **ॐ नमः शिवाय मंत्र** का ११ बार मंत्र जप कर वह जल थोड़ा पी ले एवं शेष अपने बालों व अंगों पर लगा ले, तो कुछ ही दिनों में उसे प्राप्त हो जाता है -- अपूर्व यौवन, क्योंकि पारद को शास्त्रों में भगवान शिव का वीर्य ही तो कहा गया है।

पथरा गईं थी राधा की आंखें, जब तक कृष्ण आए . . . उदास,बोझिल और समय के थपेड़ों से जूझती हुई बेहाल, पहले का कोमल शरीर, कुम्हला कर और भी कोमल हो गया था या जर्जर, कुछ कहा ही नहीं जा रहा था, और खुद राधा भी तो . . . वे भी तो मूक रह गईं, अपलक एकटक और अधमुंदी आंखों से निहारती हुई . . . क्या देख रही हूं मैं! नहीं यह कृष्ण नहीं हैं, यह तो मेरे नैनों में बसी छवि ही मुझको भ्रमित करने यों आकर खड़ी हो गयी है या यह सचमुच ही कृष्ण तो नहीं है? जर्जर हो गया मन, ताने सुन-सुन कर। जो व्यथा थी विरह की, वह तो अन्दर ही अन्दर घुटती रही, दोहरे पाट में पिसने की व्यथा। कृष्ण! . . . वैसे ही मूक, लेकिन नैनों से बोलते हुए, वैसे ही आतुर लेकिन कुम्हला गए, युग भी तो बीत गया था, भले ही दुनिया कहे कि अभी दो वर्ष बीते, क्या कहा, क्या सुना दोनों के नयनों ने . . . पर आज वह ''भरे भवन में बात'' वाली कसक न रह गयी थी . . . न कहत सुनत रीझत, खीझत खिलत मिलत लजियात . . . यह क्या हो गया मुझसे? यह तो मैंने नहीं सोचा था -- पीड़ा उभर आई थी कृष्ण के घने - घने, भरे - भरे लेकिन सूनी आंखों वाले चेहरे पर . . .

. . . छंट गई भीड़ धीरे - धीरे ग्वालों की, जिन्हें आशा थी किसी नए कौतुक की। रुनझुन खनकती गोपिकाओं की करधनी भी मौन हो गई, दोनों के बीच उतर आए मौन से। चली गयीं वे भी उदास और निढाल।

सूखे बाल . . . कहीं - कहीं झांकती चांदी सी कोई लट, चेहरे पर झलकती और निरंतर उमड़ती स्वर्णिम आभा . . . वह तो झुर्रियों से भर गयी थी, ज़रूर दमकी होगी आज भी मिलन के इन क्षणों में वही आभा, लेकिन झुर्रियों की पर्तों से बाहर आकर, लपक बन सांवरे की देह पर तो नहीं दमकी -- जा तन की झांई परे श्याम हरित दुति होय . . . आज श्याम

अंखियन के घायल. . . बिरह की व्यथा,पीड़ा और उच्छवास. . .

यही होता है बिछोह की दशा में और अंखियन के घायल का उपचार भी अंखियन से ही हो सकता है. . .

'अंखियन के घायल को अंखियन ही उपचार'

शक्तिपात की रहस्यमय घटना जो घटित हुई कृष्ण के द्वारा उनकी चिरसंगिनी राधा के जीवन में. . .

की दुति हरित न हो सकी ।

केवल दो वर्षों में ही यौवन जैसे रूठ कर चला गया हो या फिर उदास। वह सांवरा जिसकी भौंरे सी काली - काली आंखें उस पर मंडराती थीं, वह तो दूर कहीं दूर चला गया था, इतनी दूर की उसकी गूंज भी तो नहीं सुनाई दे रही थी। दूरी का अहसास फासले से ही तो नहीं होता, दूरी तो बढ़ जाती है, घड़ियों के पल छिन से . . . और एक - एक पल वर्षों का हो जाए तब?

तब किसके लिए खिलती और सजती यह देह, वह जो कंगनों का सौन्दर्य सराहते - सराहते पकड़ लेता था बांह, वह तो दूर चला गया, गले में पड़े सतलड़े हार का सौन्दर्य निरखने के बहाने, जो चेहरे के समीप आकर, अपनी जादू भरी आंखें भीतर तक उतार देता था, वह चित चोर तो बिसरा गया मुझे. . .। उसने शायद नहीं बिसारा, भूला होता तो फिर इन आंखों में सूनापन क्यों होता? अधिक सोच - विचार नहीं कर सकीं वे, और इसके पहले कि थरथरा कर बिखर जाती, सम्हाल लिया उन्हें दो चिर - परिचित बांहों ने, सुडौल, मांसल और प्रेम की मादकता से भरी - भरी, देह गंध . . . अष्ट गंध या पद्म गंध नहीं , यह तो कोई और ही गंध है, मेरी और केवल मेरी चिरपरिचित , अचेत होते - होते उन बड़ी - बड़ी आंखों ने इतना ही तो देखा . . . आंखों में झिलमिलाते मोती के दो कण।

" कृष्ण मेरे ही हैं, मेरे ही रहेंगे" आश्वस्त हो गईं वे, उसी झिलमिल रंगों में गूंज उठी, मन में वे सभी यादें, उसी खोई बांसुरी धुन की तरह, धूल में लिपटी और मलिन पड़ गई साड़ी के सुनहरे पर उदास गोटे की ही तरह, उनके तन पर वही पुराने भूले - बिसरे दिनों की आभा . . .

दिन बीते, सप्ताह बीते और धीरे - धीरे करके एक माह भी बीतने को आ गया, लेकिन जर्जर हो गयी काया फिर न पनप सकी। सुखद और ऊष्ण आलिंगनों का स्पर्श भी उन मधुर दिनों को वापस न ला सका, कानों में रस घोलती बातें भी, मुरझा गई बेल को हरा - भरा नहीं कर पा रही थीं, जो लता ऊपर उठकर वृक्ष से लिपटने को हर क्षण आतुर रहती थी, वह बीच में ही मुरझा गयी थी, फिर उस पर फूल खिलने की बात कौन कहे . . . बहुत हुआ तो बस होठों पर एक फीकी सी मुस्कान, ज्यों दुख सहने का तो साहस अब और रहा ही नहीं , सुख भी सहने की क्षमता न रह गई हो। बांसुरी की वे पुरानी धुनें भी मुखर न कर सकीं, उन कोमल और दबी - दबी खिल - खिलाहटों को, मौन हो गयीं थी वे उमंगें, हृदय से उठती हूकों के सामने।

खंजन नयन, अब रूप रस माते न रह गए थे, और न पहले से चारू - चपल, उनमें उतर आई थी वेदना अपने प्रिय का स्वागत न कर पाने की, एक युग बाद मिलने पर भी उसको हंस कर न निहार पाने की, लेकिन राधा करतीं भी तो क्या? उनकी जिस देह पर आभूषण भी खनकने की जगह कृष्ण - कृष्ण कहते थे, वे सूखी कलाईयां अब दो चूड़ियां भी नहीं सम्हाल पा रही थीं, गर्दन शायद सतलड़े हार के बोझ से झुक जाती, फिर कहां टिकती वह चोली और घाघरा जिसको निहार कर, चमक जाती थी कृष्ण की आंखें और जिसकी लहर में नृत्य कर उठता था, उनका मन, बस जैसे तैसे जीवन की तरह ही घसीट रही थीं शरीर और यमुना का जल भी न जाने क्यों काला - काला हो उठा था। उदास हो गई थी यमुना भी, जिसके किनारे प्रेम के गीत, नैंनों की भाषा से लिखे गए। उदास हो गए वे वृक्ष, जिन्होंने कभी अपने छाया तले गुनगुनाहटें सुनी थी।

असह्य हो गई यह दशा, कृष्ण के मन में उफन पड़ी प्रायश्चित की धारा --"शायद! कहीं न कहीं से मैं भी दोषी हूं"। ऐसा कुछ आने ही लग गया उनके मन में-- क्या करूं, कैसे करूं, क्या करूं - यही धुन समा गई मन में उनके। कैसी लीला प्रकृति की कि मिल कर भी न मिलने की बात, उधर वे दो बातें करती - करती अचेत हुई जा रही थीं और इधर उदास हो गए दो नयन और दो कर्ण पटल भी तो उसी खनकती हंसी को सुनने के लिए, एक अधूरे रह गए गीत को पूरा सुनने के लिए, जिसकी कड़ियां अधूरी ही रह गयी थीं, एकाएक चले जाने से . . .

नहीं देखी गई कृष्ण से अब और यह दशा, गीतों का अधूरापन ही नहीं, जीवन का और जीवन के संगीत का यह अधूरापन समाप्त करने की ठान ही ली

उन्होंने। आ समाया उनकी आंखों में उदासी और प्रेम के संगीत के स्थान पर, वह रूप जो उनका नितांत **"स्व"** स्वरूप था, उनके शिष्य जीवन का स्वरूप, उनके साधक जीवन का स्वरूप, अपने गुरु सांदीपन के आश्रम में बिताए गए दिनों का हठीला तेजस्वी स्वरूप, उनके गुरु रूप का स्वरूप, उनका गम्भीर और तंत्रमय स्वरूप। **ठान ही लिया कि मुझे अब कर ही देनी होगी वह क्रिया, जो मुझे अन्यथा नहीं करनी चाहिए थी। मैं अब वही प्रयोग करूंगा -** उन उदास काली आंखों में तैर गई, एक गुलाबी आभा, पता नहीं किस कारण से, तंत्र को समेटते हुए अपनी आंखों के कारण, या फिर आने वाले दिनों में खोकर, जबकि राधा फिर से उनकी और केवल उनकी ही होने वाली थी, वही चिर परिचित सलोनी सूरत लिए, भरे - भरे स्वस्थ देह ही आभा से कुछ झलकाती हुई, शर्म से झिझकती हुई और मिलन की आभा से कपोल रक्तिम करती हुई. . . मिलन के लिए तेजी से आती हुई।

साक्षी बना इस घटना का तो केवल वह वृक्ष, जो अब तक साक्षी बनता रहा था, उनसे मिलने का, मन ही मन तय कर लिया -- वह दिन और मुहूर्त, जब उन्हें ऐसी अनूठी घटना सम्पन्न कर देनी ही थी। वे राधा को अपने संग, प्रेम के उस मौन साक्षी भूत के पास, अपनी बांहों के सहारे से ले गये और राधा वृक्ष के तने का सहारा लेकर लुढ़क गयी, वे आतुर थीं उन्हीं दो बोलों को सुनने के लिए, कान ही तो बन गए थे उनके दो नयन, उन्हीं से ही तो देख रही थी वह पिछले एक माह से अपने सांवले को . . . आंखें खोलने की शक्ति तो कब से जाती ही रही थी। बहुत हुआ तो एक पल निहार लिया बस! और मुंद-मुंद जाती थीं आंखें।

पर आज यह कौन सा स्वर? आज यह कैसी वाणी? वह बांसुरी की धुन की तरह इस देह से मेरा मन खींच कर ले जाता स्वर कहां? कहां से आ रही है यह मेघों की गर्जना, अभी तो सावन दूर है. . . खुल गयी आंखें अचरज में भर . . . सामने कृष्ण नहीं, यह तो कान्हा नहीं, यह कौन है?**वही देह, वही रूप रंग, लेकिन आंखों से यह ज्वाला जैसी क्यों? आज इनकी आंखों में इतनी तीव्रता क्यों,** और ये आज क्या कर रहे हैं? क्या बोल रहे इतनी तीव्रता से, मेघ गर्जन करते हुए? मानों आंखें खुली नहीं, लेकिन अचरज से जड़ हो गई पर . . . ओह! कितना उग्र, कितना ज्वलनशील, लेकिन यह भी तो मेरे ही सांवरे का एक रंग है, **मेरे मेघ जैसे सांवरे कान्हा का ही रंग और देखो तो आज यह गरज भी रहा है मेघ की तरह, और ये कैसी वर्षा सी हो रही है मेरी देह पर . . . ओह!** इसका यह भी स्वर है, यह तो मैंने पहले सुना भी नहीं था. . . ज्यों सूखी धरती पर बूंद पड़े और फूट पड़े सोंधी सी महक, वही तो फूट पड़ा था राधा के भीतर . . . न सही सावन की ऋतु, पर मेरा तन - मन तो भीगता ही जा रहा है, भीगता ही जा रहा है, यह कैसी वर्षा की है आज इसने, सच ही तो कहती हैं सभी, यह सचमुच बड़ा छलिया है। देखो तो इतने दिन तक मुझसे छुपाए रखा इसने अपना यह रूप, यह कैसा रूप है, यह कैसा रस है मेरे ऊपर . . . सोचते - सोचते मूर्छित हो गई कुछ ही पलों में।

> **रह्या देखि पिच चिबुक उठाइबो**
> **नैना में अलसान घणी छै**
> **घुल रही नींद लोमणा लाली**
> **काजल रेख बनी छै**
> **अलका शिथिल शिथिल हुई पलकां**
> **भौहों बंक तणी छै**
> **रसिक बिहारी प्यारी जी री**
> **चितवन अणी अणी छै**

यह घटना थी प्रेम की, उस अनूठे कृष्ण के जीवन की। भला और किसके जीवन में घट सकती थी ऐसी घटना? नेत्रों से निकलता शक्ति का वह प्रवाह, रसमय कर गया राधा को, फिर से ही कुछ ही दिनों में खिल गयी उनके मन की बगिया, और देखते - देखते ही भर गयी सूखी और निढाल देह।

काजल से भी ज्यादा कजरारी हो गई उनकी आंखें। पायलों की रुनझुन और करधनी फिर से गुनगुनाने लगी, होंठ भी गुनगुनाए, जिनको तो सिर्फ कृष्ण ने देखा। समाज ने तो पकड़ ली उनकी हंसी, आभूषणों की खनक से। फिर से शुरू हो गई काना-फूसियां, लुका-छुपी और नैनों की भाषा, तानों और छेड़ - छाड़ के पल, सतलड़े हार की अब कोई आवश्यकता रह नहीं गई थी, उससे भी ज्यादा दमक उठी थी राधा की मुख श्री, भला वह सतलड़ा हार सुनहरे पन में ऐसी गुलाबी आभा कहां समेटता, जो उनके मुख से लेकर अंग- अंग में उतर आई थी, मुग्ध हो गए कान्हा, उन्हें अपनी राधा जो फिर से मिली। अभी सावन की ऋतु दूर थी, लेकिन अब प्रतीक्षा भी किसे रह गई थी सावन की, इन रिमझिम फुहारों के सामने तो सावन भी मुंह चुराकर ठिठक गया था. . .

इतिहास की यह घटना शक्तिपात द्वारा कायाकल्प की अनूठी घटना है , और आज भी इसी रहस्य को ब्रज भाषा के गीतों में ढूंढा जा सकता है, जो उन दोनों के जाने के बाद भी गूंज रहे हैं, निरंतर अविराम, प्रेम क्या एक युग की ही धरोहर होती है?

संभव है आज के युग में भी कायेक पद्धति से कायाकल्प

राजस्थान का सुरम्य स्थल माउंट आबू. . . जितना पर्यटकों के मध्य लोकप्रिय, उतना ही रससिद्ध योगियों , और जड़ी - बूटियों की खोज में भटकने वाले बंजारों के बीच भी. . . तभी तो चमकती रहती है उनकी काया . . . बलिष्ठ और दीर्घ, छुपाए होते हैं वे ज्ञान, अनमोल जड़ी -बूटियों का . . . जिन पर बाद में ढूंढ निकाली गई, 'कायाकल्प' की सम्पूर्ण पद्धति . . . कायेक पद्धति

शुष्क और जटिल प्रदेश राजस्थान के ही बीच में कहां - कहां से फूट पड़ी है सुरम्य स्थलियां और बस सुरम्य ही नहीं, प्रकृति का अद्भुत खजाना, एक से एक जड़ी - बूटियां, अपने भीतर छुपाए हुए . . . कायाकल्प कर देने में सक्षम, शिथिल पड़ गयी इन्द्रियों को नव जीवन देने में समर्थ, आंखों की धुंधली पड़ गयी रोशनी, या वृद्धावस्था का असमय प्रवेश हो गया हो शरीर में... और स्वर्ण निर्माण की खोज में भटकते योगियों की प्रिय स्थली, जहां की चट्टानों में निकलने वाले पत्थर भी मिल जाते हैं सुनहरा रंग लिए हुए . . . तो कोई खजाने की खोज में भटकता हुआ, अनेकों - अनेक किवदंतियां जुड़ी हैं --- अरावली पर्वत श्रेणी की इन सुरम्य घाटियों से. . . 'अर्बुदा देवी' का प्रख्यात मंदिर जिनके नाम पर आबू पर्वत कहलायी और जहां बना है -- भगवती जगदम्बा का विश्व प्रसिद्ध नैसर्गिक मंदिर . . . **कहते हैं यहां रहने पर कुछ ही दिनों में साधक भांति-भांति का जड़ी - बूटियों का स्पर्श पा कर, स्वतः ही बन जाता है चैतन्य और स्फूर्ति वान . . .**

. . . राजस्थान की जन-जातियां और आदिवासी बंजारों के नाम से जाने - पहचाने आदिवासी, अपने पास परम्परा से छिपाए हुए दुर्लभ ज्ञान जड़ी - बूटियों का और बाजीकरण की औषधियों का . . . जिन्हें लेकर काफिलों में घूमते रहना ही, उनकी नियति नहीं, बल्कि परम्परा से चली आ रही जीवन शैली बन गई है।

व्यावसायिकता की लपेट में आकर बहुत कुछ खो गयी इनकी परम्परा, लेकिन कभी तो अचूक रहती थी इनकी शैलियां, शरीर को अस्सी वर्ष का हो जाने पर भी तीस साल का दम खम देने में समर्थ . . . राजपूत राजाओं के दरबार में मुंह - मांगी कीमत मिलती

थी इनको . . . **उनके यौवन को ढलती उम्र में भी तरोताजा बनाए रखने के लिए. . . सैकड़ों रानियों और दासियों के बीच लोकप्रिय, पौरुष से भरा बनाए रखने में समर्थ . . . केवल कामोत्तेजक औषधियां ही नहीं, इनके पास वास्तव में थे ऐसे उपाय, जो सारे शरीर बलिष्ठ और कसा बनाए रखते थे ही।**

गौरालिक की पहाड़ियां बन गयी थी ऐश और विलास का गढ़, जहां मिलती थी तब ऐसी औषधियां और उनके जानकार, दोनों ही, लेकिन साथ ही साथ योगी भी यहां प्रयास रत थे, उन्हीं रहस्यों को पाने के लिए, जिससे शरीर सदैव यौवन - वान और बलिष्ठ बना रहे। जिससे वे अपनी साधनाओं में सदैव निश्चिंतता पूर्वक लगे रहें, और गुरु शिखर के पास चुपचाप ऐसे ही रहस्यों की खोज में लगा था, योगियों का एक दल।

एक - दो नहीं, धीरे - धीरे सात वर्ष व्यतीत हो गए, समय के थपेड़ों से, उनकी काया और मन दोनों ही जर्जर हो गए, लेकिन विश्वास नहीं छूटा था कि इसी घाटी में छिपा है कायाकल्प का दुर्लभ रहस्य . . . भटकते रहे वे घाटियों में और प्रयास करते रहे आदिम जन - जातियों से मिलकर कायाकल्प के रहस्यों को प्राप्त करने का। *कितनी बार प्राण जाते - जाते बचा, कोई विषैला पौधा छू लेने से, श्रम वश कोई जड़ी खा लेने से, लेकिन जहां लगन थी, वहां तो यह सब सहर्ष झेलने का निश्चय था ही।*

केवल आबू पर्वत ही नहीं, हिमालय तक की यात्रा की उन्होंने, और वर्षों की परिश्रम के बाद ढूंढ ही निकाली वह पद्धति , जिसे **"कायेक पद्धति"** की संज्ञा दी . . . विचित्र पद्धति है यह, केवल एक ही स्थान पर नहीं सम्पन्न होती यह क्रिया। कहीं की औषधि को कहीं और ले जाने पर ही प्रभाव स्पष्ट हो पाता है उसका, और यही सबसे दुर्लभ रहस्य है इस साधना का . . . जो औषधि अपने जन्म स्थान में न प्रभावी बनी हो, फिर वह कैसे दूसरे क्षेत्र में जाकर प्रभावी होगी, इसी से लुप्त हो गई है यह विद्या, क्योंकि इसका आधार बना तिब्बत का बर्फीला प्रदेश, बौद्ध मठों की सम्पति बन गई, जो कि मूलतः भारत की ही पद्धति थी।

तिब्बती लामाओं के चिरयौवन का रहस्य, सैकड़ों वर्ष का आयु हो जाने पर भी बीस-पच्चीस के मध्य का ही दिखना . . .

. . .केवल शरीर से ही नहीं, मानसिक रूप से भी और उनके अंदर उफनता वही जोश. . .

मंत्र और औषधियों की मिली - जुली साधना में, जिसे पूर्णता देते हैं तिब्बत के रहस्यमय मठों में, वर्षों से चिर - युवा बने लामा . . . जिनकी आयु का कोई अनुमान ही नहीं लगा सकता. . .

चीड़ के मोटे तने को खोखला कर भर देते हैं उसमें जटामासी, थूहर थला, पट्टाकाशी, गेमाला के बीज और रूद्रवती की झाड़ियों से निरंतर चलाते हुए दो दिन तक पकाया जाता है यह लेप, जिसे फिर बाद में प्रयोग किया जाता है कायाकल्प के इच्छित व्यक्ति पर।

. . . फिर यहीं से आरम्भ होती है, तिब्बत के विश्व प्रसिद्ध तंत्र की रहस्यमय क्रिया, जिसका मंत्र जानना तो दूर, जिसकी ध्वनि ही वे नहीं पड़ने देते, बाहरी किसी व्यक्ति के कानों में . . . केवल अपने मठ के व्यक्तियों को छोड़। उस व्यक्ति को लिटा दिया जाता है , और सारे बदन में लेप कर देते हैं इसी घोल का, ठीक उसके बगल में उसी के आकार का एक पुतला बनाकर, तीन दिन तक निष्कम्प रख कौन सी क्रियाएं सम्पन्न की जाती है, इनका तो आज तक रहस्य नहीं खुल सका।

<u>तीन दिन बाद घटित होता है वह चमत्कार, जिसका चिकित्सा विज्ञान के पास कोई हल ही नहीं,</u> और जिस क्रिया को आधुनिक चिकित्सा विज्ञान थक गया सोच-सोच कर, अपने सारे प्रयास कर, कोशिका स्थापित करने जैसे दुरूह कार्य कर, वही क्रिया सम्पन्न हो जाती है मात्र तीन दिनों में।

सख्ती से जम गए लेप को हटाने के लिए विरोचन की छाल को उबाल कर, उस जल से धोया जाता है तथा साथ ही कुछ मांत्रिक क्रियाएं सम्पन्न की जाती है तब कहीं जाकर हटता है वह सख्त आवरण और निकलता है फिर उसके भीतर से ८० - ६० साल के वृद्ध की जगह एक बीस - बाईस वर्ष का नवयुवक, ठीक वैसी ही गुलाबी त्वचा लिए, आंखों में चमक, घने बाल और बातों में जोश लिए **. . .यही सब कुछ तो प्रत्यक्ष कर दिखाया गुरुदेव ने हम सब शिष्यों के सामने।**

केवल औषधि का ही चमत्कार नहीं , इसे मानते बौद्ध के लामा और, इस क्रिया को सम्पन्न करने से पहले पुतले को दूर किसी घाटी में ले जाकर गहरा गढढ़ा खोदकर किसी पत्थर के नीचे दबा देते हैं, क्योंकि इससे वे कायाकल्प की नहीं नव - जीवन की क्रिया मानते हैं और सचमुच यह है भी तो एक नए जीवन की ही क्रिया।

पूरे वर्ष भर का पर्व जो घटित होता है वर्ष के प्रारम्भिक दिनों में. . .

सम्पूर्ण वर्ष को संवारने के लिए जब तेज, प्रखरता के अधिपति सूर्य स्थापित होते हैं एक विशेष कोण पर, अपनी प्रखरता को पूर्ण रूप से स्पष्ट करते हुए. . .

पौराणिक आख्यान है कि 'सूर्य ' जो कि वास्तव में आदि ब्रह्मा के तेज का ही पिंड है, प्रारम्भ में इतने अधिक तेजस्वी व ज्वलनशील थे कि उनकी रश्मियों से सभी लोक व्याकुल हो गए। जल- सरोवर, नदियां, तालाब सूखने लग गए और प्रखर गर्मी से देव, यक्ष, किन्नर, गन्धर्व, मनुष्य सभी त्राहि - त्राहि कर उठे। उन्होंने आदि ब्रह्मा के पास जाकर समवेत रूप से अपनी रक्षा की प्रार्थना की। आदि ब्रह्मा अपने ही वंशज सूर्य के पास गए, उसे विविध प्रकार से सन्तुष्ट कर उससे मृदु होने को कहा। सूर्य ने उनसे प्रार्थना की कि आप मेरे पितामह तुल्य हैं अतः आप ही कोई उपाय करें, और तब ब्रह्मा जी ने एक उचित मुहूर्त पर विश्वकर्मा को बुलाकर वज्र की सान पर सूर्य को स्थापित कर, उनके तेज को काट - छांट दिया। उस कटे- छंटे तेज से ही भगवान विष्णु का सुदर्शन चक्र, अमोघ यमदण्ड, शंकर का त्रिशूल, काल का खड्ग, तथा दुर्गा की शक्तिशाली त्रिशूल का निर्मित हुआ। यह कथा स्पष्ट करती है सूर्य के प्रखर तेज को। सूर्य वास्तव में केवल एक ग्रह का ही नाम नहीं, सूर्य तो आदित्य स्वरूप में सभी देवताओं के आदि कर्ता हैं। **स्कन्द पुराण** में वर्णित है कि महर्षि व्यास ने वैशम्पायन ऋषि को स्पष्ट कहा है कि इनमें और ब्रह्म में कोई भेद ही नहीं है, क्योंकि ये दोनों ही धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष, चारों पुरुषार्थों को प्रदान करने वाले हैं।

ऐसे प्रखर देव का एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश करने का क्षण ही संक्रान्ति कहलाता है। प्रत्येक संक्रान्ति के अवसर पर भगवान सूर्य अपनी प्रखर रश्मियों के साथ दैदीप्यमान होकर सम्पूर्ण ग्रह - नक्षत्रों और चराचर ब्रह्माण्ड को आलोकित करने के साथ - साथ आलोड़ित व विलोड़ित कर देते हैं। धनु, मिथुन, मीन और कन्या की संक्रान्ति को षडशीति कहते है तथा वृष, कुम्भ, वृश्चिक और सिंह राशि पर सूर्य की संक्रान्ति विष्णुपदी है, **लेकिन मकर संक्रान्ति का जो पर्व है इन वह सभी वर्गों से अलग है, क्योंकि यही है वह दिवस जिस दिन भगवान सूर्य की प्रखरता दायक रश्मियों में विश्वकर्मा द्वारा सन्तुलन स्थापित किया गया और इसी कारणवश इस दिवस को ' सूर्य' एक ऐसे विशेष कोण पर स्थित होता है, जबकि उसकी सम्पूर्ण प्रखरता इस पृथ्वी पर व्याप्त हो जाती है।** सूर्य ही आधार है किसी भी संरक्षण का, और इसी कारणवश इस दिवस को की गई प्रत्येक साधना फलप्रद होती ही है। लोक परम्परा में इस दिवस पर पुण्य प्रदायक नदियों में स्नान करने की प्राचीन परम्परा रही है, और उसके पीछे भी यही रहस्य छुपा है। साधक इसी अवसर का उपयोग करता

है, अपने मन में पूरे वर्ष भर से संजोकर रखी हुई किसी एक विशेष साधना को सम्पन्न करने में, क्योंकि साधक के उत्सवमय होने का ढंग ही निराला होता है, वह आम व्यक्तियों की तरह खाने - पीने और शोरगुल मचाने को ही उत्सव नहीं मानता, वरन् अपने जीवन में साधना की उस चैतन्यता को स्थान देता है जो उसका पूरा - पूरा वर्ष और सम्पूर्ण जीवन संवार दे।

भगवान राशिपति. . . ब्रह्मतेज के साकार पिण्ड, देववर्ग के मूल, जो पौष माह में आलोकित रहते हैं श्री विष्णु स्वरूप में . . .पुष्टिदायक एवं समशीतोष्ण।

मकर संक्रान्ति का पर्व लोक मान्यता के अनुसार सूर्य उपासना में नियत है, लेकिन यह एक अधूरा तथ्य है। वास्तव में तो सूर्य की साधना करने के साथ - साथ यह दिवस किसी भी साधना को सम्पन्न करने के लिये उपयुक्त है। इस वर्ष जिस साधना का संयोग मकर संक्रान्ति के साथ विशेष रूप से हो रहा है, वह है **'अष्ट लक्ष्मी साधना'**। यह एक सौभाग्यदायक पर्व बन गया है क्योंकि लक्ष्मी साधना का संयुक्तिकरण हो गया है सूर्य की तेजस्विता के साथ। इस वर्ष मकर संक्रान्ति **१४-१-९४ (पौष शुक्ल पक्ष तृतीया)** शुक्रवार को पड़ रही है। भगवान सूर्य सम्पूर्ण पौष मास में विष्णु के रूप में गतिशील रहते हैं, भगवान सूर्य के विष्णु -- स्वरूप का लक्ष्मी साधना से सहज ही सुखद संयोग बनता है अतः साधक को चाहिए कि वह इस मास का विशेष उपयोग करे।

मकर संक्रान्ति के दिन प्रातः सूर्योदय के बहुत पहले ही उठ जाए और स्नान आदि से शुद्ध होकर साधना में प्रवृत्त हों, क्योंकि संक्रान्ति की सूर्योदय ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण है तथा अक्षय क्षण है, अर्थात् इन क्षणों में किया गया कोई भी पूजन, साधना अक्षय होती है। श्वेत वस्त्र धारण कर पूर्वाभिमुख हो कर बैठें तथा एक पात्र में लाल कनेर के फूल, लाल चन्दन, तिल, अक्षत, कुश एवं एक गोल सुपारी अर्घ्य के रूप में दिवाकर भगवान को अर्पित करें तथा निम्न स्त्रोत का पाठ करें-

ॐ नमः सहस्रबाह्वे आदित्याय नमो नमः।
नमस्ते पद्महस्ताय वरुणाय नमो नमः।।
नमस्तिमिरनाशाय श्री सूर्याय नमो नमः।
नमः सहस्रजिह्वाय मानवे नमो नमः।।
त्वंच ब्रह्मा त्वंच विष्णु रुद्रस्त्वं च नमो नमः।
त्वमग्निस्सर्वभूतेषु वायुस्त्वं च नमो नमः।।
सर्वगः सर्वभूतेषु न हि किंचित्वया बिना।
चराचरे जगत्यस्मिन् सर्वदेहे व्यवस्थिनः।।

उपरोक्त पूजन मूलरूप से आज की साधना का ही अंग है, जिससे भगवान सूर्य की तेजोमय रश्मियां हमारे शरीर में समाहित हों और हमें किसी भी साधना में सफलता प्रदान करने का आधार बने। इसके पश्चात् साधक उसी आसन पर बैठे - बैठे इस दिवस की महत्वपूर्ण साधना **'अष्ट लक्ष्मी साधना'** में प्रवृत्ति हो। इसके लिये आवश्यक है कि पूजन की सभी सामग्री पहले से ही आपके पास एकत्रित हो, उपरोक्त सूर्य पूजन के पश्चात आसन न छोड़ें, आवश्यक सामग्रियों में **अष्ट लक्ष्मी यंत्र, आठ लक्ष्मी प्रकाम्य, कमलगट्टे की माला,** केसर, चन्दन, सुगन्धित द्रव्य, दूध का बना नैवेद्य एवं सुगन्धित अगरबत्ती तथा यदि संभव हो तो कमल के पुष्प (अन्यथा कोई भी सुगन्धित पुष्प) आपके पास पहले से ही उपलब्ध हों। तांबे के पात्र में अष्ट लक्ष्मी यंत्र को स्थापित करें और लक्ष्मी के आठ विशेष स्वरूपों -- **१. द्विभुजा लक्ष्मी २. गज लक्ष्मी ३. महा लक्ष्मी ४. श्री लक्ष्मी ५. वीर लक्ष्मी ६. द्विभुजावीर लक्ष्मी ७. अष्टभुजा वीर लक्ष्मी तथा ८ प्रसन्न लक्ष्मी** का ध्यान करें। इनमें से लक्ष्मी का प्रत्येक स्वरूप अपने - आप में सम्पूर्ण है। इनका पृथक - पृथक ध्यान और साधना विधि वर्णित है, लेकिन मकर संक्रान्ति के अवसर पर किया जाने वाला यह प्रयोग तो इनकी संयुक्त साधना का पर्व है। केवल एक ही मंत्र के जप द्वारा इन सभी का संयुक्त प्रभाव व्यक्ति के जीवन में उतर आता है, और वास्तव में **केवल लक्ष्मी पूजन अथवा लक्ष्मी साधना करने की अपेक्षा अष्ट लक्ष्मी साधना सम्पन्न करना, अष्ट लक्ष्मी यंत्र को अपने पूजा स्थान या व्यापार स्थल पर स्थापित करना ही लक्ष्मी की सही आराधना है, ऐसा करने से जीवन में धन लक्ष्मी, धान्य लक्ष्मी, गृह लक्ष्मी, पुत्र लक्ष्मी, आयु लक्ष्मी, श्री लक्ष्मी, भू लक्ष्मी एवं वाहन लक्ष्मी आठ प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं,** और इनके साथ ही प्राप्त हो सकती है एक ऐसी तेजस्विता जिससे हम सभी प्रकार के सुखों का उपभोग कर सकें। यह प्रभाव प्राप्त होता है सूर्य साधना को प्रारम्भ में सम्पन्न करने से।

लक्ष्मी के प्रत्येक नाम का उच्चारण करते हुए यंत्र के सामने एक - एक लक्ष्मी प्रकाम्य क्रम से स्थापित करें तथा प्रत्येक पर **ॐ महालक्ष्म्यै नमः** मंत्र का उच्चारण करते हुए केसर की

(शेष भाग पृष्ठ ७४ पर)

असाध्य रोग प्रामाणिक उपचार

ये अत्यन्त महत्वपूर्ण और प्रामाणिक उपचार हैं, यदि सम्बन्धित बीमारियों में इनका सेवन किया जाए तो निश्चय ही ये पूर्ण लाभदायक हैं और समय भले ही थोड़ा ज्यादा लगे परन्तु रोगों को जड़ - मूल से नष्ट करने में समर्थ हैं। कुछ असाध्य रोग और उससे सम्बन्धित उपचार --

पत्रिका में पहली बार विधिवत दे रहे हैं जो प्रामाणिक हैं, आजमाए हुए हैं, लाभप्रद हैं।

कई साधु - संतों और सन्यासियों, योगियों से प्राप्त नुस्खों के आधार पर दुर्लभ जड़ी बूटियों से ये औषधियां तैयार की गई हैं, जिनके सेवन से निश्चय ही रोगों में सुधार होता है, परन्तु आयु, स्वास्थ्य, कमजोरी व अन्य बीमारियों से ग्रसित होने, अविश्वास व अन्य कई कारणों से रोगियों को चाहिए कि वे अपने विवेक अथवा निजी चिकित्सक से राय लेकर ही इन औषधियों का सेवन करें --

१. स्मरण शक्ति वर्धक --

कई कारणों से बालकों की याददाश्त कमजोर हो जाती है और परीक्षा में पूर्ण सफलता प्राप्त कर नहीं पाते या उमर बीतने पर याददाश्त कमजोर होने लगती है। इसलिए आठ जड़ी बूटियों से निर्मित यह औषधि अपने आप में प्रामाणिक है और निश्चय ही स्मरण शक्ति बढ़ाती है जीवन में सफलता प्राप्त करने में भी यह औषधि विशेष रूप से उपयोगी है।

२. आधा शीशी (आधे सिर का दर्द) --

यह अपने आप में तकलीफ दायक बीमारी है। हर समय आधे सिर में दर्द बना ही रहता है, जिसकी वजह से व्यक्ति अशांत रहता है, बराबर तकलीफ बनी रहती है और सिर में अत्यधिक पीड़ा बनी रहती है।

जड़ी-बूटियों से निर्मित यह औषधि अपने आप में प्रामाणिक है और आजमायी हुई है। इसके सेवन से निश्चय ही आधे सिर का दर्द या जिसको आधाशीशी कहते हैं, वह समाप्त हो जाता है और व्यक्ति राहत महसूस करता है।

३. बाल काले व लम्बे करना --

कई कारणों से या बीमारी की वजह से या बचपन में बीमारी होने की वजह से बाल झड़ने लग जाते हैं, बाल फटने लग जाते हैं ऐसी स्थिति में स्त्री का सौन्दर्य तो बिल्कुल समाप्त हो जाता है।

इसके लिए जड़ी - बूटियों से निर्मित यह महत्वपूर्ण तेल है जिसका कुछ समय तक नियमित सेवन करने से बाल झड़ने बंद हो जाते हैं, वे लम्बे व काले हो जाते हैं और उनका गया हुआ सौन्दर्य वापिस लौट आता है।

वास्तव में यह तेल कई लोगों ने आजमाया है और अपने आप में प्रामाणिक और महत्वपूर्ण है।

४. कान दर्द --

कान की झिर्री या कान में किसी वजह से तकलीफ होने की वजह से कान में बराबर दर्द बना रहता है व पानी आता रहता है या कम सुनाई देता है या मवाद निकलता रहता है, ऐसी स्थिति में आदमी को बात करने में बड़ी तकलीफ उठानी पड़ती है वह समाज में उपहास का पात्र बन जाता है।

इसके लिए इस महत्वपूर्ण औषधि का निर्माण किया गया है और कुछ दिनों तक इसकी बूंदें कान में बराबर डालते रहने से कान - दर्द समाप्त हो जाता है और वह भली प्रकार से सुनने लग जाता है।

५. मुहांसे --

गर्मी की अधिकता या अन्य कई कारणों से घटिया सौन्दर्य प्रसाधन सामग्रियों के उपयोग से भी चेहरे पर

मुहांसे उभर आते हैं और चेहरा बदरंग और कुरूप हो जाता है जो स्त्रियों के लिए या बालिकाओं के लिए अभिशाप की तरह है।

इसके लिए १४ जड़ी - बूटियों के अर्क से लेप का निर्माण किया गया है और कुछ दिन तक इस लेप को चेहरे पर लगाने से जिससे मुहांसे समाप्त हो जाते हैं और चेहरा सुन्दर गुलाब की तरह और सम्मोहक बन जाता है।

६. टांसिल --

यह भी एक खतरनाक रोग है और समय पर इसका उपचार नहीं किया जाता है तो आवाज भारी हो जाती है, बोलने में कठिनाई होती है, गले में सूजन आ जाती है और इसकी वजह से कई तकलीफें होती हैं।

इसके लिए इस औषधि का निर्माण किया गया है इस औषधि का नियमित सेवन होने से टांसिल समाप्त हो जाते हैं और आने वाले समय में इससे होने वाली तकलीफें नहीं होती।

वास्तव में ही यह एक महत्वपूर्ण औषधि है।

७. कफ विकार --

कुछ लोगों को बराबर कफ आता रहता है, बोलने में तकलीफ होती है या भाषण देते समय गले में कफ अटक जाता है तो वह प्रवाह नहीं रहता जो होना चाहिए, फेफड़ों में बलगम जमा हो जाता है।

इसके लिए कुछ महत्वपूर्ण औषधियों को मिलाकर यह पीने योग्य दवा बनाई है, जिसके नित्य सेवन से पुराने से पुराना कफ समाप्त हो जाता है, छाती की जकड़न दूर हो जाती है व रोगी सही प्रकार से श्वांस लेने लगता है और बार - बार खांसना, कफ आना या थूकना आदि रोग समाप्त हो जाते हैं।

८. रक्तचाप --

यह सबसे खतरनाक बीमारी है चाहे हाई ब्लड प्रेशर हो या लो ब्लड प्रेशर और यह ऐसी बीमारी है जिसका पता ही नहीं चलता परन्तु इससे शरीर को बहुत अधिक नुक्सान हो जाता है और कई प्रकार के रोग हो जाते हैं।

इसकी कोई प्रामाणिक औषधि है ही नहीं अथवा कुछ समय तक तो उसका प्रभाव रहता है बाद में पुनः ब्लड प्रेशर प्रारम्भ हो जाता है।

आयुर्वेद में इसकी प्रामाणिक औषधि है और यदि इसको नियमित रूप से कुछ समय तक लिया जाय तो रक्तचाप नियन्त्रित रहता है तथा इससे होने वाली बीमारियां और तकलीफें नहीं हो पाती तथा आदमी स्वस्थ एवं तरोताजा महसूस करने लग जाता है।

९. वायु गैस (गैस ट्रबल) --

अपच, अजीर्ण, अनियमित खान - पान की वजह से गैस्टिक ट्रबल हो जाती है, पेट फूला - फूला रहता है, हरदम बेचैनी और तकलीफ बनी रहती है, जी नहीं लगता, जी मिचलाता रहता है, उदासी और थकावट सी अनुभव होने लगती है।

इसके लिए कुछ आयुर्वेदिक औषधियों को मिलाकर चूर्ण बनाया गया है। नित्य इसका सेवन करने से कुछ समय में ही यह गैस्टिक ट्रबल समाप्त हो जाती है और भविष्य में इसकी तकलीफ नहीं उठानी पड़ती।

वास्तव में यह एक प्रामाणिक और महत्वपूर्ण औषधि है।

१०. कब्ज --

यदि कुछ कारणों से शरीर में कब्ज रहता है तो नाड़ियों में मल फंसा रहने की वजह से वह सड़ने लगता है और दुर्गन्ध व्याप्त होती है, मन में अजीब सी मिचलाहट और दिन भर थकावट, चिड़चिड़ापन, बेचैनी और परेशानी बनी रहती है।

यह अपने आप में एक आश्चर्यजनक औषधि है इसके सेवन से पुराने से पुराना कब्ज समाप्त हो जाता है। नाड़ियों का शुद्धिकरण हो जाता है और नियमित प्रातःकाल शौचादि कार्यों से पूर्णतः निवृत्त होने की वजह से आदमी दिन भर तरोताजा व स्वस्थ बना रहता है तथा उसकी कार्य क्षमता बढ़ जाती है।

११. डायबटीज --

यह शर्करा की बीमारी अधिकतर लोगों को होती है इसका कोई प्रामाणिक उपचार दिखाई नहीं देता।

परन्तु आयुर्वेद में इसका महत्वपूर्ण और प्रामाणिक उपचार है जो कि १२ जड़ी-बूटियों से निर्मित एक चूर्ण है। यदि यह प्रातः काल एवं सायंकाल लिया जाय तो कुछ ही दिनों में डायबिटिज नियंत्रित हो जाती है और भविष्य में समाप्त भी हो जाती है। यह अपने आप में एक महत्वपूर्ण और चमत्कारी और महत्वपूर्ण औषधि है, जो कि मानव के लिए वरदान स्वरूप है।

१२. गठिया --

इसकी वजह से हाथों व पैरों के जोड़ों में जकड़न

प्रारम्भ हो जाती है। उठने बैठने में तकलीफ होने लगती है। रात को सोते समय बड़ा दर्द होता है और यह तो वास्तव में उसी को पता है जिसको गठिया होता है, वह कितना अधिक दुख और परेशानी भोगता है। आयुर्वेद में इसका एक महत्वपूर्ण फार्मूला है जो लगभग २० जड़ी बूटियों से तैयार किया गया है, और इसके सेवन से कुछ समय के बाद गठिया समाप्त हो जाता है और उसे भविष्य में इससे सम्बन्धित तकलीफ नहीं के बराबर रहती है।

१३. मोटापा घटना --

जो मोटे व थुलथुले भारी शरीर के होते हैं उनका जीवन अपने आप में दुखदायक हो जाता है। बालिकाओं के लिए और स्त्रियों के लिए तो यह अभिशाप की तरह है। शरीर में चर्बी बढ़ जाना, कमर का फैल जाना, मांस का बढ़ जाना, चेहरे पर मांस जमा हो जाना जिससे कि चेहरा भारी - भारी सा लगने लगे, हाथ - पैर मोटे होना आदि कुरूपता के लक्षण हैं।

भूखे रहना या डायटिंग करना इसका उपचार नहीं है। आयुर्वेद में इसका प्रामाणिक उपचार है और कुछ विशेष जड़ी बूटियों से इसका निर्माण किया गया है, इसके नियमित सेवन से कुछ समय बाद मोटापा कम होने लगता है व शरीर चुस्त, तन्दुरस्त, स्वस्थ और छरहरा बन जाता है। वास्तव में यह मानव जाति को आयुर्वेद की तरफ से एक उपहार है।

१४. एग्जिमा --

यह शरीर के कई स्थानों पर हो जाता है, बराबर खुजलाहट बनी रहती है। आयुर्वेद में इसकी प्रामाणिक औषधि है और दुर्लभ जड़ी - बूटियों से इस लेप को तैयार किया गया है, यदि इसको जहां एग्जिमा हो कुछ समय तक लगाया जाय तो एग्जिमा जड़ - मूल से समाप्त हो जाता है। यह अपने आप में एक महत्वपूर्ण औषधि है।

१५. तुतलाहट –

कई बालक या युवा सही ढंग से बोल नहीं पाते या बोलने के लिए जोर लगाना पड़ता है अथवा तुतलाहट बनी रहती है और उसको समाज में साथियों के बीच बड़ी शर्मिन्दगी उठानी पड़ती है।

इसके लिए आयुर्वेद में प्रामाणिक उपचार है इसका सेवन करने से तुतलाहट जुबान या आवाज से संबंधित रोग समाप्त हो जाते हैं और व्यक्ति सही प्रकार से बोलने लग जाता है। बालकों के लिए इस औषधि का सेवन अत्यन्त आवश्यक है।

१६. पथरी नष्ट करना --

कुछ विशेष कारणों से शरीर में पथरी बनने लगती है और यह आगे चलकर पेशाब में जलन, रुक-रुक कर के पेशाब आना, दर्द होते रहना आदि समस्याएं बन जाती हैं।

इसका उपाय केवल आपरेशन ही है जो कि श्रमसाध्य एवं व्यय साध्य है तथा इस पर व्यय भी ज्यादा आता है।

आयुर्वेद में इसकी प्रामाणिक औषधि है, जो लगभग २१ जड़ी बूटियों से निर्मित की जाती है।

इसके सेवन से अंदर ही अंदर पथरी गलने लगती है और उसका चूर्ण पेशाब के रास्ते से बाहर निकल आता है और रोगी अपने आप में आराम महसूस करने लगता है।

यदि कुछ समय तक इसका सेवन किया जाए तो शरीर के अंदर पथरी बनने की क्रिया समाप्त हो जाती है।

१७. चेहरे व त्वचा की झुर्रियां मिटानाः

यौवन काल में ही यदि चेहरे या त्वचा पर झुर्रियां बनी रहती हैं तो ऐसा लगता है कि स्वयं बुढ़ापा आ गया हो। वह व्यक्ति स्वयं अपने आप में हीन भावना महसूस करने लगता है। इसकी वजह से आंखों के नीचे कालापन, चमड़ी सिकुड़ जाना, चमड़ी लटक जाना, आदि क्रियाएं होने लगती है, और झुर्रियों से व्यक्ति असमय में ही बुढ़ापा अनुभव करने लगता है, स्त्रियों के लिए तो यह अभिशाप की तरह है।

आयुर्वेद में इससे सम्बन्धित महत्वपूर्ण जड़ी-बूटियां हैं। जिनके माध्यम से इस औषधि का निर्माण किया गया है। इस लेप को नियमित रूप से चेहरे व त्वचा पर लगाए रहने से झुर्रियां मिट जाती हैं, चमड़ी कस जाती है और पुनः गया हुआ यौवन लौट आता है।

वास्तव में इस रोग का यह एक महत्वपूर्ण उपचार है।

१८. श्वांस (दमा) --

दमे का रोगी अपने आप में ही असहाय और दुखी महसूस करने लगता है। खांसते रहने से उसके फेफड़े कमजोर रहने लगते हैं और वह अत्यरधिक दुःखी, परेशान और चिन्तित बना रहता है। जिसको दमा होता है वही इसके दुःख और दर्द को अनुभव करता है, वास्तव में यह एक खतरनाक बीमारी है।

आयुर्वेद में इस श्वांस रोग (दमा) के लिए महत्वपूर्ण उपचार है और कई जड़ी-बूटियों को मिलाकर इस औषधि का निर्माण किया गया है, यदि व्यक्ति नियमित रूप से इसका सेवन करे तो कुछ समय में ही यह श्वांस रोग (दमा) समाप्त हो जाता है और व्यक्ति राहत अनुभव करने लगता है।

वास्तव में ही यह एक महत्वपूर्ण उपचार है।

१९. दांत दर्द --

यदि बराबर दांतों में दर्द रहता हो, या दांत हिलते हों, दांतों की जड़ें कमजोर हो गई हों या पायरिया हो गया हो जिसकी

वजह से मुंह से बदबू आती हो तो उसके लिए यह महत्वपूर्ण लेप है। यह एक दंत मंजन है जिसका नियमित रूप से उपयोग करने से दांत का दर्द हमेशा के लिए समाप्त हो जाता है और पायरिया समाप्त हो जाता है।

व्यक्ति इससे स्वस्थ, तरोताजा अनुभव करने लगता है तथा उसके मुंह की दुर्गन्ध समाप्त हो जाती है।

२०. साइटिका --

सबसे खतरनाक दुखदायी बीमारियों में यह साइटिका है, जिससे नसें खिंच जाती हैं और व्यक्ति अत्याधिक बैचेनी और तकलीफ महसूस करने लगता है।

इसके लिए आयुर्वेद में एक श्रेष्ठतम औषधि है और यदि इन १४ जड़ी-बूटियों से निर्मित औषधि का नियमित सेवन किया जाए तो निश्चय ही साइटिका में राहत अनुभव होती है और वह व्यक्ति पूर्णतः स्वस्थ अनुभव करने लगता है।

इस औषधि के सेवन से साइटिका जैसा रोग निश्चित ही समाप्त हो जाता है।

२१. सफेद दाग --

कभी - कभी कई कारणों से पूरे शरीर पर सफेद चकत्ते या दांग बन जाते हैं जिससे कोई बालक या बालिका, पुरुष या स्त्री अपने आप में हीन भावना से ग्रस्त हो जाते हैं।

बाजार में इससे संबंधित कई प्रकार की औषधियां देखने में आई हैं परंतु मैं कुछ नहीं कह सकता कि उनसे ये सफेद चकत्ते मिटते ही हों।

आयुर्वेद में इसका प्रामाणिक उपचार है और यदि कुछ समय तक इस औषधि का सेवन करें और सफेद दागों पर लेप लगाएं तो सफेद दाग मिट जाते हैं और त्वचा का रंग वैसा ही हो जाता है, जैसा उसके शरीर पर त्वचा का रंग है।

वास्तव में यह अपने आप में महत्वपूर्ण और दुर्लभ औषधि है।

२२. शीघ्र पतन --

कुसंग, कुटेव, गलत खान - पान या अन्य कई कारणों से पुरुषों को शीघ्र पतन की बीमारी हो जाती है और वह सही प्रकार से पत्नी के साथ सहवास नहीं कर पाता और एक प्रकार से देखा जाय तो उसमें हीन भावना आ जाती है और वह हर समय बुझा- बुझा सा रहता है।

आयुर्वेद में इसका पूर्ण प्रामाणिक उपचार है। लगभग २४ जड़ी-बूटियों से निर्मित इस औषधि के सेवन से शीघ्र पतन जैसी बीमारी दूर हो जाती है और व्यक्ति अपने आप में पूर्ण पौरुषता अनुभव करने लगता है।

वास्तव में यह अपने आप में दुर्लभ और महत्वपूर्ण आयुर्वेदिक औषधि है जो पुरुषों के लिए वरदान है।

२३. श्वेतप्रदर --

सफेद पानी या श्वेत प्रदर की बीमारी स्त्रियों में आम देखी गई है , इसकी वजह से हर समय शरीर क्षीण होता रहता है, और उसमें दुबलापन आ जाता है। कमजोरी अनुभव होने लगती है, आंखों के नीचे गड्ढे बन जाते है व सारा शरीर घुल जाता है।

आयुर्वेद में इसका प्रामाणिक उपचार है और अनेक दिव्य और दुर्लभ औषधियों से निर्मित यह महत्वपूर्ण औषधि स्त्रियों के लिए तो वरदान स्वरूप है। इससे सफेद पानी या सफेद प्रदर की बीमारी समाप्त हो जाती है और वह बालिका या नारी अपने आप को पूर्ण स्वस्थ अनुभव करने लगती है।

२४. कायाकल्प --

बुढ़ापा अपने आम में ही एक रोग है। कई कारणों से कमजोरी, थकावट, बैचेनी या असमय में ही वृद्ध होने की क्रिया आदि पुरुषों में आम लक्षण पाए जाने लगे है।

इसके लिए पचास से भी ज्यादा आयुर्वेद जड़ी-बूटियों को मिलाकर इस औषधि का निर्माण किया गया है और यह समस्त शरीर के रोगों को दूर करने में एवं पुनः स्वस्थता एवं यौवन देने में समर्थ है। मैं यह तो दावा नहीं करता कि इससे पूर्ण शरीर का परिवर्तन ही हो जाता है परंतु इससे यौवन का पुनरागमन होने लगता है और व्यक्ति का चेहरा खिलना, पौरुषता प्राप्त होना, और वह पहले की अपेक्षा अत्यधिक सुंदर एवं आकर्षक दिखाई देने लगता है।

वास्तव में यह आपके और मानव जाति के अनुकूल औषधियां है यदि पत्रिका पाठक इससे लाभ उठा सकेंगे तो उनके लिए और मानव जाति के अनुकूल रहेगा। इन दवाओं का कोई साइट इफेक्ट नहीं है। यह साधु, संन्यासियों के अनुभवों पर आधारित औषधियां है और उनका प्रयोग परीक्षण किया गया है, उनसे ही प्राप्त इन औषधियों को हमने यहां प्रकाशित किया है।

फिर भी पाठकों को चाहिए कि वे अपने विवेक अपने ज्ञान के आधार पर ही इन औषधियों का सेवन करें और पत्रिका के प्रथम पृष्ठ पर प्रकाशित नियमों के अंतर्गत ही इन औषधियों को प्राप्त करें।

(पौष शुक्ल चतुर्थी - १-१-१९९४)
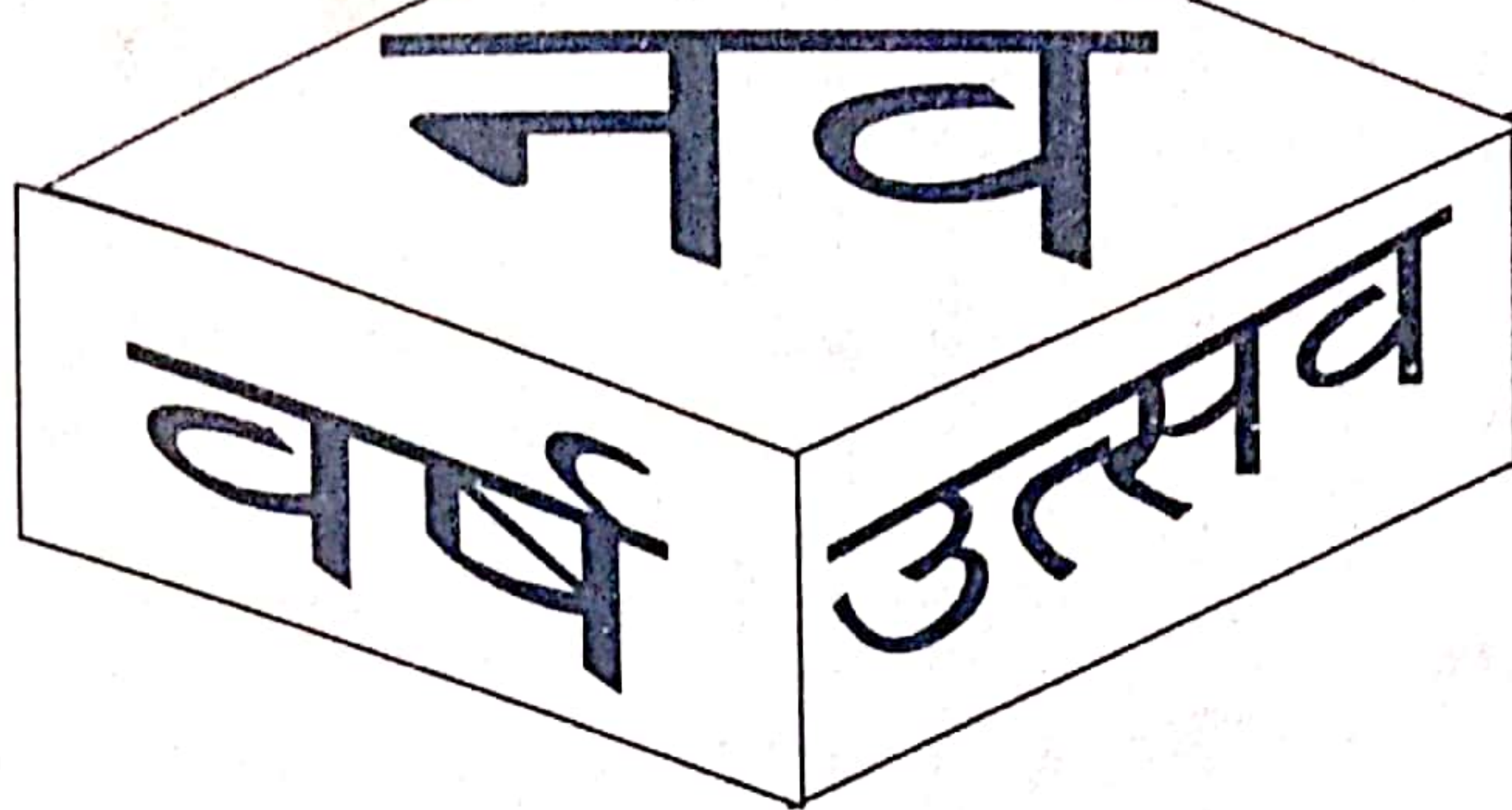
साधना पर्व

नव वर्ष का उल्लास ही भारतीय साधना ग्रंथों में एक पर्व के रूप में वर्णित है। जिस दिवस को सामान्य लोग क्लब और पार्टियों में बिताते हैं, उसे हमारे पूर्वज और ऋषि- मुनि अपने आसन पर बैठ, साधना सम्पन्न कर मनाते थे, और बदले में प्राप्त कर लेते थे पूरे वर्ष भर के लिए ऊर्जा का ऐसा संग्रह, जो बन जाए आधार, उनके भौतिक और आध्यात्मिक जीवन की सफलता का।

पूरे वर्ष भर का तेज, बल और आनन्द . . .

ईस्वी सन तो अभी केवल लगभग २००० वर्ष ही पुराना है, जबकि भारतीय साधनायें और पद्धतियां तो इतनी अधिक प्राचीन हैं, जिनकी कोई गणना ही संभव नहीं। काल के अविच्छिन्न प्रभाव में बहती ज्ञान की गंगा . . . जिसके किनारे यत्र- तत्र विश्राम स्थल बने हैं -- साधना रूपी पर्व और अवसर के, जिनमें रुक कर, व्यक्ति प्राप्त कर ले अपने जीवन के लिए शीतलता और संतोष के जल का पान।

ईस्वी सन् के आरम्भ होने का समय भारतीय वर्ष पद्धति से पौष माह में घटित होता है . . . सम्पूर्ण रूप से एक अदभुत दिव्य व चैतन्य माह, जिसका प्राचीन भारतीय ऋषि - मुनि सदुपयोग करते थे कुण्डलिनी जागरण और योग की उच्च कोटि की साधनाएं करने के लिए। जीवन को ऊंचाई व ज्ञान की श्रेष्ठता तक ले जाने के लिए, अपने स्व को विकसित करने के लिए तथा देवी- देवताओं को अपने जीवन में स्थान देने के लिए। यह तो **एक मिथ्या धारणा हमारे मन मस्तिष्क में बन गई है कि वे समाज से कट कर रहने वाले ऐकान्तिक व्यक्ति व सदैव तपस्या में ही लीन रहने वाले थे। सत्यता यह है कि उनका गृहस्थ जीवन, उनका सामाजिक जीवन आज की अपेक्षा हम से कहीं अधिक श्रेष्ठ, कहीं अधिक परिपूर्ण और कहीं अधिक सन्तुष्ट था, जिसकी पुष्टि होती है वेद एवं अन्य प्राचीन ग्रन्थों से।**

इसके मूल में रहस्य छिपा था, उनके द्वारा प्रत्येक अवसर की महत्ता को

समझते हुए उस अनुरूप साधना को सम्पन्न करने में, और केवल इतना ही नहीं उन्होंने सदैव चिंतनयुक्त रहकर जीवन के एक - एक क्षण की महत्ता को समझते हुए प्रत्येक माह का विवेचन कर, उसके अनुरूप और अनुकूल साधना पद्धति या तो ढूंढ निकाली या उसे रच दिया।

यह पौष माह भी उनके इन्हीं प्रयासों का एक अंग है। जब उन्होंने अनुभव किया कि यह माह तो सम्पूर्ण रूप से देवत्वमय है, ऋषि मय है,और **यदि इस माह में अपने कुल के आदि पुरुषों, उन विशिष्ट ऋषियों की साधना की जाए जिनका नाम हम गोत्र का उच्चारण करते समय लेते हैं तो फिर जीवन में अनोखी चैतन्यता और तेजस्विता आती ही है।** उनके मन में नव वर्ष मनाने जैसी कोई धारणा नहीं थी, लेकिन इस बात का उन्हें पर्याप्त बोध हो गया था कि शीत ऋतु के पश्चात् और भारतीय परम्परा के अनुसार वर्षारम्भ के मध्य का यह काल एक ऐसा चैतन्य और ऊर्जामय अवसर है, जबकि चैत्र नवरात्रि में की जाने वाली शक्ति साधनाओं के लिए आवश्यक ऊर्जा संग्रहित की जा सकती है। वास्तव में वे नवरात्रि के पूर्व, इस काल का उपयोग अपने को पवित्र व उदात्त बनाने में करते थे। देव तर्पण, पितृ तर्पण और ऋषि तर्पण तो हमारी प्राचीन शैली का एक अभिन्न अंग रहा है। दैनिक जीवन का प्रारम्भ ही इस प्रकार से होता रहा है , और इसमें कोई नूतन बात नहीं, किंतु पौष माह में वे जिस प्रकार से विशेष रूप से ऋषि पूजन करते थे, वह अवश्य ही साधना जगत का दुर्लभ और गोपनीय रहस्य है। केवल सप्त ऋषियों - सनक, सनन्दन, सनातन, कपिल, आसुरी, वोढु और पंच सिख का ही आह्वान और पूजन नहीं, वरन पुलह, पुलस्त्य, वशिष्ठ, मरीचि, नारद, भृगु, अंगिरा, एवं इसी कोटि के अन्य उच्च आत्माओं का पूजन भी इसी विशेष माह में करने का विधान रखा गया है।

इस वर्ष का प्रारम्भ अर्थात् ईस्वी सन् १९९४ का प्रारम्भ हिन्दी तिथि के अनुसार पौष शुक्ल की चतुर्थी से हो रहा है, जो भगवान श्री गणपति का प्रकट दिवस है, इस दुर्लभ संयोग द्वारा इस **सप्तऋषि साधना** का महत्व सहस्र गुणित हो गया है। यह भी सत्य है कि यदि इस प्रकार से आप जीवन का प्रारम्भ करें, विघ्नहर्ता भगवान गणपति एवं ऋषियों के दुर्लभ तेज को अपने जीवन में स्थान देंगे, उनके प्रति भावना युक्त चितनयुक्त व सम्मानयुक्त होंगे, तो स्वतः ही आपके जीवन में अनुकूलताओं के साथ - साथ तेज और बल का आगमन होगा ही। जहां ऋषियों का तेज, जहां उनके आशीर्वाद के रूप में उनकी तपः रश्मियां प्रवहित हैं। उनकी अप्रकट उपस्थिति में वहां समस्त देवी और देवता उपस्थित होने के लिए बाध्य हैं ही, ऐसे दिव्य ऋषियों और तपः पूतों के द्वारा उनके रोम - रोम से स्वतः उच्चरित होती मंत्र ध्वनि, देवताओं को भी बाध्य कर देती है उनके पीछे आकर्षित होकर बद्ध होने के लिए, ज्यों कस्तूरी मृग की सुगन्ध। **ऋषियों और तपः पूतों की सूक्ष्म उपस्थिति ही मंत्रों के मौन संगीत का गुंजरण, तंत्र का प्रकटीकरण और साक्षात यंत्र का स्थापन है, और यही सही अर्थों में नव वर्ष की भावना है,** नववर्ष का स्वागत है, जीवन को सजानेव संवारने की प्रक्रिया है। एक रात्रि का उत्सव, क्लब अथवा शराब की पार्टियों में बिताया गया समय, किसी भी प्रकार से नव वर्ष का उत्सव नहीं दे सकता। विचित्र होता है यह प्रचलित नव वर्ष का स्वागत, जो अर्द्ध रात्रि की घोर कालिमा मेंऔर भी अधिक कलंकित ढंग से मनाकर किया जाता है और इसके विपरीत भारतीय शैली अपने प्रत्येक दिन के आरम्भ को भगवान सूर्य की रश्मियों के स्पर्श के माध्यम से नववर्षोत्सव के समान ही मानती है। **इसी से भारतीय चिंतन में नव वर्ष जैसा कोई विशेष दिन निर्धारित किया ही नहीं गया, क्योंकि हमारा तो प्रत्येक दिवस उत्सवमय है, प्रत्येक दिवस आशा से परिपूर्ण है, प्रत्येक सायं काल "संध्या" के माध्यम से ईश्वर को धन्यवाद ज्ञापित करने के लिए ढली हुई है,** उसमें तो नित्य आनन्द है, नित्य उत्सव है, नित्य छलछलाहट है। फिर हम किसी एक विशेष दिन का अवलम्बन क्यों लें , क्यों हम उन्माद में भरकर विचित्र ढंग से आचरण करें?

इस एक दिवस की साधना को पाठक स्वयं सम्पन्न कर अनुभव कर सकता है कि आम घिसे - पिटे ढंग से पार्टियों और क्लबों में समय व्यतीत करने की अपेक्षा यदि साधनात्मक ढंग से यह पर्व मनाया जाए तो केवल उस दिवस विशेष पर ही नहीं, वरन सम्पूर्ण वर्ष भर

> **नव वर्ष का अर्थ है अपनी जीवन शैली में नवीनता, नया उत्साह, बल और नयी योजनाएं. . .**
>
> **जो संभव हो सकती है इस प्रकार . . . अपने पूर्वजों, ऋषियों के वरदायक प्रभाव से. . .**

जीवन में इतना अधिक उल्लास और ऐसी ताजगी आ जाती है, जिसका कि पहले अनुभव ही न किया हो। **भोग केवल रोग को जन्म देता है, जबकि साधना देती है शरीर और मन का पुष्टि। पौष माह की यह साधना ऐसी ही पुष्टिदायक साधना है।**

दिनांक १-१-९४ को प्रातः सूर्योदय से काफी पूर्व उठकर ही तैयार हो जांए और स्नान आदि करके शुद्ध श्वेत वस्त्र धारण कर ,पूर्वाभिमुख होकर बैठें, यदि वस्त्र आसन सब नये हों तो अधिक उचित माना गया है। मन को विचारों से शून्य बनाए तथा आत्मिक शुद्धि के लिए तीन बार ओऽमूकार की ध्वनि करें। यदि आपके पास **गुरु चरण पादुका** अथवा **गुरुयंत्र** हो , तो उसे ताम्र पात्र में स्थापित करें, ध्यान रखें कि इस सम्पूर्ण पूजन में काफी मात्रा में घिसे हुए श्वेत चंदन व अक्षत तथा श्वेत पुष्प का ही विशेष महत्व है, अन्य कोई पूजन सामग्री आवश्यक नहीं है। गुरुयंत्र के सामने पांच चावल की ढेरियां बनाए तथा प्रत्येक पर एक गोल सुपारी रखें। गुरुयंत्र एवं इन पांचों ढेरियों का पूजन प्रारम्भ करें , प्रत्येक वस्तु अर्पित करते समय **"गुं गुरुभ्यो नमः"** मंत्र का उच्चारण करें, इन पांचों ढेरियों के आगे सात ढेरियां और बनाकर उनके ऊपर सात गोल सुपारियां तथा **सप्त ऋषि यंत्र** जो ताम्रपत्र पर अंकित हो, स्थापित करें। इन का पूजन भी उपरोक्त प्रकार से करें। इसके उपरान्त **स्फटिक माला** से **ॐ गं गणपतये नमः** मंत्र का एक माला मंत्र जप करें, तथा भगवान गणपति से अपने पूरे वर्षभर विघ्नहर्ता बने रहने के लिए विनीत भाव से प्रार्थना करें, तथा पांच माला गुरु मंत्र जप अवश्य करें, क्योंकि गुरुदेव ही वह परम पुरुष हैं जो समस्त ऋषियों द्वारा अचिन्त्य रूप से वन्दनीय हैं।

इसके उपरान्त एक पात्र में पहले से तैयार किये गये अष्टांग अर्घ्य, जिसमें दूब, अक्षत, पुष्प, कुश, सरसों, दही, जौ व दूध हो, उसे अपने पूज्य गुरुदेव एवं समस्त ऋषियों व देवर्षियों को अर्पित करने की भावना करते हुए एक पात्र में तर्पण करें तथा निम्न मंत्र उच्चरित करें--

> **विचित्र हो गयी है नव-वर्ष मनाने की परम्परा. . . अर्ध रात्रि की कालिमा में अपने ही जुगुप्सा भरे ढंग से मनाकर. . .**
>
> **. . . भारतीय पद्धति तो सूर्य की नव किरणों के स्पर्श से, प्रकाश से स्वागत करती है इस प्रकार . . .**

ऋषयः सन्तु मे नित्यं व्रतसंपर्तिकारिणः
पूजां गृह्णन्तु मद्दत्तामृषिभ्यो ऽस्तु नमः ।।

मूल मंत्र -

ॐ सर्वकार्य सिद्धयर्थ श्रीं नमः

इसके उपरान्त इस साधना के उपरोक्त मूल मंत्र का ११ माला अथवा २१ या ५१ माला जैसी आपकी रुचि हो, श्रद्धापूर्वक जप करें यदि १०१ माला जप करते हैं तो अत्यधिक अनुकूल है। इस सम्पूर्ण जप काल में घी का दीपक व सुगन्धित अगरबत्ती को अवश्य ही प्रज्ज्वलित रखें। मंत्र जप के उपरान्त निम्न स्तोत्र का श्रद्धा पूर्वक पाठ करें-

ब्रह्माचकाश्यपो विप्रः सनकश्च सनन्दनः,
सनत् सनातनी विप्री नारदः कपिलस्तथा।
मरिचि अत्रिः पुलह पुलस्त्यो गौतमः क्रतु,
भृगुर्दक्षः प्रचेताश्च वाशिष्ठो वशिष्ठो वाल्मिकीस्तथा।
द्वैपायनी भरद्वाजः शुक्रो जेमिनीरेवच,
विद्वरयः शुन शेफो जातु कर्णश्च रौरवः ।।
और्तः संवर्तकः शुक्र सुराचार्यो बृहस्पतिः
चन्द्र सूर्यो बुधः श्रीमानू यज्ञ सूत्रस्य ग्रन्थिषु।
तिष्ठन्तु मम वामांशे वाम स्कन्धे त्वहर्निशम्‌
ब्रह्माथीः देवताः सर्व यज्ञ सूत्रस्य देवता ।।

इस प्रकार यह एक विशेष सात्विक और मंगलदायक साधना सम्पन्न होती है। जिसका प्रभाव साधक को पूरे वर्ष भर मिलता रहता है। आपने जीवन में अनेक देवी - देवताओं से संबंधित साधना की होगी किन्तु ऋषियों की अभ्यर्थना से संबंधित यह साधना तो अभी तक केवल परम्परा से शिष्यों को मिलती रही है, और उन्हीं शिष्यों को जो पहले एक निश्चित अवधि तक, अपने गुरु की सेवा कर, उनको सन्तुष्ट कर देते थे, क्योंकि जहां सप्तऋषियों का तेज है, वहां तो जीवन की प्रसन्नता स्वयमेव उपस्थित होती ही है। उनकी सूक्ष्म उपस्थिति से साधक का जीवन निरन्तर इसी प्रकार आह्लादित और मंगलमय रहता है, जिस प्रकार कोई बालक अपने माता - पिता की उपस्थिति में निर्भीक और निश्चिन्त रहता है।

साधना के उपरान्त सप्तर्षि यंत्र को गुरु यंत्र के समीप ही स्थापित रखें, और समस्त गुटिकाओं को एक रेशमी थैली में बांधकर पवित्रता पूर्वक रखें। आगे जब **ऋषि पंचमी** का अवसर हो तब इस साधना को पुनः सम्पन्न किया जा सकता है। इस साधना का एक फल यह भी है कि इसको सम्पन्न करने से साधक के समस्त पितृ वर्ग स्वतः ही सन्तुष्ट और तृप्त हो जाते हैं, तथा पितृ दोष आदि से स्थायी मुक्ति मिल जाती है।

(पृष्ठ ६६ का शेष भाग)

बिन्दी एवं चन्दन से पूजन करें तथा अक्षत भेंट करें। इसके पश्चात् निम्न मंत्र द्वारा अष्ट लक्ष्मी महायंत्र पर पुष्पांजलि अर्पित करें यदि आप को आठ कमल मिलते हैं तो श्रेष्ठ कहा गया है, अन्यथा कोई भी आठ सुगन्धित पुष्प भेंट करें -

मंत्र -

पुष्पांजलि गृहाणेयं पुरुषोत्तमवल्लभे ।
भक्त्या समर्पित देवि सुप्रीता भव सर्वदा ।
श्री अष्टलक्ष्म्यै नमः पुष्पांजलिं समर्पयामि ।।

इसके पश्चात् निम्न मंत्र से प्रणाम ज्ञापन करें

नमोस्तु नालीकनिभाननायै नमोस्तु नारायणवल्लभायै ।
नमोस्तु रत्नाकर संभवायै नमोस्तु लक्ष्म्यै जगताजनन्यै ।।
सरसिज विलये सरोहस्ते । धवलतरांशुक्र गन्धमाल्यशोभे ।।
भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवन भूतिकरि प्रसीदमह्यम ।।
पद्मासने पद्मकरे सर्वलोकेक पूजिते ।नारायणप्रिये देवी सुप्रीता भव सर्वदा ।।
श्री अष्टलक्ष्म्यै नमस्करोमि ।

उपरोक्त प्रकार से संक्षिप्त अष्ट लक्ष्मी पूजन सम्पन्न करने के बाद कमलगट्टे की माला से निम्न गोपनीय व दुर्लभ मंत्र की २१ माला मंत्र जप करें

मंत्र-

ॐ ह्रीं अष्टलक्ष्म्यै नमः

उपरोक्त मंत्र अपने - आप में अष्ट लक्ष्मियों के स्वरूप को बीज रूप में समाहित किए है, तथा इस साधना को इस दिवस के दिन पूर्ण करने के पश्चात् भविष्य में भी यदि संभव हो तो नित्य प्रति करते रहने से पर्याप्त लाभ मिलता है। **अष्ट लक्ष्मी यंत्र** को अपने व्यापार स्थल अथवा गल्ले के साथ रखें तथा **आठों लक्ष्मी प्रकाम्य** थोड़े से अक्षत (बिना टूटे चावल के दाने) के साथ पीले वस्त्र में बांध किसी पवित्र स्थान पर भेंट चढ़ा दें।

लक्ष्मी नहीं वरन अष्ट लक्ष्मी. . .
जिससे प्राप्त हो सकें जीवन के सभी सुख. . .
मकर संक्रांति पर्व की तेजस्वी साधना,
सूर्य के बल को अपने में समाहित कर प्रखर बनती हुई. . .

वास्तव में सूर्य और सूर्य साधना से संबंधित रहस्यों का एक बहुत छोटा सा ही अंश पाठकों के समक्ष आ सका है। जिस पौराणिक आख्यान की प्रारम्भ में चर्चा की गई है, उसमें यह भी वर्णित है कि श्री विश्वकर्मा द्वारा सूर्य का तेज सीमित कर दिए जाने के उपरान्त उनकी १००० किरणें शेष रह गईं। पुराणों में वर्णित तथ्य कथा रूप में साधना के ही सूत्र छुपाए होते हैं। अत्यन्त प्राचीन ग्रन्थ तथा वेदों को स्पष्ट करने वाले आख्यान ही पुराण है। अतः इनमें साधना के सूत्र तो निहित हैं ही उपरोक्त तथ्य इसी बात को कथारूप से कहता है, जिसका तात्पर्य है कि सूर्य विज्ञान को अथवा सूर्य साधना से संबंधित १००० पद्धतियां प्राख्यात हैं। यह उसी विशाल भंडार से लिया गया एक अनुपम प्रयोग है, जिससे साधक का जीवन प्रत्येक दृष्टि से परिपूर्ण व तेजयुक्त हो सके।

(पृष्ठ ५४ का शेष भाग)

तुलसी व अजवाइन की पत्तियां -

खांसी हो जाने पर चाय बनाते समय, चाय की पत्ती के साथ तुलसी व अजवाइन की पत्तियां, उबाल कर पीने से, खांसी में आराम मिलता है।

अमरूद के पत्ते -

अमरूद के पत्तों में बिलकुल थोड़ा सा पानी डालकर भाप में पकाइये। जब इनकी लुगदी सी बन जाए तो फोड़ा निकले स्थान पर बांध दीजिए। इसके बांधने से या तो फोड़ा शीघ्र पककर फूट जाएगा या बैठ जाएगा।

नीबू की पत्तियां -

कई बार अंगुली या अंगूठे के नाखून की जड़ में फुंसियां निकल जाती हैं। उनके बढ़ जाने पर बहुत अधिक दर्द होता है। इनको बिना दर्द पकाने का सबसे आसन तरीका यह है कि नीबू की पत्तियों को पीसकर फुंसी पर लगा दें।

यह तो विशाल भण्डार में से लिया गया एक लघु अंग है, जिसकी प्रत्येक औषधि केवल एकांगी रूप से ही नहीं, वरन परस्पर दूसरी अन्य औषधियों से समन्वय ही रखने वाली होती है। शायद मानव जगत में इतना पारस्परिक संबंध और संतुलन नहीं होगा जितना वनस्पति जगत में होता है, और जब हम वनस्पति जगत की बात करते हैं, तो केवल औषधियां ही नहीं, वन्य जीव भी उसमें सम्मलित होते हैं,

अन्या अन्वामवत्वन्यस्या। अपावत ताः सर्वा सविदाना इ द्र में प्रावता वचः।

"हे औषधियों! तुम परस्पर एक दूसरी औषधि के गुणों की ही रक्षा करने वाली हो, रक्षित औषधि, अरक्षित औषधि की रक्षा करने के लिए उससे संगति करे। सब प्रकार की यह औषधियां समान मति वाली होकर मेरे निवेदन को सत्य करें।"

अपने गृहस्थ जीवन को संवारिए एक लघु प्रयोग से

गृहस्थ जीवन की सफलता जहां एक ओर लक्ष्मी की उपस्थिति से प्राप्त होती है, वहीं भगवान श्री विष्णु की आराधना भी उतनी ही आवश्यक है, क्योंकि लक्ष्मी का आधार होने के साथ - साथ पालन कर्ता श्री विष्णु ही तो पालन करते हैं अपने भक्त का. . .

जिस प्रकार से भक्त पालन - कर्ता है, अपने वृद्ध माता - पिता ,पत्नी एवं पुत्रों का . . .

. . . और सर्वाधिक प्रिय दिवस है भगवान विष्णु को प्रत्येक माह की दोनों एकादशी. . .

और इनमें भी सर्वश्रेष्ठ, अपने नाम के ही अनुरूप-- 'सफला एकादशी'।

अल्प प्रयास से बहुत कुछ प्राप्त कर लेने का अभिनव अवसर . . .

इस जगत के पालन कर्ता भगवान श्री विष्णु की महिमा तो सर्वाधिक विख्यात है। ईश्वर जिन रूपों में इस धरा पर अवतरित हुए हैं, वे सभी अवतार भगवान श्री विष्णु से ही संबंधित रहे हैं। चाहे वह भगवान श्रीराम का अवतार हो या श्री कृष्ण का। अपने परब्रह्म स्वरूप को त्याग, वे ही एकमात्र ऐसे देव हैं, जो अपनी अभिन्न श्री लक्ष्मी के साथ मानव के बीच, उसी की भांति जन्म लेते रहे हैं, और जीवन की सभी विसंगतियों और विरोधाभासों में जूझते हुए प्रत्येक युग में समाज के लिए कोई सन्देश छोड़ जाते हैं। यही कारण है समस्त अवतारों का मानव हृदय में गहरे तक पैठ जाने का।

ऐसा हो ही नहीं सकता कि व्यक्ति भगवान श्री विष्णु की आराधना करे और उसके जीवन में भौतिक दृष्टि से कोई अभाव रह जाए। **निःसंकोच रूप से कहा जा सकता है कि जीवन में सांसारिक दृष्टि से, कामनाओं की पूर्ति करने के लिए भगवान श्री विष्णु की साधना से बढ़कर कोई अन्य उपाय है ही नहीं । धन - धान्य, पुत्र , पौत्र, भू, गृह सभी प्रकार के सुख भगवान श्री विष्णु की आराधना से प्राप्त होते ही हैं।**

समुद्र मंथन की कथा से कोई भी अज्ञात हीं, लेकिन इस तथ्य से बहुत कम लोग परिचित हैं कि भगवान श्री विष्णु की अर्धांगिनी लक्ष्मी का प्रादुर्भाव इसी समुद्र मंथन में एकादशी के दिन ही हुआ था। इसी कारण वश प्रत्येक माह की दोनों एकादशी समान रूप से भगवान श्री विष्णु को अत्यन्त प्रिय रही हैं। प्रत्येक माह की एकादशी का उनके महत्व के अनुसार अलग - अलग नामकरण किया गया है। जिसके पीछे रहस्य यह है कि जिस एकादशी को भगवान श्री विष्णु अपने जिस रूप में सर्वाधिक फलप्रद होते हैं उनके उसी रूप का संबंध उस एकादशी से कर दिया गया है। **सफला एकादशी** एक ऐसी ही एकादशी है, जो अपने नाम के ही अनुरूप जीवन की प्रत्येक कामना को सफल करने में सिद्ध होती है।

पद्मपुराण में कथा आती है कि जब युधिष्ठिर ने भगवान श्री कृष्ण से पूछा कि समस्त एकादशी में कौन सी एकादशी ऐसी है जो सर्वप्रकारेण फलप्रद हो तो उन्होंने स्पष्ट कहा -"राजेन्द्र! बड़े - बड़े दक्षिणा वाली यज्ञों से भी मुझे उतना संतोष नहीं होता, जितना एकादशी व्रत के

अनुष्ठान से होता है। अतः सभी प्रयत्न करके सफला एकादशी व्रत एवं पूजन साधक को कम से कम अपने जीवन में एक बार अवश्य ही सम्पन्न करना चाहिए। जिस प्रकार नागों में शेष नाग, पक्षियों में गरुड़, देवताओं में श्री विष्णु तथा मनुष्यों में ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं, उसी प्रकार सम्पूर्ण व्रतों में सफला एकादशी सर्वश्रेष्ठ है। इस का पूजन विशेष रूप से रात्रि जागरण कर सम्पन्न करने पर जिस फल की प्राप्ति होती है, वह तो हजारों वर्षों की तपस्या से भी प्राप्त नहीं होता।''

पद्म पुराण में वर्णित इस कथन में सन्देह का कोई स्थान ही नहीं, आगे भगवान श्री कृष्ण ने स्वयं इसको राजसूय - यज्ञ के समान फलप्रद बताया है। **जहां तक गृहस्थ साधक के जीवन का प्रयत्न है, उसे तो प्रयत्न कर अवश्य ही इस एकादशी की साधना कम से कम अपने जीवन मे एक बार अवश्य ही करनी चाहिए, जिससे उसके जीवन की समस्त कामनाएं तो पूर्ण हों ही,** साथ ही भगवान श्री विष्णु के तेज का अक्षय बल प्राप्त हो, जिससे उसके कोष में कभी भी क्षय न हो। सफला एकादशी जीवन में किसी भी प्रकार का प्रभाव देने में समर्थ - फलदायक अवसर है।

भगवान श्री विष्णु के दो स्वरूप बताये गये हैं। प्रथम 'स्थापित' एवं द्वितीय 'स्वयं - व्यक्त'। जहां-जहां श्री हरि विष्णु स्वयं प्रकट हुए हैं, वह स्थान 'स्वयं - व्यक्त' की संज्ञा से विभूषित किये गए। काशी, प्रयाग, द्वारिका, पुण्डरीक तीर्थ ,बद्री आश्रम नारायणाचल, कांची, मथुरा एवं इसी प्रकार के कुछ अन्य महत्वपूर्ण स्थानों पर प्रभु का जो रूप प्रकट हुआ, वह 'स्वयं - व्यक्त' स्वरूप है। इसके अभाव में साधक को जीवन में स्थापित विग्रह की आवश्यकता होती है। सुवर्ण, रजत अथवा ताम्र जैसी श्रेष्ठ धातुओं के माध्यम से मूर्ति अथवा यंत्र के रूप में ईश्वर का जो रूप व्यक्त किया जाता है, वह 'स्थापित' स्वरूप होता है। और भगवान श्री विष्णु का यर्थाथ प्रतीक शालीग्राम माना गया है। गन्डकी नदी में स्वतः

दो रूपों में व्याप्त हैं श्री विष्णु इस जगत में . . . 'स्वयं प्रकट' एवं 'स्थापित'. . .

शालिग्राम 'स्थापित' की श्रेणी में आने पर भी 'स्वयं प्रकट' विग्रह के समान ही तो पूज्य. . .

ही उत्पन्न होने वाले ये विग्रह इतने अधिक महत्वपूर्ण माने गए हैं कि उन्हें साक्षात् मोक्ष प्रदान करने में समर्थ कहा गया है। शालिग्राम शिला का तो दर्शन व स्पर्श ही पुण्यदायक कहा गया है। **ब्राह्मण, सन्यासी तथा चिकनी शालिग्राम शिला - यह तीन भू मंडल पर ईश्वर के ही स्वरूप हैं, जो अधर्म का नाश करते हैं। शालिग्राम शिलायें एवं गोमती चक्र, जहां इन दोनों को संगम हो, वहां साक्षात लक्ष्मी - नारायण उपस्थित होते ही हैं।** गन्डकी नदी से प्राप्त शालिग्राम शिला तथा द्वारिका से प्राप्त गोमती चक्र के संयुक्त पूजन से ही संभव हो पाती है, जीवन में लक्ष्मी-नारायण की प्राप्ति। किंतु केवल स्थापन ही पर्याप्त नहीं होता जब तक कि इनको विधि पूर्वक स्थापित करने के बाद इनसे संबंधित साधना न सम्पन्न की ज़ाए।

किसी भी बुधवार की रात्रि में ऐसे श्रेष्ठ शालिग्राम स्थापित करना, शास्त्रों में अनुकूल बताया गया है । इसके चारों ओर **पांच गोमती चक्र** भी स्थापित करना परम आवश्यक होता है। जो लक्ष्मी के पांच स्वरूपों पद्मा, पद्मालया, पद्महस्ता पद्माक्षी एवं पद्म - सुन्दरी के प्रतीक है। इनका स्थापन करने के बाद ही मूल साधना प्रारम्भ की जाती है। साधक को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि एक ही पूजन - कक्ष में दो से अधिक शालिग्राम स्थापित न हों। शालिग्राम शिला का चंदन एवं तुलसी पत्र से पूजन करें तथा समस्त गोमती चक्रों का पूजन, केसर, द्वारा करें। यदि संभव हो तो गोमती चक्र पर कमल पुष्प की पंखुड़ियां भी चढ़ाए तथा **कमलगट्टे** की अथवा **स्फटिक माला** से लक्ष्मी- नारायण के संयुक्त मंत्र का जप करें।

मंत्र-

ॐ श्रीं नारायणाय नमः

साधक इस मंत्र का कम से कम ११ माला एवं अधिक से अधिक २१ माला मंत्र जप करे। पूजन के उपरान्त शालिग्राम शिला पर थोड़ा जल चढ़ा कर उसे ग्रहण कर लें। यह प्रयोग नित्य प्रति किया जाने वाला प्रयोग है। यदि व्यस्तता के कारण साधक ऐसा न कर सके, तो प्रति सप्ताह कम से कम एक बार अर्थात् प्रति बुधवार को तो इस प्रयोग को अवश्य ही दोहराएं।

शास्त्रों में विधान है कि तुलसी पत्र द्वारा शालिग्राम का पूजन करना ही सर्वश्रेष्ठ है तथा पुराणों में यह भी वर्णित है कि स्त्रियों के लिए शालिग्राम का स्पर्श व पूजन निषिद्ध है।

लौह खण्डों को पारस का स्पर्श

महाभारत में घटोत्कच के पुत्र बभ्रूवाहन की कथा आती है जिसका सिर भगवान श्री कृष्ण ने अपने सुदर्शन चक्र से काट एक पहाड़ी पर स्थापित कर दिया था। युद्ध के पश्चात जब अर्जुन को अहंकार हो गया कि यह युद्ध तो मेरी वीरता और प्रयासों से जीता गया है तब भगवान श्री कृष्ण अर्जुन को बहाने से उस पर्वत शिखर के समीप ले गए। अर्जुन जो सबसे अपनी वीरता के प्रश्न पूछ रहे थे, उन्होंने बभ्रूवाहन से भी अपने गाण्डीव और अपने युद्ध कौशल की बात पूछी। बभ्रूवाहन ने हंसकर उत्तर दिया -" **अर्जुन, मैंने तुम्हें और तेरे गाण्डीव को तो कहीं देखा ही नहीं, मैं तो सर्वत्र कृष्ण को ही लड़ते देख रहा था**" और इन दो वाक्यों से अर्जुन का घमण्ड चूर - चूर हो गया।

महाभारत केवल अस्त्रों और युद्ध मैदान की ही कथा नहीं है। जहां भी कुछ सद् गठित करने का, शुभ घटित करने का प्रयास होगा वहां महाभारत की उत्पत्ति अवश्यम्भावी है, क्योंकि महाभारत प्रत्येक युग की घटना है। भिलाई का नवरात्रि शिविर भी एक ऐसी ही घटना थी। यह एक सामान्य शिविर नहीं था। परम्परा को तोड़ कर प्रथम बार गुरुधाम के बाहर इतना बड़ा शिविर आयोजित करना एक प्रकार से महाभारत जैसा ही विशाल कार्य था और **इस परिवर्तनकारी घटना में जो भी बभ्रूवाहन की तरह कटा सिर लेकर, अहंकार रहित होकर, एक ओर खड़ा हो कर देखता रहा उसे सर्वत्र पूज्यपाद गुरुदेव की ही शक्ति क्रियाशील दिखी।**

साधकों के मध्य फुसफुसाहट अवश्य थी कि पूज्यपाद गुरुदेव ने अनेक विख्यात तीर्थ स्थलियों को छोड़कर एक ऐसे स्थान का चुनाव क्यों किया जो औद्योगिक नगरी और इस्पात नगरी के रूप में विख्यात है, लेकिन मेरे मन में कोई भी शंका न थी। मैं जानता था कि यदि यह तीर्थ स्थली नहीं है तो यह आने वाले समय में तीर्थस्थली बनने जा रही है और निश्चित रूप से भिलाई का नाम अब से इस्पात नगरी के रूप में नहीं वरन इस रूप में विख्यात हो गया है जहां एक अद्वितीय युग पुरुष, चेतना के पुंज **परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी** के केवल चरण ही नहीं पड़े, वरन उन्होंने अपने जीवन का एक भाग, एक नवरात्रि का पूरा काल इस स्थान को दिया और सच तो यह है कि भिलाई केवल अपने स्वरूप में लौह नगरी है; आन्तरिकता में तो यह किसी तीर्थ स्थल से ज्यादा पवित्र और मधुर स्थान है।

सामने गुरुद्वारे से आती हुई गुरु ग्रंथ साहिब की पवित्र ध्वनियां , थोड़ी दूर पर बजती कालीबाड़ी मंदिर की शंख ध्वनियां और ठीक बगल में जैन मंदिर की पवित्रता भरी स्थली-- यही तो है वह धर्म निरपेक्षता, जो बिना किसी नारे और प्रचार के साथ भिलाई के सेक्टर- ६ में विद्यमान है। श्री गुरु सिंह सभा द्वारा आयोजन के लिए दिया गया विशाल मैदान, जैन धर्म के मंदिर के प्रांगण में तथा अग्रसेन भवन में उपलब्ध कराई गई साधकों के आवास की व्यवस्था तथा बाद में साधकों की भीड़ अनुमान से अधिक हो जाने के कारण सनातन धर्म सभा द्वारा उपलब्ध कराया गया 'मंगल भवन', यह सब स्पष्ट कर रहा था भिलाई के निवासियों की उदार और खुली मानसिकता को, और सभी आश्वस्त थे कि वे जिस संस्था के आयोजन के लिए अपना आवास या स्थान उपलब्ध करा रहे हैं वह कोई वाद या मत में जकड़ी हुई संस्था नहीं है वरन वह एक अद्वितीय युग पुरुष के आशीर्वाद के तले गतिशील ऐसी संस्था है जिसका मूल स्वर केवल और केवल मानवता का है और मानवता ही तो प्रत्येक धर्म का मूल है जिसकी परिधि में संसार का प्रत्येक धर्म आ जाता है।

हरी- भरी धरती के इस नगर को प्रकृति ने उदारता से संवारा है और ढाक व पलाश के घने जंगलों के बीच में अब बिखेर दिए हैं पूज्यपाद गुरुदेव ने दीक्षा के वे बीज जो आने वाले समय में इसी घनी हरियाली में विभिन्न रंगों के साथ अनूठी सुगन्ध के साथ फूटेंगे, अब इस वन की हरीतिमा एकांगी नहीं रह जाएगी, यह तो सौन्दर्य को नवीनता से परिभाषित करने वाली बस कुछ ही वर्षों में होने जा रही है , जब पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा दी गई दीक्षाएं साधकों और शिष्यों के मध्य प्रस्फुटित होकर अपने गुण धर्म, रंग व गंध को स्वयं कहने लगेंगी।

भिलाई में ही साधना का यह क्रम रखने का कारण स्पष्ट किया पूज्यपाद गुरुदेव ने अपने एक प्रवचन के मध्य, कि

यहां के एक - एक कंकड़ में छिपा हुआ है एक ऐसा लौह तत्व जो कि देश के किसी भाग में सम्भव ही नहीं, और इसी भूमि की वज्रता और दृढ़ता उतार देनी चाही पूज्यपाद गुरुदेव ने अपने सभी शिष्यों व साधकों के अन्दर। केवल लौह की वज्रता ही नहीं, बल्कि यहां तो साक्षात् रूप में लौह खण्डों को अप्रतिम दीक्षाओं का स्पर्श देकर खरे कुन्दन में बदलने की घटना सम्पन्न की गई। **सही अर्थों में यह केवल एक शिविर ही नहीं, केवल नवरात्रि साधना का अवसर ही नहीं वरन धर्म चक्र प्रवर्तन की घटना थी। प्रत्येक दिन साधना स्थली पर एवं अपने आवास 'भिलाई होटल ' में पूज्यपाद गुरुदेव ने २०० से २५० के मध्य दीक्षाएं दी। केवल सामान्य दीक्षाएं ही नहीं, वरन शक्तिपात युक्त कुण्डलिनी जागरण दीक्षाएं जैसी जटिल और तेजस्वी दीक्षाएं!** इस सम्पूर्ण छत्तीसगढ़ क्षेत्र के साधकों का उत्साह देखते ही बनता था, और जिस प्रकार से बिलासपुर, रायपुर एवं भिलाई के क्षेत्रों में साधकों के मध्य चेतना की लहर दौड़ी उसका श्रेय बिलासपुर के **श्री के. बी. द्विवेदी,** रायपुर के **श्री के. आर. कुर्रे** एवं दुर्ग शाखा के अध्यक्ष **श्री तुलाराम साहू** को दिया जाना चाहिए। ये तीनों ही व्यक्तित्व अपनी सज्जनता और सौम्यता से जिस प्रकार से अपने - अपने क्षेत्रों में निरन्तर गतिशील हैं वे आने वाले दिनों में मध्य प्रदेश के स्तम्भ के रूप में स्मरणीय रहेंगे और इन्हीं स्तम्भों का चौथा स्तम्भ है दुर्ग के ही **श्री एस. के. हरदेल**। श्री हरदेल जहां संस्था के कार्यों में निरन्तर व्यस्त और चिंतातुर रहे, वहीं **बहन शोभा हरदेल** ने भिलाई होटल में निरन्तर दस दिनों तक पूज्यपाद गुरुदेव, पूज्यनीया माता जी एवं पूज्यपाद गुरुदेव श्री नन्द किशोर श्रीमाली जी की जिस तरह से सेवा की, वह अपने आप में शिष्यता की एक परिभाषा थी। भिलाई के ही **श्री शंकर लाल यादव** एवं **पंकज यादव** ने भी अपनी क्षमता भर पूज्यपाद गुरुदेव की सेवा - सत्कार में कोई कसर नहीं छोड़ी।

यों तो पूज्यपाद गुरुदेव के साहचर्य में बीता एक - एक क्षण और विशेष रूप से साधना के क्षण साधक के जीवन की अमिट घटना होती है। नवरात्रि के अवसर पर पूज्यपाद गुरुदेव के प्रखर और तेजस्वी, शक्तिमय स्वरूप का दर्शन करना ही अपने आप में पुण्य होता है, लेकिन भिलाई का शिविर अपनी घटनाओं और विशेषताओं के कारण साधना जगत के इतिहास में सदैव ही एक विशेष स्थान बनाए रखेगा। पूज्यपाद गुरुदेव ने स्पष्ट कहा भिलाई में स्वच्छता है, अपनत्व है और घुटन नहीं है। ऊपर फैला हुआ स्वच्छ नीला आकाश व गहरे हरे वृक्षों के झुरमुटों के बीच में बैठकर ऐसा लग ही नहीं रहा था कि हम बीसवीं सदी में है या किसी औद्योगिक नगर में है। साथ ही गुंजरित होता पूज्यपाद गुरुदेव का स्वर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में जय घोष करता हुआ साधकों को बार - बार एक ऐसे युग में ले जा रहा था जो कभी वेदों की रचना का काल रहा हो, जो हमारे ऋषियों और मुनियों के जीवन का साक्षी भूत रहा हो, और ऐसा होता भी क्यों न, पूज्यपाद गुरुदेव की उपस्थिति में कौन - कौन सी दिव्य आत्मायें भी इस धरा पर उतर आती है, इनको तो हम चर्म चक्षुओं और सामान्य बुद्धि से समझ ही नहीं सकते। **पूज्यपाद गुरुदेव ने जीवन की अनेक धारणाओं को साधकों के सामने दो टूक स्पष्ट किया, उन्होंने कहा कि मेरा प्रयास इसी बात का है कि आप सभी में आन्तरिक आह्लाद हो, आपके जीवन में आध्यात्मिक और भौतिक चिंतन दोनों ही हों और मैं इसी समन्वय का जीता - जागता स्वरूप लेकर इसी रूप में आपके समक्ष उपस्थित हूं।** मेरी इच्छा है कि मेरा प्रत्येक शिष्य केवल लौह के समान दृढ़ ही न हो वरन उसमें एक चुम्बकत्व भी आए। वह जीवन में प्रत्येक को अपनी ओर खींच कर आकर्षित कर ले, चाहे वह जीवन की भौतिक स्थितियां हों चाहे वह जीवन की आध्यात्मिक स्थिति हो। जिस प्रकार से शक्तिशाली चुम्बक का स्पर्श पाकर लौह खण्ड भी चुम्बक बन जाता है वही क्रिया दुर्लभ दीक्षाओं के माध्यम से मैं अपने शिष्यों में सम्पन्न करूंगा, और जो नवरात्रि के अवसर पर इन दीक्षाओं से दीक्षित हुए वे सचमुच ही धन्य हैं। पूज्यपाद गुरुदेव ने अनेक ज्ञात व सर्वथा अज्ञात शास्त्रों का सन्दर्भ देकर यह बात पूर्णता से स्पष्ट की कि जीवन में लक्ष्मी का अर्थात् भौतिक सुख - समृद्धि व ऐश्वर्य का क्या अर्थ है। पूज्यपाद गुरुदेव ने **शंकर भाष्य** के उदाहरण से स्पष्ट किया कि आद्य शंकराचार्य जैसे व्यक्तित्व ने ग्रंथ के प्रारम्भ में ईश्वर व गुरु के वन्दन के पश्चात लक्ष्मी का ही वन्दन किया है और **उनके बाद लुप्त हो गई यह परम्परा ही पुनर्जाग्रत करने का क्रम है ये साधना शिविर!** अब जब कि जीवन की विसंगतियां निरन्तर बढ़ गई हैं इच्छाएं व भौतिक आवश्यकताएं सामाजिक स्थितियों के कारण असीमित हो गई हैं तब साधना का मार्ग भी कदाचित् कुछ कठिन हो गया है, और इसी की पूर्ति पूज्यपाद गुरुदेव ने इस रूप में की, कि अपने साधकों को उनके मनोनुकूल दीक्षाएं प्रदान कीं। पूज्यपाद गुरुदेव द्वारा सम्पन्न कराए गए प्रयोग अपने आप पृथकतः सम्पूर्ण होते हुए भी आपस में इस प्रकार गुंथे हुए थे जिनसे भली भांति स्पष्ट होता था, कि हमारे मनीषियों ने जीवन को किस प्रकार सम्पूर्ण रूप में देखा, चाहे वह दोष निवृत्ति का प्रयोग रहा हो अथवा लक्ष्मी प्राप्ति का या फिर दिनांक १८.१०.९३ को पूज्यपाद गुरुदेव द्वारा सम्पन्न कराया गया रत्योपनिषद में वर्णित वह दुर्लभ सौन्दर्य प्रयोग जो किसी भी स्त्री या पुरुष के जीवन का मुख्य आधार होता है। केवल साधनाओं और दीक्षाओं तक ही नहीं वरन संगीत,

नृत्य- विलास व लास्य से भी सदैव की भांति यह शिविर भरा पूरा रहा ही। भिलाई की अल्प आयु की गायिका **अंजली शुक्ला** ने अपने सुललित कंठ से सभी का दिल मोह लिया और शिविर के समापन के अवसर पर पूज्यपाद गुरुदेव के कर कमलों से विशेष उपहार व गन्धर्व दीक्षा प्राप्त की। भिलाई के ही **श्री प्रभंजन चतुर्वेदी** जो **'लता मंगेश्कर पुरस्कार'** प्राप्त विख्यात गायक एवं पूज्यपाद गुरुदेव के शिष्य हैं उन्होंने अपने विविध शैलियों के भजनों से उपस्थित जन समुदाय को भाव जगत में पहुंचाने की अनूठी स्थिति प्रदान की, साथ ही **श्री भालचन्द्र शेगेकर** ने अपने सुमधुर तबला वादन से सभी साधकों को मन्त्र मुग्ध कर दिया। **निधि, निष्ठा, नेहा, प्रीति, अंजलि, मधु, रुपाली, बॉबी, अर्चना, गीता** एवं **सुलोचना** ने सामूहिक रूप से आरती एवं गीतों पर नृत्य की भाव भंगिमाएं प्रस्तुत कीं। **प्रीति मेहता** द्वारा किए गए लालित्यपूर्ण नृत्य ने सभी का मन मोह लिया। शिविर के प्रारम्भिक दिनों में हुई तीव्र बरसात के बाद भीग गई सारी जमीन पर भी साधक जिस प्रकार से निश्चिंत और निष्कम्प बैठ कर जीवन के सभी पक्षों के साक्षीभूत बनते रहे, चाहे वह साधना का हो अथवा प्रवचन का, उससे यह विश्वास हो गया कि अब उनके अन्दर पूज्यपाद गुरुदेव की चेतना व्याप्त हो रही है जिससे ये जीवन में अब कहीं भी ठिठकने अथवा उलझने से अपने आप को बचाए रखेंगे तथा उस लक्ष्य तक पहुंच सकेंगे जो पूज्यपाद गुरुदेव ने सबके लिए निर्धारित किया है- और वह लक्ष्य है इसी जीवन में सिद्धाश्रम की प्राप्ति।

पूज्यपाद गुरुदेव श्री नन्दकिशोर श्रीमाली जी, प्रत्येक क्षण छाया की भांति पूज्यपाद गुरुदेव के साथ उपस्थित रहे जो वास्तव में पूज्यपाद गुरुदेव की प्रतिकृति ही हैं, जिनकी वाणी में ओज और चेहरे पर ऋषियों के समान दर्प विद्यमान है। पूज्यपाद गुरुदेव की ही करुणा उनमें जिस प्रकार से छलछला रही है, उसका अनुभव उपस्थित जन समुदाय को बार - बार हुआ। एक विशेष अवसर पर जब पूज्यपाद गुरुदेव इन्द्र कृत लक्ष्मी प्रयोग सम्पन्न करवाने में अन्मयस्कता अनुभव कर रहे थे तब **श्री नन्दकिशोर श्रीमाली जी** समस्त साधकों की ओर से निवेदन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव के समक्ष भाव विह्वल होकर रो पड़े और उन्हीं के आग्रह का परिणाम रहा कि साधकों को एक ऐसी दुर्लभ साधना मिल सकी जो कि अन्यथा उन्हें अप्राप्य ही थी। पूज्यपाद गुरुदेव अपने समस्त शिष्यों को उनके दृढ़ हाथों में सौंपते हुए भी आश्वस्त दिखे तथा साधक भी आश्वस्त थे कि पूज्यपाद गुरुदेव उन्हें अपने ही प्रतिरूप **श्री नन्दकिशोर जी** के सुदृढ़ बाहुओं में सौंप रहे हैं।

यह शिविर, ये साधनायें, दीक्षायें यह सब तो इतिहास के पृष्ठों में वीडियो व आडियो कैसेटों के माध्यम से सुरक्षित हो गई हैं जो साधकों को एक कसक के साथ जीवन के प्रत्येक पल में याद आती रहेंगी, लेकिन इनके प्रत्यक्ष परिणाम शीघ्र ही जब सभी के समक्ष आएंगे तो वही पूज्यपाद गुरुदेव के जीवित जाग्रत ग्रन्थ होंगे। जो बातें इन पन्नों पर नहीं कही जा सकी हैं वही बातें उन जीवित ग्रन्थों के आचरण, उनके कार्यों, उनकी करुणा और उनकी चैतन्यता से स्पष्ट होंगी। पूज्यपाद गुरुदेव का विशद वर्णन कुछ पन्नों के माध्यम से किया जाना सम्भव ही नहीं, वह तो संभव होगा उनके द्वारा दीक्षित, उनके द्वारा अनुप्राणित शिष्यों और साधकों के जीवन से।

आधार व्यक्तित्व

ऐसे ही समस्त शिष्यों और साधकों के मध्य जो नाम सर्वोपरि रूप से उभर कर सामने आता है वह है श्री विन्ध्येश्वरी प्रसाद श्रीवास्तव का। जिन्होंने

श्रीवास्तव "गुरु सेवक" सही अर्थों में "चैतन्य शिष्य" है जो उज्जवल हीरक खण्ड की तरह जगमगा रहा है. . .

—गुरुदेव के भिलाई में दिये गये प्रवचन से

इस शिविर को पूर्णता देने के लिए केवल नवरात्रि के दिनों में ही नहीं वरन दो माह पूर्व से ही इस क्षेत्र में जाकर जिस प्रकार से ग्रामीण अंचलों का दौरा किया और एक-एक व्यक्ति को प्रयास पूर्वक, आग्रह पूर्वक पूज्यपाद गुरुदेव तक लाने का उपक्रम किया वह तो सैकड़ों शिष्य ही नहीं वरन हजारों शिष्यों के सामूहिक प्रयास से भी अधिक श्रेष्ठ, अधिक स्पष्ट रहा। मंच संचालन का कार्य हो अथवा विभिन्न इकाइयों के बीच तालमेल का अथवा सदूर बिहार एवं पंजाब व हिमाचल प्रदेश से आए साधकों की समस्याओं के समाधान का, श्री श्रीवास्तव प्रत्येक स्तर पर, प्रत्येक स्थान पर सजग और सफलता पूर्वक कार्यरत दिखते रहे। इन दस दिनों में न तो उन्होंने अपने भूख- प्यास की परवाह की न तो स्वास्थ्य की और न ही किसी दिन दो या तीन घंटे से अधिक नींद ली। कुछ एक दिवस तो उनके बिना निद्रा के ही व्यतीत हुए। यदि यह कहा जाए कि इस सम्पूर्ण आयोजन के एक - एक कण पर उनका ही नाम लिखा हुआ था तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी और उनके इस सफल प्रयास से यह सिद्ध हो गया है कि आने वाले दिनों में वे अकेले अपने दमखम पर केवल एक या दो शिविर नहीं वरन शिविरों की श्रृंखला आयोजित कर सकने में सफल होंगे। ऐसे श्रेष्ठ शिष्य ऐसे सफल आयोजक "गुरु सेवक" जी वास्तव में ही सिद्धाश्रम साधक परिवार के रत्न हैं जिन पर हमें गर्व है।

बहन कनक पाण्डे, वासुदेव पाण्डे, श्री गोवरधन वर्मा, राजेन्द्र गुप्ता, श्री चन्दा सिंह पहल एवं **श्री योगेन्द्र निर्मोही** भी इसी रूप में निरंतर गतिशील रहे।

आयुर्वेद विशेषांक : दीक्षा व सामग्री परिशिष्ट

पत्रिका- पाठकों की विशेष सुविधा को ध्यान में रखते हुए, पत्रिका में प्रकाशित प्रत्येक साधना में संबंधित सामग्री की व्यवस्था करने का अथक प्रयास किया जाता है, दुर्लभ एवं कठिनाई से प्राप्त होने वाली सामग्री को उचित न्यौछावर पर उपलब्ध कराने की व्यवस्था की जाती है, तथा साधना से संबंधित दीक्षा की विशेष व्यवस्था भी की जाती है।

सामग्री	पृष्ठ	न्यौछावर
ज्योति चक्र	१४	६०/-
कायाकल्प यंत्र	१६	३००/-
विशिष्ट आरोग्य यंत्र	१६	३००/-
आरोग्य माला	१६	२१०/-
कापालिक ताबीज	१८	२१०/-
काली हकीक माला	१८	१५०/-
मूंगा रत्न	१९	६०/-
तांत्रोक्त नवग्रह यंत्र	२१	२१०/-
सर्वतोभद्र यंत्र	२२	२१०/-
२१ चिरमी के दाने	२३	४२/-
एक बजरंग विग्रह	२३	६०/-
मूंगे की माला	२३	१५०/-
सूर्य गुटिका	२४	१२०/-
पन्द्रहिया अंगूठी	२६	६०/-
नाभि चक्र	२८	१२०/-
त्रिलोह ताबीज	२९	८०/-
अष्ट किन्नरी यंत्र	३३	३००/-
सौन्दर्य माला	३३	३००/-
स्फटिक माला	३३	३००/-
षोडश अप्सरा यंत्र	४१	३५०/-
पीले हकीक की माला	४१	१५०/-
यौवन गंधा मुद्रिका	४१	१२०/-
दिव्य सूर्य यंत्र	४६	१५०/-
पाटेश्वरी यंत्र	५७	१२०/-
सियार सिंगी	५७	१५०/-
रोग निवारक माला	५७	२४०/-
पारद मुद्रिका	५८	१५०/-
पारद शिवलिंग	५८	४५०/-
पारद माला	५८	११००/-
अष्ट लक्ष्मी यंत्र	६६	३००/-
आठ लक्ष्मी प्राकाम्य	६६	४५०/-
कमल गट्टे की माला	६६	१५०/-
गुरु चरण पादुका	७३	१५०/-
गुरु यंत्र	७३	१५०/-
सप्त ऋषि यंत्र	७३	१५०/-
शालिग्राम	७६	१५०/-
पांच गोमती चक्र	७६	१००/-
कायाकल्प गुटिका		२१०/-

दीक्षा

दीक्षा	पृष्ठ	न्यौछावर
सम्मोहन दीक्षा	२७	३०००/-
धन्वंतरी दीक्षा	३०	१५००/-
रोग निवारण दीक्षा	३०	२१००/-
कायाकल्प दीक्षा	३०	५१००/-
अनंग दीक्षा	३६	५१००/-
अप्सरा दीक्षा	४१	२४००/-
षोडश त्रिपुर सुन्दरी दीक्षा	३७	३५००/-
शक्तिपात दीक्षा	४३	२१००/-
क्रियायोग दीक्षा	४७	३५००/-
पापमोचनी	५२	१५००/-
मनोकामना पूर्ति दीक्षा		३१००/-
वीर वैताल सिद्धि दीक्षा		५१००/-
अप्सरा सिद्धि दीक्षा		३१००/-

चेक स्वीकार्य नहीं होंगे। ड्राफ्ट किसी भी बैंक का हो, वह **"मंत्र शक्ति केन्द्र"** के नाम से बना हो, जो जोधपुर में देय हो।

मनिऑर्डर या ड्राफ्ट भेजने का पताः-

मंत्र शक्ति केन्द्र, डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाई कोर्ट कॉलोनी,जोधपुर-३४२००१(राज.),टेलीफोन : ०२९१-३२२०९

दीक्षा के लिए पहले से ही समय एवं स्थान तय कर अनुमति लेकर ही आएं

३०६,कोहाट इन्क्लेव,नई दिल्ली, टेलीफोन : ०११-७१८२२४८

वर्ष १३ **अंक १२** **दिसम्बर ९३**

प्रधान संपादक - नन्दकिशोर श्रीमाली

सह सम्पादक मण्डल - डॉ. श्यामल कुमार बनर्जी, सुभाष शर्मा, गुरुसेवक,गणेश वट्टाणी, नागजी भाई

संयोजक - कैलाश चन्द्र श्रीमाली, **वित्तीय सलाहकार -** अरविन्द श्रीमाली

सम्पर्क

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान , डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाई कोर्ट कॉलोनी, जोधपुर - ३४२००१ (राज.) ,फोन : ०२९१ - ३२२०९

गुरुधाम, ३०६, कोहाट एन्क्लेव, नई दिल्ली - ११००३४, फोन : ०११-७१८२२४८, फेक्स : ०११-७१८६७००

प्रकाशक एवं स्वामित्व श्री कैलाश चन्द्र श्रीमाली द्वारा नव शक्ति इन्डस्ट्रीज, C. १३ , न्यू रोशनपुरा, नजफगढ़ दिल्ली से मुद्रित तथा गुरुधाम, ३०६, कोहाट एन्क्लेव, पीतमपुरा, दिल्ली से प्रकाशित।

मनोबल की मशाल - आपके हाथ में

आपने ही कहा था कि ऐसा कुछ होना चाहिए जो अनूठा हो,अद्वितीय हो
वह क्षण, वह कार्य जिसकी आपको वर्षों से प्रतीक्षा थी
एक नया चेतना युक्त क्रियाशील महान कार्य आपके द्वारा
हमने प्रारम्भ किया है आपके संकल्प पर, आपके विश्वास पर

डॉ० नारायणदत्त श्रीमाली फाउन्डेशन इन्टरनेशनल चेरिटेबल ट्रस्ट (रजि०)

जिसके अन्तर्गत निम्न योजनाओं पर कार्य निरन्तर गतिशील होगा

- एक विशाल महान केन्द्र भवन का निर्माण जो विविध सुविधाओं एवं केन्द्रों से युक्त होगा और जिसका नाम होगा **"सिद्धाश्रम"**
- उपरोक्त केन्द्र में प्राचीन भारतीय विद्याओं के विकास,पुनरुत्थान से सम्बन्धित योजनाबद्ध कार्य
- योग, मंत्र, आयुर्वेद, साधनाएं आदि गूढ़ कार्यों का विकास जिसमें प्रत्येक व्यक्ति आकर स्वयं सीख सकता है एवं अपना जीवन पूर्णता तक पहुंचा सकेगा।
- प्राकृतिक चिकित्सा अनुसंधान एवं उत्थान केन्द्र जिसमें **"नेचुरोपैथी"** , **आयुर्वेद** आदि द्वारा विभिन्न रोगों की इलाज की पूर्ण सुविधाएं
- विशिष्ट जड़ी बूटियों का सिद्धाश्रम में ही विकास और उनका प्रयोग जन - जन के लिए
- विशेष परोपकारी कार्यक्रम पूरे भारत वर्ष में जिसमे शिविर, प्रवचन, साधनाएं विद्याओं मंत्र, तंत्र, योग, मीमांसा का प्रेक्टिकल ज्ञान
- सामाजिक उत्थान हेतु विशेष परोपकारी कार्यक्रम पूरे भारत वर्ष में

इसके लिए आवश्यक है आपके सहयोग एवं पूर्ण भागीदारी की। इस विशाल कार्यक्रम में पूर्णता के लिए प्रत्येक जन का सहयोग आवश्यक ही है, तन से, मन से, धन से।

उपरोक्त ट्रस्ट से अन्तर्गत आप द्वारा भेजा गया अनुदान लाखों लोगों के चेहरों पर जीवन की मुस्कान ला सकेगा।

उपरोक्त ट्रस्ट रजिस्टर्ड है तथा आयकर अधिनियम धारा ८० जी. के अन्तर्गत छूट प्राप्त है। यह छूट आयकर आयुक्त जोधपुर द्वारा उनके पत्र क्रमांक जे. सी. २/८० जी/ एन. - ७ / जे. यू. /६३ - ६४/ १४६७ तारीख ०६-०४-६३ से प्रभावी ६५ - ६६ तक। **भविष्य में सभी अनुदान उपरोक्त ट्रस्ट के नाम से ही मनीआर्डर अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा भेजें और इसकी रसीद अवश्य प्राप्त कर लें।**

इस कार्य में विलम्ब नहीं करना है और जो भी संकल्प लें बड़ा लें, क्योंकि यह एक जन हितार्थ महान कार्यक्रम है, जिसकी भावना ही है "सर्वे भवन्तु सुखिनः"

धन राशि एवं अन्य जानकारी हेतु सम्पर्क करें

सचिव, डॉ० नारायणदत्त श्रीमाली फाउन्डेशन इन्टरनेशनल चेरीटबल ट्रस्ट, डॉ० श्रीमाली मार्ग, हाई कोर्ट कॉलोनी, जोधपुर (राज०), फोन : ०२९१-३२२०६

अथवा

सचिव, डॉ० नारायणदत्त श्रीमाली फाउन्डेशन इन्टरनेशनल चेरीटबल ट्रस्ट, गुरुधाम, ३०६ कोहाट एन्क्लेव, पीतमपुरा, नई दिल्ली-३४, फोन : ०११-७१८२२४८,फेक्सः ०११-७१८६७००

पोस्टल डी. एल. नं० १६०५२/६३

श्रीं हीं हूं ऐं क्रों क्रीं क्लीं फट् ॐ गं श्रीं हीं हूं ऐं क्रों क्रीं क्लीं फट् ॐ गं श्रीं हीं हूं ऐं क्रों क्रीं क्लीं फट् ॐ
श्रीं हीं हूं ऐं क्रों क्रीं क्लीं फट् ॐ गं श्रीं हीं हूं ऐं क्रों क्रीं क्लीं फट् ॐ गं श्रीं हीं हूं ऐं क्रों क्रीं क्लीं फट् ॐ गं
हीं हूं ऐं क्रों क्रीं क्लीं फट् ॐ गं श्रीं हीं हूं ऐं क्रों क्रीं क्लीं फट् ॐ गं श्रीं हीं हूं ऐं क्रों क्रीं क्लीं फट् ॐ गं श्रीं

नववर्ष उपहार

यौवन, बल, सौन्दर्य, ऐश्वर्य और अवसर मनोनुकूल जीवन जीने का
सचमुच आपके मन में भर ही देगा
उमंग व आनन्द की तरंगें

(०५.०१.६४) सम्पूर्ण रोग मुक्ति- कायाकल्प दीक्षा

किसी भी प्रकार के रोगों को मिटाने व बुढ़ापा निवृत्ति
की महत्वपूर्ण दीक्षा

(०६.०१.६४) अप्सरा सिद्धि दीक्षा

पुष्प वल्लभा, स्वर्णदेहा उर्वशी आदि किसी भी
अप्सरा को सिद्ध करने में पूर्ण रूप से सहायक दीक्षा

(०७.०१.६४) षोडशी त्रिपुर सुन्दरी वैभव लक्ष्मी दीक्षा

इन्द्र के समान वैभव देने वाली कुबेरवत् धन
प्रदान करने वाली लक्ष्मी से सम्बन्धित दीक्षाओं में सर्वश्रेष्ठ

(०८.०१.६४) मनोकामना (इच्छापूर्ति) पूर्ति दीक्षा

किसी भी प्रकार की कोई भी इच्छा, रोग, ऋण,
धनागम, वशीकरण आदि से सम्बन्धित इच्छापूर्ति

(०६.०१.६४) वीर वैताल सिद्धि दीक्षा

वीर वैताल -- जो अदृश्य रहकर भी
साधक के सारे कार्य करने में तत्पर रहता है

सम्पर्क

गुरुधाम, ३०६, कोहाट एन्क्लेव, पीतमपुरा,
नई दिल्ली - ११००३४, फोन - ०११-७१८२२४८

नोट
ये दीक्षाएं पूज्यपाद गुरुदेव केवल 'गुरुधाम' दिल्ली में ही उपरोक्त दिवसों पर प्रदान करेंगे।